कक्षा 11 के नये पाठ्यक्रमानुसार

विमल®

सर्वश्रेष्ठ दीपिका

काव्य कल्लोलिनी

कक्षा 11 के लिए

(डॉ. भंवरलाल जोशी)

(नई पाठ्यपुस्तक अनुसार)

नवीन संस्करण] [मूल्य : 55.00 रुपये

विषय-सूची

अध्याय 1

चन्दबरदाई

कवि परिचय—चन्दबरदाई को हिन्दी साहित्य के इतिहास में आदिकाल का कवि माना जाता है । समय की दूरी और प्रमाणों-तथ्यों की अनुपलब्धता के कारण इनके जीवनवृत्त एवं रचनाओं के सम्बन्ध में विवाद ही रहा है । विद्वानों ने अपनी समझ, दृष्टि एवं प्रमाणोपलब्धि के आधार पर इनके सम्बन्ध में स्थापनाएँ की हैं । चन्दबरदायी के ग्रन्थ ''पृथ्वीराज रासो'' के एक छन्द के आधार पर यह माना जाता रहा है कि उनका जन्म लाहौर में हुआ था ।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने हिन्दी साहित्य के इतिहास में इनका परिचय देते हुए लिखा है—

''ये हिन्दी के प्रथम महाकवि माने जाते हैं और इनका पृथ्वीराज रासो हिंदी का प्रथम महाकाव्य है । चन्द दिल्ली के अन्तिम हिन्दू सम्राट महाराज पृथ्वीराज के सामन्त और राजकवि प्रसिद्ध हैं । ·····रासो के अनुसार ये भट्ट जाति के जगात् नामक गौत्र के थे । इनके पूर्वजों की भूमि पंजाब थी, जहाँ लाहौर में इनका जन्म हुआ था । ·······ये महाराज पृथ्वीराज के राजकवि ही नहीं, उनके सखा और सामन्त भी थे तथा षड्भाषा, व्याकरण, काव्य साहित्य, छंद, शास्त्र, ज्योतिष, पुराण, नाटक आदि अनेक विधाओं में पारंगत थे ।''

चन्दबरदाई के आश्रयदाता पृथ्वीराज चौहान ही उनके काव्य के नायक हैं तथा चन्दबरदाई ने पृथ्वीराज चौहान के व्यक्तित्व में उन सभी गुणों का समावेश किया है जो गुण वाल्मीकि की 'रामायण' के नायक राम में हैं । चन्दबरदाई ओज तथा वीर रस के कवि हैं किन्तु उन्हें श्रृंगार वर्णन में भी पूरी सफलता मिली है । रासो डिंगल शैली की कृति है । इसकी भाषा में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, अरबी, फारसी आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग सफलतापूर्वक हुआ है ।

पाठ परिचय–प्रस्तुत पाठ में 'पृथ्वीराज रासो' के पद्मावती-सौन्दर्य, ऋतु-वर्णन तथा युद्ध-वर्णन के अंश संकलित हैं । कवि चन्दबरदाई ने अपने युग की काव्य-परम्परा के अनुसार ही अपने महाकाव्य में नारी सौन्दर्य का अनुपम वर्णन किया है । पद्मावती के रूप-सौन्दर्य तथा विभिन्न अंगों के सौन्दर्य को लोकप्रचलित प्रसिद्ध उपमानों से उपमित किया है ।

ऋतु वर्णन में यहाँ वर्षा ऋतु और बसन्त ऋतु की प्राकृतिक सुषमा और चराचर जगत् पर इनके पड़ने वाले प्रभाव को कवि ने अनुकूल शब्दावली और भावों का समन्वय करते हुए प्रस्तुत किया है ।

युद्ध-वर्णन में युद्ध के वातावरण तथा पृथ्वीराज चौहान की वीरता का ओजस्वी वर्णन हुआ है ।

पद्मावती–सौन्दर्य

(1)

''मनहुं कला ससि ··························· कामिनी रचिय ।''

शब्दार्थ—मनहुं = मानो । बैस = अवस्था । म्रिग = हिरण । नष-सिष = नख-शिख । छप्पति = छिप जाते हैं । गयन्द = हाथी । कामिनी = नारी (पद्मावती) ।

प्रसंग—प्रस्तुत पद्य चन्दबरदाई द्वारा संकलित पृथ्वीराज रासो महाकाव्य से अवतरित है । इसमें कवि ने पद्मावती के सौन्दर्य का नखशिख वर्णन किया है । कवि ने पद्मावती के विभिन्न अंगों के सौन्दर्य की उपमा भिन्न-भिन्न उपमानों से देते हुए पद्मावती को सर्व सुंदरी के रूप में स्थापित किया है ।

व्याख्या—कवि कहता है कि पद्मसेन रानी के गर्भ से पद्मावती का जन्म हुआ जो इतनी सुन्दर लगती थी मानो साक्षात् चन्द्रमा की कला का ही जन्म हुआ हो । वह ऐसी लगती थी मानो उसका निर्माण चन्द्रमा की सोलह कलाओं से हुआ हो । अभी उसकी बाल्यावस्था ही थी । उसके रूप को देखकर ऐसा प्रतीत होता था जैसे चन्द्रमा ने भी उसी के सौन्दर्य से अपना अमृत ग्रहण किया हो ।

उसके विभिन्न अंगों की सुन्दरता का वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि उसके मुख, नेत्र, हाथ और चरणों की सुन्दरता कमल से भी बढ़कर है । इन अंगों ने कमलों की सुन्दरता को, उसके काले केशों की श्यामलता ने भौंरों की श्यामलता को, उसकी वाणी ने बाँसुरी की मधुरता को, उसके नेत्र की सुन्दरता ने खंजन पक्षी की सुन्दरता को और विशालता ने मृगों के नयनों की सुन्दरता को लूट लिया है । कहने का तात्पर्य यह है कि उसके सौन्दर्य की तुलना में उसके उपमानों का सौन्दर्य फीका पड़ गया है । कवि ने आगे उसके अन्य अंगों का उपमानों के माध्यम से ही वर्णन करते हुए लिखा है कि उसके अन्य अंगों को हीरा, शुक, बिम्बाफल तथा मोती ने सुन्दरता प्रदान करते हुए बनाया है अर्थात् उसके दाँत हीरे की तरह तराशे हुए एवं विशेष चमक वाले हैं । उसकी नाक तोते की नाक जैसी सुन्दरता लिये हुए है । उसके अधर बिम्बाफल की तरह मोहक एवं रक्तिमा लिए हुए हैं और हाथ-पाँवों के नख मोती के समान सुन्दर, निर्मल एवं प्रभायुक्त हैं ।

इससे आगे वह पद्मावती के गति-सौन्दर्य का अंकन करता हुआ कहता है कि उसकी मंथर गति के सौन्दर्य को देखकर हाथी, सिंह व हंस भी लज्जित होकर छिप जाते हैं । उसके सम्पूर्ण सौन्दर्य को देखकर ऐसा जान पड़ता है कि मानो विधाता ने उसे साँचे में ढालकर बनाया हो अर्थात् सौन्दर्य की दृष्टि से उसके आंगिक सन्तुलन और अनुपात में किसी तरह की कोई कमी नहीं है । ऐसी वह पद्मावती नामक रूपसी पद्मिनी के समान सुन्दर है । उसके सौन्दर्य को देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो उसके रूप में विधाता ने कामदेव की पत्नी रति का ही दूसरा रूप निर्मित किया हो । कहने का अर्थ यह है कि वह सौंदर्य में रति से कम नहीं है ।

विशेष–(1) उत्प्रेक्षा, रूपक, अतिशयोक्ति एवं व्यतिरेक से सौन्दर्य की सृष्टि की गई है और अलंकरण पैदा किया गया है ।

(2) नख-शिख वर्णन की यह परम्परा पारम्परिक है ।

(3) साँचे में सौंदर्य को ढालने में उक्ति का सौन्दर्य स्पष्ट है ।

(2)

"मनहुँ काम कामिनी..भयौ हुलास ।"

शब्दार्थ—रास = राशि, भण्डार । काम कामिनी = रति । सामुद्रिक लच्छन = हस्त रेखा शास्त्र के अनुकूल लक्षण । कीर = तोता । दिष्यिय = दिखाई दिया ।

प्रसंग—प्रस्तुत पद्य खण्ड चंदबरदाई कृत 'पृथ्वीराज रासो' नामक महाकाव्य के 'पद्मावती सौन्दर्य' से अवतरित है। इस अंश में पद्मसेन, कुँवर और राजा विजयपाल की रूपसी पुत्री पद्मावती के रूप, गुण और कार्यों का वर्णन किया गया है।

व्याख्या—पद्मावती के सौंदर्य के साथ-साथ उसके ज्ञान का वर्णन करता हुआ कवि कह रहा है कि वह हस्तरेखा शास्त्र में वर्णित समस्त लक्षणों से युक्त है। पद्मावती कामदेव की पत्नी रति के समान रूप का भण्डार है। उसके सुन्दर रूप को देखकर पशु, पक्षी, देवता, मनुष्य, मुनिवर आदि सभी मोहित हो जाते हैं। कवि कहता है कि वह चौंसठ कलाओं में पारंगत है। वह चौदह विद्याओं तथा षड्दर्शन की जानकार है तथा रति के समान रूपवती एवं ऋतुराज बसंत की तरह नवयौवना है।

आगे कवि ने पद्मावती के जीवन की एक महत्त्वपूर्ण परिवर्तनकारी घटना का उल्लेख करते हुए कहा है एक दिन जब वह अपनी सखियों के साथ महल के उद्यानों में खेल रही थी तब उसे एक तोता दिखाई दिया, जिसे देखकर वह बहुत उल्लसित हो गई।

विशेष–(1) कवि ने ज्ञान की जानकारी को लोक-परम्परा के रूप में गणितीय ढंग से व्यक्त किया है।

(2) रति, बंसत परमान में सौंदर्य की अभिव्यक्ति प्रतीकात्मक है।

(3) डिंगल और पिंगल शैलियों का मेल दिखाया गया है।

(3)

"मन अति भयौ .... मह रष्षत भइय।"

शब्दार्थ—कोक = चकवा। चष = चखना। गहित = पकड़ लिया। **अप्प** = अपने। कर = हाथ। रष्षत = रखा।

प्रसंग—उक्त पद्य में पद्मावती के जीवन में परिवर्तन लाने वाली एक **महत्त्वपूर्ण** घटना का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है कि तोते को उद्यान में देखकर पद्मावती **का** मन इस तरह उल्लसित हुआ जैसे सूर्य की किरणों को देखकर कमल खिल उठते **हैं और** चकवा पक्षी चकवी से संयोग का अवसर आने से प्रसन्न हो उठता है।

व्याख्या—कवि पद्मावती के सौन्दर्य का वर्णन भ्रम अलंकार की शैली में करता हुआ कह रहा है कि पद्मवाती के लाल-लाल अधरों को देखकर तोते को उनमें बिम्बाफल का भ्रम हो गया। वह तोता इन बिम्बाफलों को चखने की इच्छा से जब इन पर झपट्टा मारकर अपनी चोंच मारने के लिए प्रयासरत हुआ तो पद्मावती ने उसे अपने हाथों से पकड़ लिया। वह प्रसन्नतापूर्वक उस तोते को अपने महल में ले गई और मणियों एवं हीरों से जड़ा हुआ एक अनुपम पिंजरा मँगवाकर उसमें तोते को रख दिया।

विशेष–(1) उत्प्रेक्षा एवं भ्रम अंलकार की शैली में पद्मावती के सौन्दर्य और तोता पकड़ने की घटना का चित्रण किया गया है।

(2) पिंगल के साथ डिंगल शैली का संयोग भाषा की दृष्टि से अद्भुत दृश्य उपस्थित करता है।

(3) उपमान पारम्परिक है किन्तु तोते को पकड़ने की कल्पना सौंदर्यमयी एवं नवीन है। इसमें ऊहात्मकता भी आ गई है।

(4)

"कुट्टिल केस...प्रथिराज जिय ।"

शब्दार्थ—पिक्क = कोयल । सेत = श्वेत । भँवहि = घूमते हैं । बास = गंध । सुदिन = शुभ दिन । उमा = पार्वती । हर = शिव । प्रसाद = कृपा ।

प्रसंग—प्रस्तुत पद्य खण्ड में चन्दबरदाई ने पद्मावती के सौन्दर्य की अन्य कई विशेषताओं को चित्रित किया है ।

व्याख्या—सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं कि उसके घुँघराले और सुन्दर केशों में फूल गुँथे हुए हैं और जब वह बोलती है तो ऐसा लगता है जैसे कोयल बोल रही हो । उसके शरीर से कमल की गंध आती है, उसकी अवस्था वयसन्धि की है, जब कोई किशोरी, यौवन की देहली पर पाँव धरती है, वह जब उन्मत्त होकर हंस के समान मन्थर गति से चलती है तो बहुत सुन्दर लगती है । वह शरीर पर श्वेत वस्त्र धारण करती है, जिससे उसका सौन्दर्य और भी बढ़ जाता है और उसके नखों की कांति मोतियों जैसी है । भ्रमर भी भ्रमवश उसे फूल समझ बैठते हैं तथा मकरन्द या सुगंध के लोभ से उसके चारों ओर मँडराने लगते हैं । ऐसे सौन्दर्य को देखकर तोता बहुत प्रसन्न हुआ । उस तोते ने अपने मन ही मन में सोचा कि विधाता ने इसे शुभ मुहूर्त में बनाया है । यह सोचते हुए वह पार्वती व शंकर की कृपा की आकांक्षा के साथ यह कहने लगा कि ऐसी सुन्दरी को तो राजा पृथ्वीराज ही वर के रूप में मिले । इसके लिये उपयुक्त वर राजा पृथ्वीराज ही है ।

विशेष–(1) छप्पय छन्द का प्रवाह और सौन्दर्य-सृष्टि की कल्पना के साथ शब्दों की संरचना पूरे प्रसंग को अद्भुत कलात्मक वैशिष्ट्य प्रदान कर रहे हैं ।

(2) 'कमलगंध', वयसंध में ध्वन्यात्मकता है ।

(3) भाषा में माधुर्य का गुण समाविष्ट है ।

ऋतु वर्णन

वर्षा

(1)

"उद्दे बद्दल मत्त...पावस्स पंथानते ।"

शब्दार्थ—बद्दल = बादल । दामिन्य = बिजली । जामिन्या = रात्रि । बासुरो = दिन । पावस्स = वर्षा ऋतु ।

प्रसंग—कवि चन्दबरदाई वर्षा ऋतु का वर्णन करते हुए कहते हैं कि चारों ओर बादल घिर आये हैं जिनके बीच-बीच में मदमस्त हुई बिजली दमक रही है । मेंढ़क, मोर, सारस, पपीहा आदि के स्वर का चारों ओर शोर मचा हुआ है । धरती शृंगारपूर्ण सी हरी-भरी हो गई है । उसकी मलिनता बहकर समुद्र में चली गई है । बादल के घने अंधकार के कारण रात्रि और दिन एक समान लगने लगे हैं । वर्षा की अधिकता और चारों ओर छायी हरियाली के कारण पंथ या रास्ते भी दिखाई नहीं देते हैं ।

विशेष–(1) कवि ने वर्षा के व्यापक प्रभाव एवं प्रकृति के वर्षाकालीन रूप का सुन्दर चित्रण किया है ।

(2) भाषा वर्ण्य विषयानुकूल है ।

बसंत

"भवरि अम्ब...रति अग्गिय ।"

शब्दार्थ—अम्ब = आम । दीसं = दिखाई देना । भंवर = भ्रमर । बात = वायु । कल = सुन्दर, मधुर ।

सप्रसंग व्याख्या—वीरगाथा काल के महाकवि चन्दबरदायी द्वारा रचित प्रस्तुत पद में बसंत ऋतु के सौन्दर्य को प्रस्तुत किया गया है । कवि कहता है कि आम के वृक्ष में मंजरियाँ खिल आयी हैं और कदम्ब के वृक्ष भी फूलों से युक्त होकर सुन्दर दिखाई दे रहे हैं । भ्रमर फूलों का रसपान करते हुए बेसुध से हो रहे हैं और घूम रहे हैं । बसंत ऋतु की पवन बहकर विरह की अग्नि को और अधिक उद्दीप्त कर रही है । कोयल वृक्षों के पत्तों के बीच बैठी कुहुक रही है और रति की अग्नि को या प्रेमभाव को और बढ़ा रही है ।

विशेष–प्रकृति के सौन्दर्य के साथ प्रकृति का उद्दीपक रूप में वर्णन हुआ है ।

युद्ध-वर्णन

(1)

''बज्जिय घोर..नवरत्त वर ।''

शब्दार्थ—बज्जिय = बजते हैं । निसाँन = नगाड़े । रांन = राजा । तेग = तलवार । बीजु = बिजली । बाग = लगान । सोन = रक्त । रत्त = लाल ।

प्रसंग—उपर्युक्त पद्य में कवि चन्दबरदाई ने शहाबुद्दीन गौरी द्वारा पृथ्वीराज को घेर लेने के बाद दिखाए गये पराक्रम का काव्यात्मक वर्णन करते हुए लिखा है कि—

व्याख्या—पृथ्वीराज चौहान को शहाबुद्दीन गौरी की सेनाओं ने चारों ओर से घेर रखा है और युद्ध के नगाड़े घनघोर करते हुए बजने लगे । उनके समस्त शूरवीर सामन्त इस दृश्य को देखकर अपनी शक्ति का स्मरण करते हुए पृथ्वीराज के चारों ओर एकत्र हो गये । पृथ्वीराज ने भी उत्साहित होकर अपने घोड़े की लगाम को नट के कौशल की तरह पकड़ लिया अर्थात् जैसे नट अपनी कला में निपुण होता है, वह रस्सी पर चलते हुए संतुलन का लाघव दिखलाता है, उसी तरह पृथ्वीराज ने भी अपना कौशल दिखलाया । पृथ्वीराज ने अपनी म्यान से तलवार को उतनी ही तीव्रता से बाहर निकाला जैसी की मन की तीव्रता होती है । उस समय वह तलवार ऐसे चमक रही थी, जैसे बादलों के बीच बिजली चमकती है ।

कवि चन्दबरदाई आगे कहते हैं कि पृथ्वीराज के पराक्रम को देखकर सूर्य भी अचम्भे में पड़ गया और गगन से ही पृथ्वीराज के युद्ध-कौशल को देखकर ठगा-सा रह गया तथा चलना भूल गया । युद्ध की भयंकरता के परिणामस्वरूप समस्त भू-मण्डल खून से सराबोर हो गया । इस भीषण युद्ध को देखकर शूरवीर हृदय में प्रसन्न हुए और इस उल्लास के फलस्वरूप उनके मुँह पर नए रक्त की लालिमा छा गई ।

विशेष–(1) युद्ध वर्णन में कवि को कमाल का कौशल हासिल है । युद्धों का इतना सजीव वर्णन अन्यत्र कम ही देखने को मिलता है ।

(2) पृथ्वीराज की युद्ध-कला को नट के कला-संतुलन से तुलनीय बतलाकर कवि ने अपनी सृजनात्मक प्रतिभा का अच्छा प्रमाण प्रस्तुत किया है ।

(3) उत्प्रेक्षाओं में कवि की रचनात्मकता का कौशल विद्यमान है ।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

नोट—सही उत्तर का क्रमाक्षर दाहिनी ओर के कोष्ठक में लिखिए—

प्रश्न 1. "बाल बैस ससि ता समीप अम्रित पिन्रिय"। इस कथन में पद्मावती के किस अंग का विशेष सौंदर्य व्यंजित है ?

उत्तर—(ग) मुख।

प्रश्न 2. "भ्रमर भँवहि भुल्लहिं सुभाव मकरंद बास रस।"—कथन में कौनसा अलंकार प्रयुक्त है ?

उत्तर—(ख) भ्रान्तिमान।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. "अरुण अधर तिय सुधर बिम्ब फल जानि कीर छवि।" इस पंक्ति में बिम्बफल और 'कीर' उपमान पद्मावती के किन अंगों के लिए प्रयुक्त हैं ?

उत्तर—प्रस्तुत पंक्ति में 'बिम्बफल' पद्मावती के सुन्दर अधरों के लिए तथा 'कीर' शब्द उसकी नाक के सौन्दर्य के लिए प्रयुक्त हुए हैं क्योंकि पद्मावती के लाल अधर बिम्बफल की भाँति सुन्दर हैं तथा नाक तोते की चोंच की तरह तीखी और नुकीली है।

प्रश्न 4. बज्जिय घोर निसांन रांन चहुँआन चहुँ दिस।
सकल सूर सामन्त समरि बल जंत्र मंत्र तस।"
इन पंक्तियों में कौनसा काव्य-गुण है ?

उत्तर—इनमें ओज गुण है।

प्रश्न 5. निम्नलिखित शब्दों के तत्सम रूप लिखिये।

उत्तर—बाल बैस = बाल वय (बाल्य वयस्)
बिह = भय
चंच = चंचु
[illegible]संध = वय संधि
नैन = नयन
सेत = श्वेत।

प्रश्न 6. "मन अति भयो हुलास, बिगसि जनु कोक किरन रवि।"
रवि किरणों के विकास से कोक हर्षित क्यों हुआ ?

उत्तर—कोक (चकवा) रात्रि के समय अपनी प्रियतमा कोकी (चकवी) से बिछुड़ जाया करता है और सुबह सूर्योदय होते ही मिल जाता है। यह प्रकृति का ही नियम है। साहित्य में चकवा बहुत ही प्रेमी जीव माना गया है। चकवी के बिना एक-एक पल चकवे के लिए बहुत कठिन होते हैं। अतः चकवी से रात्रि का बिछुड़ा हुआ चकवा पुनः मिलन की खुशी में रवि किरणों के विकास से हर्षित हो जाता है।

प्रश्न 7. पद्मावती के अंग-सौन्दर्य के वर्णन में कौन-कौनसे उपमान प्रयुक्त किये गये हैं ?

उत्तर—कवि चन्दबरदाई ने पद्मावती के अंग-सौन्दर्य के वर्णन में विभिन्न प्रसिद्ध उपमान जुटाए हैं। उसके मुख की उपमा कमल से दी है, हाथ, नेत्र और चरणों को भी

कमल के समान ही बताया है। उसके केशों को बादलों की श्यामलता से युक्त, नेत्रों को खंजन पक्षी की सुन्दरता एवं मृगनयनों की विशालता से युक्त बताया है। पद्मावती के अधरों की उपमा बिम्बफल से, दाँत और नख हीरे के समान उज्ज्वल, नाक तोते की चोंच जैसी सुन्दर तथा बालों के बल खाने की उपमा सर्पों से दी है।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. ''कमलगंध वयसंध, हंस गति चलत मन्द-मन्द'' पंक्ति में निहित काव्य-सौन्दर्य को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–'कमलगंध, वयसंध' शब्द माधुर्य गुण से युक्त हैं तथा इनमें ध्वन्यात्मकता का गुण समाविष्ट है। अन्त्यानुप्रास की दृष्टि से भी ये शब्द सुन्दर उदाहरण बन गये हैं। इस पंक्ति में कलात्मक सौन्दर्य के साथ-साथ भावगत सौन्दर्य भी बहुत महत्त्वपूर्ण है। कमल की सुगंध से युक्त वयसंधि वाली पद्मावती का श्रृंगारिक वर्णन बड़ा सुन्दर बन पड़ा है। चन्दबरदाई ने श्रृंगार के अन्तर्गत वयसंधि के सुन्दर वर्णन द्वारा कोमल अनुभूतियों को वाणी प्रदान की है। कवि ने लिखा है—

''यों सरिता अरु सिंध मिलत दुहन हिलोर।
त्यों सैसव जल संधि में जोवन प्रपात जोर।
सैसव मध्य सु जोवनह, कहि सोभा कवि चन्द।
पाँव उठ तर छाँह छवि षोज न नीच रहंत।''

कवि ने बाल्यावस्था और यौवन अवस्था के मेल की वयसंधि को जिस सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है, वैसा अन्यत्र दुर्लभ है।

प्रश्न 9. निम्नलिखित के आधार पर चन्दबरदाई की काव्यगत विशेषताओं की समालोचना कीजिए—

(i) वर्ण्य विषय (ii) शब्द-चयन (iii) अलंकार-प्रयोग (iv) काव्य गुण।

उत्तर–चन्दबरदाई वीरगाथा काल के प्रसिद्ध महाकवि हैं। इनके काव्य का प्रधान रस वीर और श्रृंगार को माना गया है। इनके काव्य में प्रमुख विशेषताओं को उपर्युक्त बिन्दुओं के अन्तर्गत अभिव्यक्त किया जा सकता है—

(i) वर्ण्य-विषय–'पृथ्वीराज रासो' भारत के अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज चौहान के वीरतापूर्ण कार्यों की गाथा है। इसमें पृथ्वीराज चौहान की जन्म से लेकर मृत्यु-पर्यन्त के संघर्ष एवं युद्ध की कहानी है। इसमें पृथ्वीराज चौहान का वीरतापूर्ण आदर्श एवं दर्प प्रदर्शित किया गया है। यह वीर रस प्रधान काव्य है। युद्ध वर्णन के साथ-साथ नारी अंग वर्णन, विवाह-वर्णन, नगर शोभा, ऋतु वर्णन आदि का भी समावेश ''पृथ्वीराज रासो'' में समुचित मात्रा में हुआ है।

(ii) शब्द-चयन–'पृथ्वीराज रासो' डिंगल शैली की रचना है। इनकी भाषा में संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, अरबी, फारसी आदि भाषाओं के शब्दों का सफलतापूर्वक प्रयोग हुआ है। जहाँ युद्ध-वर्णन प्रसंगों में ओजस्वी शब्दावली का प्रयोग हुआ है, वहीं नारी-सौन्दर्य और प्रेम वर्णन में कोमल और मधुर शब्दावली का प्रयोग हुआ है। अतः कहा जा सकता है कि 'पृथ्वीराज रासो' में भावानुकूल शब्दावली का प्रयोग हुआ है जो महाकाव्य की भावाभिव्यक्ति में प्रभावोत्पादकता की सृष्टि करने में पूर्णतः सफल है।

(iii) अलंकार-प्रयोग–"पृथ्वीराज रासो" में चन्दबरदाई ने अलंकारों का सर्वत्र सम्यक् प्रयोग किया है। कवि ने परम्परागत उपमानों को कभी स्वाभाविक और युक्ति-संगत बनाकर प्रस्तुत किया है। 'पृथ्वीराज रासो' में सभी अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। अनुप्रास, यमक, उत्प्रेक्षा, रूपक, उपमा, अतिशयोक्ति, सन्देह आदि अलंकारों का प्रयोग इस महाकाव्य में पर्याप्त रूप में परिलक्षित होता है।

(iv) काव्य गुण–'पृथ्वीराज रासो' युद्ध प्रधान काव्य है, जिसका वर्णन ओजस्वी भाषा में होना स्वाभाविक है, अतः इस प्रकार के वर्णनों में ओज गुण की प्रधानता है। परन्तु नारी-सौन्दर्य, प्रेम वर्णन और ऋतु-वर्णन आदि में माधुर्य गुण की प्रधानता है। इस प्रकार 'पृथ्वीराज रासो' महाकाव्य में ओज और माधुर्य काव्य गुणों का समावेश हुआ है।

प्रश्न 10. निम्नलिखित अवतरण की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

"मनहुँ कला ससिभांन...सिष अहि घुट्टिय।"

उत्तर–प्रसंग—प्रस्तुत पद्यांश महाकवि चन्दबरदाई द्वारा रचित महाकाव्य "पृथ्वीराज रासो" से अवतरित है। 'पद्मावती सौन्दर्य' सर्ग से संकलित इस काव्यांश में पद्मावती के सौन्दर्य का नख-शिख वर्णन किया गया है। कवि ने पद्मावती के विभिन्न अंगों के सौन्दर्य की उपमा भिन्न-भिन्न उपमानों से देते हुए पद्मावती को अनन्य सुन्दरी के रूप में प्रस्तुत किया है।

व्याख्या—चन्दबरदाई कहते हैं कि पद्मसेन रानी के गर्भ से पद्मावती का जन्म हुआ। वह इतनी सुन्दर लगती थी मानो साक्षात् चन्द्रमा की कला का ही जन्म हुआ हो। अभी उसकी बाल्यावस्था ही थी। उसके रूप को देखकर ऐसा लगता था जैसे चन्द्रमा ने भी उसी के सौन्दर्य से अमृत ग्रहण किया हो। उसके मुख, नेत्र, हाथ और चरणों की सुन्दरता कमल से भी बढ़कर है। इन अंगों ने कमलों की सुन्दरता को, उसके काले बालों ने मोरों की श्यामलता को, उसकी वाणी ने बाँसुरी की मधुरता को, उसके नेत्रों ने खंजन पक्षी की सुन्दरता और मृग नयन की विशालता को भी मानो लूट लिया है अर्थात् वे इन उपमानों से भी अधिक सुन्दर हैं।

अध्याय 2

विद्यापति

कवि परिचय—विद्यापति का जन्म 1360 ई. से 1460 ई. के बीच बिहार के दरभंगा जिले में 'बिसफी' गाँव में हुआ था तथा उनका देहावसान संवत् 1448 में हुआ माना जाता है। विद्यापति संक्रमण काल के कवि थे। वे संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे तथा उन्हें प्राकृत, अपभ्रंश तथा मैथिली भाषा का विशद ज्ञान था। उनके रचे हुए 14 ग्रन्थ माने जाते हैं, जिनमें 11 संस्कृत में, 2 अवहट्ठ के हैं तथा 1 ग्रन्थ मैथिली का है। वे समर्थ कवि होने के साथ-साथ अच्छे शिक्षक, कथाकार, निबन्धकार, इतिहासकार और पर्यटक थे।

इनकी प्रमुख रचनाएँ—भूपरिक्रमा, पुण्य परीक्षा, दुर्गा भक्ति, तरंगिणी, कीर्तिलता, कीर्तिपताका, पदावली आदि हैं। उनकी पदावली मैथिली भाषा में है जो शृंगार रस प्रधान है। इसमें उन्होंने शृंगार के दोनों पक्षों—संयोग और वियोग का वर्णन किया है, पर जो तन्मयता संयोग-शृंगार के चित्रण में मिलती है, वह वियोग-चित्रण में नहीं। 'विद्यापति-पदावली' की भाषा चौदहवीं शताब्दी की मैथिली भाषा है। संगीतमकता और नाद सौन्दर्य के अतिरिक्त उनकी भाषा की यह विशेषता है कि उन्होंने मूर्त शब्दों का प्रयोग अमूर्त अर्थों में किया है। उनकी कविता को पढ़कर यह भी लगता है कि वे कृष्ण, शिव तथा गंगा आदि के भक्त हैं।

पाठ-परिचय–प्रस्तुत पाठ में प्रथम पद ईश वन्दना से सम्बन्धित है। कवि ईश्वर के चरणों की वन्दना करता हुआ, उनकी भक्ति की याचना करता है। ऋतु वर्णन में कवि ने सर्वप्रथम बसन्त ऋतु के मादक सौन्दर्य का वर्णन किया है। विद्यापति ने फूलों के सुन्दर रूप, कोयल की मधुर कूक आदि का मनोहारी चित्रण किया है। कृष्ण के वियोग में विरहिणी राधा तथा अन्य गोपियों की अवस्था को भी कवि ने मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त किया है। वर्षा ऋतु वर्णन में विद्यापति ने वर्षा के प्रकृति पर प्रभाव-वर्णन के साथ-साथ विरहिणी नायिकाओं के हृदय के भावों को अभिव्यक्त किया है। अन्तिम पद विरह में कृष्ण के वियोग में ब्रज-नारियों की विरहावस्था को चित्रित किया गया है। सम्पूर्ण पाठ में माधुर्य गुण विद्यमान है।

1. वन्दना

(1)

"ए हरि, बन्दौ .... तुअ पद लाजे।"

शब्दार्थ—बन्दौ = वन्दना करता हूँ। तुअ = तुम्हारे। परिहरि = त्यागकर। कओन = कौन। हलाहल-विष। पीअल = पान किया। भनइ = कहते हैं।

सप्रसंग व्याख्या—कवि विद्यापति भगवान के चरणों में अपना निवेदन प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि हे हरि! मैं तुम्हारे चरणों की वन्दना करता हूँ, इन्हें नमन करता हूँ। हे कृपानिधि! तुम्हारे चरणों को त्यागकर इस पाप के समुद्र से पार उतरने का कौनसा उपाय हो सकता है। मेरा मन सुन्दर युवतियों के प्रेम में लिप्त रहता है और आपके चरणों की वन्दना के बिना ही मेरा जीवन व्यतीत होता जा रहा है। मैं ऐसा मूर्ख व्यक्ति हूँ जो आपकी भक्तिरूपी अमृत को त्यागकर विषय-वासनाओं रूपी विष का पान कर रहा हूँ और सांसारिक आसक्तियों रूपी सम्पत्ति एकत्र करने में लगा रहा हूँ। विद्यापति कहते हैं कि हे भगवान! आपके चरणों में प्रेम बढ़ाने के लिए मैं संध्या के समय आपकी सेवकाई (सेवा का अवसर) माँगता हूँ, परन्तु मैं अपने कर्मों का स्मरण करते हुए आपके चरणों की ओर देखता हुआ भी लज्जा का अनुभव कर रहा हूँ। भाव यह है कि कवि ईश्वर की भक्ति को छोड़कर सांसारिक विषय-वासनाओं में लिप्त रहने की अपनी प्रवृत्ति पर बहुत लज्जित है।

विशेष–(1) कवि ईश्वर से अपने उद्धार की कामना करता है।

(2) कवि ने अपने दोषों को इंगित कर पश्चाताप प्रकट किया है।

(3) भाषा मैथिली है।

(4) कविता में माधुर्य गुण की प्रधानता है।

(5) अन्त्यानुप्रास अलंकार का सौन्दर्य दृष्टव्य है।

2. ऋतु वर्णन

वसन्त

(1)

"कुसुमित कानन..जल धारा।"

शब्दार्थ—कानन = वन। हेरि = देखकर। भेल = हो जाना। दुवरि = दुर्बल। धरनी = पृथ्वी। दिठि = दृष्टि।

सप्रसंग व्याख्या—विद्यापति ने यहाँ बसन्त ऋतु का सुन्दर वर्णन किया है तथा प्रियतम कृष्ण के वियोग में दु:खी गोपी की अवस्था का चित्रण किया है। बसन्त के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि वन में खिले हुए पुष्पों को देखकर नायिका को कमल जैसे सुन्दर मुख वाले कृष्ण की स्मृति हो आती है और वह नयन मूँद कर बैठ जाती है। कोयल की मधुर वाणी और भ्रमरों का गुंजार सुनकर वह कृष्ण के मधुर स्वर का स्मरण कर अपने कानों को हाथों से ढक लेती है। सखी कृष्ण से गोपी की दु:खी अवस्था का वर्णन करते हुए कहती है कि हे माधव ! तुम हमारी बात ध्यान से सुनो, वह नायिका तुम्हारे गुणों की दासी है जो तुम्हारे वियोग से अत्यन्त दुर्बल हो गई है। वह तुम्हारे प्रेम का स्मरण कर-करके ही हार गई है। वह नायिका जब धरती पर बैठ जाती है तो दुर्बलता के कारण पुन: उठ भी नहीं पाती है। वह बड़ी कातर दृष्टि से चारों ओर दिशाओं में देख-देखकर नेत्रों से जल की धारा बहाती रहती है।

विशेष–(1) कवि ने विरहिणी नायिका की अवस्था का मार्मिक चित्रण किया है तथा प्रकृति का उद्दीपक रूप से वर्णन हुआ है।

(2) भाषा भावानुकूल कोमलता लिये हुये है।

(3) अनुप्रास अलंकार का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

(2)

"तोहर बिरह दिन..नव प्रेम विभोर।"

शब्दार्थ—तोहर = तुम्हारे। छन-छन = क्षण-क्षण। छिन-क्षीण, कमजोर। तरुगन = वृक्ष समूह। कालिन्दी = यमुना नदी। पुलिन = किनारा। मलयानिल = मलय पवन (शीलत, सुगन्धित पवन)

सप्रसंग व्याख्या—विद्यापति प्रकृति वर्णन के साथ-साथ नायिका की प्रेम-पीड़ा का चित्रण करते हुए कहते हैं कि हे नायक ! तुम्हारे वियोग में नायिका का शरीर प्रतिक्षण दुर्बल होता जा रहा है। चतुर्दशी का चन्द्रमा जैसे निरन्तर घटता चला जाता है वैसे ही नायिका की काया क्षीण होती जा रही है। विद्यापति कहते हैं कि राजा सिवसिंह लखिमा देवी के स्वामी उनकी अवस्था को ध्यान से सुनिये वह ऐसे घूमती है जैसे राधा नन्दकिशोर के विरह में वृन्दावन के ऐसे सुन्दर कुञ्जों में कृष्ण को ढूँढ़ती रहती है जहाँ नवीन वृन्दा के पौधे, नयें-नये वृक्ष, नये-नये पुष्प विकसित हो रहे हैं, वहाँ नव बसन्त का सौन्दर्य और मलयाचल की नव प्रवाह वाली वायु बह रही है। वहाँ के सुन्दर यमुनातट पर भ्रमर गुंजार कर रहे हैं और ऐसे मनोरम वातावरण में नन्दकिशोर विहार कर रहे हैं। यमुना के तट पर सुन्दर वन और मनोहारी कुंज हैं जिनमें प्रेम से पूर्ण होकर वे विचरते रहते हैं।

विशेष–(1) कवि ने प्रकृति के मनोरम दृश्य को प्रेमभाव से जोड़कर अधिक प्रभावी बना दिया है।

(2) ''चौदसि चाँद समान'' में उपमा अलंकार का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

(3) भाषा में माधुर्य गुण विद्यमान है।

(3)

''नवल रसाल-मुकुल..मति माति।''

कठिन शब्दार्थ–नवल = नवीन, रसाल-मुकुल = आम की मंजरियाँ, मधु मातल = मधु के आनन्द से पूर्ण या मदमस्त, जुवती गन = युवतियाँ।

सप्रसंग व्याख्या–विद्यापति बसंत ऋतु के सौन्दर्य और युवक-युवतियों पर उसके प्रभाव का चित्रण करते हुए कहते हैं कि नव बसन्त के नव विकसित आम्र-मंजरियों के मकरन्द से मदमस्त होकर कोयलें मधुर गीत गा रही हैं। नव युवतियों के मन में भी प्रेम की भावनाएँ व्याप्त हो रही हैं और वे नव रस से पूर्ण होकर वन में दौड़ रही हैं। नई आयु के युवराज और नई आयु की चतुर नायिका दोनों बसन्त के प्रभाव से मस्त होकर नई-नई भाँति से मिलते हैं अर्थात् आलिंगन आदि करते हैं। उनके इस प्रकार के नित नवीन खेलों से विद्यापति की बुद्धि भी मदमस्त हो जाती है।

विशेष–(1) कवि ने वसंत-सौन्दर्य और श्रृंगार रस के संयोग पक्ष को बहुत सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है।

(2) अनुप्रास का सौन्दर्य दृष्टव्य है तथा नवशब्द की आवृत्ति सौन्दर्यवर्द्धक बन पड़ी है।

(3) मैथिली भाषा का मधुर रूप प्रयुक्त हुआ है।

2. वर्षा

(1)

''विपत अपत तरु..दुख न मिटाय।''

कठिन शब्दार्थ–अपत = पत्रहीन, बिहल बिहि = दुःख के आँसू बहाते हैं, बिरहानल = वियोग की अग्नि, बाढ़ल = बढ़ते जाना।

सप्रसंग व्याख्या–वर्षा ऋतु में नायिका का विरह दुःख और अधिक बढ़ जाता है, इसी बात को कवि ने वर्षा ऋतु वर्णन के साथ जोड़ कर अभिव्यक्त किया है। विद्यापति कहते हैं कि वर्षा के आगमन से पत्तों से रहित वृक्षों में भी पत्ते लग गये हैं, सब वृक्ष नव पत्रावली से युक्त होकर हरे-भरे हो गये हैं। विरहिणी नायिका के नयनों से निरन्तर अश्रु जल बरसने लगा है। नायिका के हृदय की विरह अग्नि और अधिक बढ़ गई है। यह दुःख हरि के दर्शन बिना लाखों उपायों से भी दूर नहीं हो सकता। नायिका के हृदय का दुःख तभी दूर होगा जब कृष्ण के दर्शन उसे मिल जायेंगे।

विशेष–(1) वर्षा ऋतु नायिका के विरह को उद्दीप्त करने वाला होता है, यही तथ्य यहाँ प्रकट हुआ है।

(2) भावानुकूल भाषा का प्रयोग हुआ है।

(2)

''पिय-पिय रटए..नंदकिसोर।''

कठिन शब्दार्थ–कुदिना = बुरे दिन, सोभाव = स्वभाव, प्रकृति।

सप्रसंग व्याख्या–विद्यापति कहते हैं कि वर्षा ऋतु में पिय-पिय की टेर लगाता हुआ पपीहा नायिका के कोप का पात्र बनता है। वह कहती है कि यह पपीहा भी

पिय-पिय रटता हुआ मेरे हृदय में दु:ख उत्पन्न करता है, बुरे दिन आने पर हितैषी भी अहितकारी बन जाते हैं, ऐसे इस संसार के स्वभाव को धिक्कार है। विद्यापति कहते हैं कि हे नायिका ! तेरा दु:ख तो तब मिटेगा जब नन्दकिशोर श्रीकृष्ण से तेरी भेंट या मिलन होगा।

विशेष–(1) नायिका को पपीहा की वाणी पिय वियोग में कष्टदायी प्रतीत होती है। यह विप्रलम्भ श्रृंगार की ही विशेषता है।

(2) कवि की मधुर एवं भावपूर्ण शैली की स्पष्ट झलक यहाँ मिलती है।

3. विरह

"माधव, तोहे जनु .... धरु सारा।"

कठिन शब्दार्थ–जाह = जाना, कओन = कौन, माँगब = माँगती हैं, पुरत = संतुष्ट होना।

सप्रसंग व्याख्या–गोपी अपने प्रियतम कृष्ण से कहती है कि तुम विदेश मत जाओ, तुम जाते समय हमारे हृदय का आनन्द, हमारा रूप-रंग सब अपने साथ लेकर चले जाओगे तो हम फिर कौनसा संदेश तुम्हारे पास भेजेंगी। यदि तुम वन गमन कर गये होते तो मेरी मति यह धैर्य धारण कर लेती कि मेरा पति वन में चला गया, अब क्या करूँ। हे माधव ! मैं तुमसे हीरा, मोती, मणि, माणिक आदि धन की याचना नहीं करती हूँ, मैं तो तुम्हारा सान्निध्य माँगती हूँ। जब आप गमन करने लगे तो मेरे नयनों में नीर भर आया और मैं आपको भली-भाँति देख भी नहीं सकी। हे माधव ! तुम एक ही नगर में निवास कर परवश हो गये हो, अब मेरा मन कैसे धैर्य धारण करे। आपको अनेक सुन्दर सुहागिनी नारियों ने ऐसे घेर रखा है जैसे चन्द्रमा को तारे घेर लेते हैं। हे कृष्ण! आपकी यह गोपी आपकी प्रतीक्षा कर रही है। आप इसका भी ध्यान कीजिए।

विशेष–(1) विरहणी गोपी के मार्मिक भावों को कवि ने सुन्दर ढंग से अभिव्यक्त किया है।

(2) भावानुकूल कोमल भाषा का प्रयोग हुआ है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

नोट–सही उत्तर का क्रमाक्षर दाहिनी ओर के कोष्ठक में लिखिये—

प्रश्न 1. "कुसुमित कानन हेरि कमल मुखि"
मूँदि रहये दुई नयन।"
रेखांकित में कमल मुखी युवती के अनुभाव का हेतु क्या है ?

उत्तर–(ग) हर्ष।

प्रश्न 2. "कातर दिठि करि चौदिस हेरि-हेरि,
नयन गरए जल धारा" रेखांकित पंक्ति में विरहिणी का कौन-सा अनुभाव व्यक्त हुआ है ?

उत्तर–(ख) सात्विक अनुभाव।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. "पिय-पिय रटए पपिहरा रे
हिय दुख उपजाव।"
पपीहा के पिय-पिय बोल गोपी के हृदय में दु:ख क्यों उत्पन्न करते हैं ?

उत्तर–विरहावस्था में नायिका के हृदय में पिय-पिय के बोल तीर की भाँति चुभते हैं । कृष्ण के वियोग में गोपी विरह की अग्नि में जल रही है, ऐसी अवस्था में पपीहा के बोल गोपी के हृदय में दु:ख उत्पन्न करते हैं ।

प्रश्न 4. "बिनु हरि लख उपचार हु रे
हिय दुख न मिटाय" विरहिणी के लिये किये जाने वाले किन्हीं चार उपचारों का उल्लेख कीजिए ।

उत्तर–विरहिणी के दु:ख का सही उपचार तो प्रियतम से भेंट ही होता है । फिर भी उसे सांत्वना देने के लिये कुछ प्रयत्न किये जाते हैं । जैसे—(1) प्रियतम के आगमन सम्बन्धी संदेश सुनाना ।

(2) शारीरिक पीड़ा दूर करने के लिये गुलाब जल छिड़कना, कमल पत्र शरीर पर रखना आदि ।

(3) सखियों द्वारा मीठी-मीठी बातें करके मन बहलाना ।

(4) वन-उपवन में ले जाकर क्रीडा आदि में मन लगाने का प्रयत्न करना ।

प्रश्न 5. "नव जुवराज नवल बर नागरि ।
मीलिए नव-नव भाँति ।" इन पंक्तियों में काव्य रस के 'विभाव' नामक अवयव के कौन-कौन से दो प्रकारों का उल्लेख है ?

उत्तर–इन पंक्तियों में 'विभाव' के दो प्रकार—आलम्बन विभाव और उद्दीपन विभाव का उल्लेख हुआ है ।

प्रश्न 6. "भनइ विद्यापति सिवसिंह नरपति
लखिमा देई समाना ।" इस कथन में उल्लिखित सिवसिंह और लखिमा देवी में क्या सम्बन्ध था ?

उत्तर–इनमें पति-पत्नी संबंध था ।

प्रश्न 7. विद्यापति ने किस उद्देश्य से ऋतु-वर्णन किया है ?

उत्तर–विद्यापति ने अपने काव्य में ऋतु-वर्णन काव्य परम्परा का निर्वाह करते हुए श्रृंगार वर्णन में सजीवता और प्रभावात्मकता लाने के उद्देश्य से किया है । विरह वर्णन में ऋतु वर्णन उद्दीपन विभाव का कार्य करता है और वर्णन अधिक चमत्कारपूर्ण बन जाता है ।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. विद्यापति के पदों की काव्यगत विशेषताएँ निम्नांकित विचार बिन्दुओं के आधार पर कीजिए—

(i) वर्ण्य-विषय (ii) भाषा (iii) काव्य-गुण ।

उत्तर–मैथिली भाषा के महान् कवि तथा संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश आदि अनेक भाषाओं के प्रकाण्ड विद्वान् विद्यापति एक अच्छे शिक्षक, कथाकार, निबन्धकार, इतिहासकार और पर्यटक भी थे । इन्होंने मैथिली भाषा में बहुत ही मधुर काव्य की रचना की है । इनकी पदावली बहुत प्रसिद्ध हुई है । यह मैथिली भाषा में रचित श्रृंगार रस प्रधान रचना है । इसकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

(i) वर्ण्य-विषय–विद्यापति के पदों का वर्ण्य-विषय श्रृंगार रस से पूर्ण है । इसमें उन्होंने नायिका की वय-संधि से पूर्ण यौवनागम तक की स्थितियों का बड़ा आकर्षक वर्णन किया है । इसमें संयोग और वियोग के विविध प्रसंगों का सजीव वर्णन मिलता है ।

ऋतु-वर्णन में उद्दीपन विभाव विद्यमान है तथा विषय को अधिक प्रभावी बनाता है। प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन भी बड़ा अद्भुत बन पड़ा है। कवि ने मान, प्रवास, करुण और विप्रलम्भ आदि विरह की स्थितियों का तथा विरह की विभिन्न दशाओं का मार्मिक वर्णन किया है।

(ii) भाषा–विद्यापति की पदावली की भाषा मैथिली है। इन्होंने भाषा का प्रयोग बहुत ही सुन्दर ढंग से भावों के अनुकूल ही किया है। इनके काव्य का प्रधान रस श्रृंगार है और श्रृंगार के अनुकूल मधुर और कोमलकान्त शब्दावली का प्रयोग इनके काव्य में हुआ है। अतः भाषा की दृष्टि से इनका काव्य अत्यन्त सुन्दर कहा जाता है।

(iii) काव्य-गुण–विद्यापति पदावली का वर्ण्य-विषय श्रृंगार रस प्रधान है। प्रकृति वर्णन एवं प्रेम वर्णन में जिस प्रकार की मधुर और कोमल भाषा का प्रयोग किया जाता है, उसमें माधुर्य गुण होना स्वाभाविक ही है। अतः विद्यापति ने अपने काव्य में मधुर भावों को मधुर भाषा में सँजोया है जिससे माधुर्य काव्य गुण का समावेश भी स्वाभाविक रूप से ही हो गया है।

प्रश्न 9. पठित पदों के आधार पर सप्रमाण स्पष्ट कीजिये कि विद्यापति भक्त कवि हैं या श्रृंगार कवि।

उत्तर–विद्यापति का काव्य मुख्यतः श्रृंगार रस प्रधान काव्य है। इनके काव्य में श्रृंगार रस के विविध दृश्यों, प्रसंगों आदि का बाहुल्य है। श्रृंगार वर्णन में कवि को पूर्णतः सफलता भी प्राप्त हुई है। इन्होंने नायिका की वयः-संधि से यौवनागम तक की स्थितियों का बड़ा सुन्दर और मनोहारी वर्णन किया है। नायिका का नखशिख वर्णन भी बहुत प्रभावी ढंग से किया है। ऋतु वर्णन और प्रकृति का उद्दीपक रूप में वर्णन कवि को श्रृंगारी कवि के रूप में ही प्रस्तुत करता है। उदाहरण के लिये संयोग और वियोग के इन दोनों पद्यांशों को देखिए—

संयोग : "नव रसाल-मुकुल मधु मातल
नव कोकिल कुल गाय
नव जुवती गन चित्त उमनाअई
नव रस कानन धाय॥
नव जुवराज नवल बर नागरि
मोलए नव-नव भाँति।"

वियोग : "विपत अपत तरु पाओल रे
पुन नव-नव पात।
बिरहिन नयन बिहल बिहि रे
अबिरल बरि सात।
सखि अन्तर बिरहानल रे
नित बाढ़ल जाय॥"

उक्त उदाहरणों से यह कहा जा सकता है कि विद्यापति प्रधानतः श्रृंगारी कवि हैं।

विद्यापति ने ईश्वर भक्ति संबंधी अनेक पदों की रचना भी की है। इन पदों के आधार पर इन्हें कृष्ण, शिव, गंगा आदि का भक्त कहा जा सकता है। उदाहरणार्थ—श्रीकृष्ण की वन्दना में उन्होंने यह पद लिखा है—

"ए हरि, बन्दौ तुअ पद नाय ।

....हेरइत तुअ पद लाजे ।"

कवि विद्यापति के भक्तिपूर्ण अनेक पदों की उपलब्धता के बावजूद उन्हें भक्त कवि की अपेक्षा श्रृंगारी कवि ही मुख्य रूप से माना जाता है ।

प्रश्न 10. निम्नांकित पद्यावतरण की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

"ए हरि, बन्दौ तुअ पद नाय.........................भेलि ।

उत्तर–प्रसंग : प्रस्तुत पद्यांश मैथिली भाषा के प्रसिद्ध कवि विद्यापति द्वारा रचित हैं । विद्यापति भगवान कृष्ण के प्रति अपनी भक्ति भांवना को प्रकट करते हुए कहते हैं कि आप ही मेरे स्वामी हैं, आप ही मेरी लाज रखने वाले हैं ।

व्याख्या– विद्यापति कहते हैं कि हे कृष्ण ! मैं तुम्हारें चरणों की वन्दना करता हूँ । हे कृपानिधि कृष्ण! तुम्हारे चरणों की वन्दना के अतिरिक्त इस पाप के सागर से पार उतरने का कौन सा उपाय हो सकता है । हे कृष्ण! मेरा यह जीवन तुम्हारे चरणों की सेवा किये बिना ही व्यर्थ में बीता जा रहा है, मैं युवतियों के प्रेम को मन में बसाकर अपने अनमोल समय को नष्ट कर रहा हूँ । मैं आपकी चरण-सेवा रूपी अमृत को त्याग कर सांसारिक विषय-वासनाओं रूपी विष का पान कर रहा हूँ और आपत्तियों रूपी सम्पदा को एकत्र कर रहा हूँ । भाव यह है कि भगवान कृष्ण की भक्ति ही अमृत तुल्य है, सांसारिक विषय-वासनाएँ तो विष समान हैं जो मानव जीवन को नष्ट कर देती हैं ।

अध्याय 3

अमीर खुसरो

कवि परिचय—अमीर खुसरो का जन्म सन् 1253 ई. में पटियाली गाँव में हुआ
नके पिता सैफुद्दीन इन्हें शिक्षा-दीक्षा हेतु बचपन में ही दिल्ली ले आये थे । उस समय
पने सूफी संत निजामुद्दीन औलिया का मुरीद (शिष्य) अमीर खुसरो को बना
। अमीर खुसरो की अपने गुरु के प्रति गहरी श्रद्धा और आस्था थी । सत्रह वर्ष
मीर खुसरो दिल्ली के अच्छे शायरों में गिने जाने लगे । इनके जीवन में
परन्तु शायरी ने हमेशा इनका साथ दिया । ये अनेक सुलतानों,
सम्मान पाते रहे ।
रत की मिट्टी से बहुत प्यार था ।

पाठ परिचय–प्रस्तुत पाठ में संकलित अमीर खुसरो की प्रसिद्ध रचनाएँ हैं । 'बाबुल गीत' एक अत्यन्त मार्मिक रचना है जो सांसारिक पिता-पुत्री के बिछोह के साथ-साथ परमात्मा और आत्मा की ओर संकेत करती है । प्रस्तुत काव्य में सूफी दर्शन का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप से परिलक्षित होता है । 'सगन बिन फूल रही सरसों' और दोहे अमीर खुसरो के गुरु निजामुद्दीन औलिया की मृत्यु के प्रसंग से जुड़ी रचनाएँ हैं ।

बाबुल गीत

(1)

''काहे को बियाहे............................साजन डोला लिए जाएँ, सुन बाबुल मोरे ।''

कठिन शब्दार्थ–बियाहे = विवाह कर भेजना, बाबुल = पिता, तोरे = तुम्हारे, गइयाँ = गाय ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना 'बाबुल गीत' अमीर खुसरो द्वारा रचित है । यह प्रसिद्ध रचना पिता के घर से विदा होती दुल्हन के मर्म की व्यथा को प्रकट करती है, साथ ही परमात्मा से बिछुड़कर विलग होती आत्मा की दु:खी अवस्था को भी व्यक्त करती है ।

व्याख्या–पिता रूपी परमात्मा से बिछुड़ती आत्मा रूपी पुत्री (दुल्हन) अपनी व्यथा को प्रकट करती हुई कहती है कि हे पिता! मैं तो तुम्हारा अभिन्न अंग हूँ, तुम मुझे अलग करके विदेश क्यों भेजना चाहते हो । हे पिता सुनो, मैं तो तुम्हारे बागों में रहने वाली कोयल के समान हूँ, मैं तुम्हारे खेतों की चिड़िया हूँ जो कुहुकती और चहचहाती रहती है, इधर-उधर फुदकती हुई आनन्द की सृष्टि करती रहती है । वह कहती है कि मैं चिड़िया की तरह हूँ जो चुग्गा चुगकर उड़ती रहती है । हे पिता ! मैं तो तुम्हारे बेला की कली के समान हूँ, जो कोई माँगता है तो चली जाती हूँ । वह आगे कहती है कि मैं तो तुम्हारे खूँटे से बँधी गाय के समान हूँ जो जहाँ हाँक दे वहीं चली जाती है ।

वह दुल्हन रूपी आत्मा पिता रूपी परमात्मा से आगे कहती है कि हे पिता ! मैंने अपनी लाख गुड़ियों के खिलौने और अपनी सहेलियों का साथ छोड़ दिया है । हे पिता, जब महल के नीचे से मेरी डोली निकली तो उसे देखकर मेरे प्रिय भाई ने दु:खी होकर पछाड़ खायी । जब मेरी डोली आम के नीचे से निकली तो प्यारी कोयल भी करुण स्वर में पुकारने लगी है । हे प्यारी कोयल तू क्यों रोती है, हम तो अब परदेश जा रहे हैं [illegible] पिता! नंगे पैरों से दौड़ते हुए आकर मेरे साजन मेरा डोला लिये जा रहे हैं । हे [illegible] विदेश क्यों भेज रहे हैं ।

विशेष–(1) कविता बहुत ही मार्मिकता और करुण भाव [illegible]

(2) हमारी संस्कृति की स्पष्ट छाप इसमें परिलक्षित [illegible]

(2)

''काहे को बियाहे परदेस..........

जो रात भर ठहर कर उड़ जाती है। हे पिता र तुम्हारे घर में अपने बचपन के खिलौनों की गुड़ियाओं से भरी हुई ताख भी मैं छोड़कर जा रही हूँ और अपने दादाजी का देश भी छोड़ कर जा रही हूँ। मैंने अपनी माता की प्यार भरी गोद और दादीजी की प्यारी गोद छोड़ दी है। हे पिता ! जब मेरी पालकी अपने कोठे (महल) के नीचे से निकली तो मेरे बिरना (भाई) ने दु:खी होकर पछाड़ खाई। जब आपकी इस मुन्नी ने परदा उठाकर देखा तो अपने आपको पराये देश में पाया।

(3)

''सगन बिन फूल...फूल रही सरसों।''

कठिन शब्दार्थ–सगन = शकुन (साथी), अंबवा = आम, टेसू = पलास।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना अमीर खुसरो के द्वारा अपने गुरु निजामुद्दीन औलिया के निधन पर उनकी मजार पर गाये गये शोक गीत का अंश है। कवि कहता है कि सगन या शगुन अर्थात् उचित अवसर के बिना ही सरसों के फूल खिल रहे हैं। आम भी कुसुमित हो रहे हैं, पलास के वृक्ष भी पुष्पित हो गये हैं और डाली-डाली पर कोयल कूक रही है, गौरी ने श्रृंगार कर लिया है, मालिन अपने हाथों में गुंदवा लेकर आ गई है; आज बिना अवसर के यहाँ सरसों फूल रही है।

अमीर खुसरो कहता है कि औलिया की मजार पर तरह-तरह के फूल चढ़ाये गये हैं, लोग गुंदवा (गुलदस्ते) हाथों में लेकर निजामुद्दीन औलिया के दरवाजे पर आ गये हैं। वे आने के लिये कहकर गये औलिया बरसों बीत जाने पर भी नहीं लौटे, उनके चाहने वाले उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। सरसों बिना शकुन या अवसर के ही फूल रही है।

दोहा

(4)

''खुसरू रैन सोहग की...रैन भई चहुँ देस।''

कठिन शब्दार्थ–पी = प्रीयतम (पति), रैन = रात्रि।

सप्रसंग व्याख्या–अपने गुरु निजामुद्दीन औलिया की अनायास मृत्यु से दु:खी अमीर खुसरो रोते-बिलखते उनकी मजार पर पहुँचा और दु:खी होते हुए भावावेश में यह कविता उनके मुख से फूट पड़ी। यही उनकी अन्तिम रचना भी थी। अमीर खुसरो कहता है कि आत्मा रूपी पत्नी सुहाग की रात भर अपने परमात्मा रूपी प्रियतम के साथ जाग्रत रही। मेरा तन और प्रियतम का मन दोनों मिलकर एक रंग हो गये हैं। इसका अन्य आशय यह भी है कि निजामुद्दीन औलिया और अमीर खुसरो दोनों एक जान दो शरीर थे।

अमीर खुसरो आगे कहता है कि गोरी (औलिया) अपनी सेज पर मुख पर केश डाल कर निद्रा में निमग्न है; अब खुसरो तू अपने घर को लौट चल, यहाँ तो चारों ओर रात्रि व्याप्त हो गई है। भाव यह है कि औलिया की मृत्यु के उपरान्त अमीर खुसरो के लिये सारा संसार अंधकारमय हो गया था।

विशेष–(1) कवि ने हृदय के भावों को बहुत ही मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है।

(2) सूफी काव्य परम्परा की प्रतीकात्मकता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

(3) भाषा का हिन्दवी रूप प्रयुक्त हुआ है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

नोट–सही उत्तर का क्रमाक्षर दाहिनी ओर के कोष्ठक में लिखिये—

प्रश्न 1. "हम तो बाबुल तोरे बागों की क़ोयल,
कुहकत घर-घर जाऊँ।" कथन में कौनसा भाव व्यंजित है ?

उत्तर–(घ) विषाद

प्रश्न 2. "हम तो बाबुल तोरे खूँटे की गइया,
जित हाँको हँक जाऊँ।
सुन बाबुल मोरे।"

इस कथन से क्या व्यंजित किया गया है ?

उत्तर–(ग) नारी की असहायता।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. 'बाबुल गीत' की रचना का प्रयोजन क्या है ?

उत्तर–'बाबुल गीत' अमीर खुसरो की बहुत प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय रचना है। इस रचना का उद्देश्य कवि का आत्मा का परमात्मा से विलग होने की करुणापूर्ण दशा का चित्रण करना है। कवि ने पिता से विदा होती हुई पुत्री को परदेश जाने के अवसर पर बहुत ही मासूम और दयनीय दशा में प्रस्तुत किया है। यही दशा परमात्मा से दूर होती हुई आत्मा की भी होती है, जैसा कि सूफी मत में माना जाता है। अत: कवि का प्रयोजन स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो जाता है।

प्रश्न 4. 'बाबुल गीत' में अमीर खुसरो ने अप्रत्यक्ष रूप से बाबुल किसे माना है और पिंजड़े की चिड़िया किसे माना है ?

उत्तर–'बाबुल गीत' में अमीर खुसरो ने अप्रत्यक्ष रूप से बाबुल परमात्मा को माना है और पिंजरे की चिड़िया आत्मा को माना है।

प्रश्न 5. 'बाबुल गीत' के भावों वाला गीत किस अवसर पर गाया जाता है ?

उत्तर–'बाबुल गीत' के भावों वाला गीत सांसारिक लोग प्राय: विवाह के अवसर पर दुल्हन की विदाई के समय गाया करते हैं।

प्रश्न 6. "ले गुंदवा हाथों में आए
निजामुद्दीन के दरवज्जे पर।"

इस कथन में उल्लिखित निजामुद्दीन से अमीर खुसरो का क्या संबंध था ?

उत्तर–यह निजामुद्दीन औलिया अमीर खुसरो के गुरु थे।

प्रश्न 7. "चल खुसरो घर अपने, रैन भई चहुँ देस।"
कथन का घटना प्रसंग-स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–प्रस्तुत दोहा अमीर खुसरो ने अपने गुरु निजामुद्दीन औलिया की मजार पर गाया था। यह घटना इस प्रकार है कि एक बार अमीर खुसरो शाही काम से लखनौती गये हुए थे, तभी उन्हें दिल्ली में निजामुद्दीन औलिया के निधन का समाचार मिला। वे रोते-रोते दिल्ली आये और सन्निपात की अवस्था में पीर के आश्रम पर पहुँचे। उनके कपड़े तार-तार हो चुके थे और वे बेहोश से हो गये थे। उसी अवस्था में अपने पीर की कब्र के पास बैठकर उन्होंने कहा था—

"गोरी सोवे सेज पर, मुख पर डारे केस।
चल खुसरो घर अपने, रैन भई चहुँ देस।"

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. 'बाबुल गीत' की काव्यगत विशेषताओं की निम्नांकित आधार पर समालोचना कीजिये—

(i) भाव-सौन्दर्य (ii) भाषा-रूप (iii) उक्ति-वैचित्र्य।

उत्तर–'बाबुल गीत' अमीर खुसरो की बहुत ही लोकप्रिय रचना है। यह रचना जहाँ एक ओर हमारी संस्कृति को प्रकट करती है, वहीं आत्मा-परमात्मा की एकरूपता को बतलाती है। प्रस्तुत रचना की प्रमुख विशेषताओं को निम्नांकित बिन्दुओं के माध्यम से समझा जा सकता है—

(i) भाव-सौन्दर्य–अमीर खुसरो द्वारा रचित 'बाबुल गीत' एक अत्यन्त मार्मिक गीत है। कवि ने इसमें पिता के घर से विदा होती पुत्री के हृदय की कोमल भावनाओं को बहुत कारुणिक भावों में प्रस्तुत किया है। पुत्री द्वारा स्वयं को पिता के बागों की कोयल, खूँटे की गाय, खेतों और आँगन की चिड़िया कहना हृदयस्पर्शी अभिव्यक्ति है। अमीर खुसरो ने पिता-पुत्री के बिछोह के साथ-साथ सूफी मत पर आधारित आत्मा-परमात्मा के विलग होने की स्थिति को भी अप्रत्यक्ष रूप से प्रकट किया है। इस प्रकार यह रचना बहुत ही भावात्मक, कारुणिक और मर्मस्पर्शी बन गई है।

(ii) भाषा-रूप–बाबुल गीत में कवि ने भावों के अनुसार ही भाषा का चयन किया है। प्रस्तुत रचना में प्रयुक्त पदावली निहित भावों को अभिव्यक्त करने में पूर्णतः उपयुक्त एवं हृदय को छू लेने वाली है। करुणाजनक भावों को प्रकट करने के लिये कवि ने बहुत ही मधुर, कोमल और भावपूर्ण शब्द काम में लिये हैं।

(iii) उक्ति-वैचित्र्य–कवि खुसरो ने प्रस्तुत गीत में अपनी बात को सीधे-सादे तरीके से न कह कर विचित्र ढंग से कहा है। उनकी उक्ति-वैचित्र्य की शैली प्रस्तुत गीत को और भी प्रभावपूर्ण बनाने में सफल रही है। पिता से विदा के समय पुत्री द्वारा स्वयं को विभिन्न भोले पशु-पक्षियों के रूप में प्रस्तुत करना, उसके कथन को और भी मार्मिक बना देता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि 'बाबुल गीत' में अमीर खुसरो ने उक्ति-वैचित्र्य का सहारा लेकर भावों को अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया है।

अध्याय–4

कबीर

कवि परिचय—मध्य युग के अन्य अनेक सन्त और भक्त कवियों के समान कबीर का जीवन-वृत्त भी प्रायः अंधकारमय है। उनके जन्म-मृत्यु, वास-स्थान, वंश और नाम तक के सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। विद्वानों की खोज के फलस्वरूप उनका जन्म संवत् 1455 में हुआ था तथा जनश्रुति के अनुसार मृत्यु संवत् 1575 में हुई थी। उनके दीक्षा-गुरु स्वामी रामानन्द थे, काशी में हम प्रकट भये, रामानन्द

चेताये। विधवा ब्राह्मणी के गर्भ से उत्पन्न, नीरू और नीमा जुलाहा-दम्पत्ति के द्वारा पलित-पोषित, नाथ-सिद्धों के धार्मिक दृष्टिकोण के प्रति अनुरक्त, मुस्लिम सन्तों के सम्पर्क में आने वाले कबीर की धर्म-भावना अत्यन्त व्यापक थी। अतः उन्होंने दोनों धर्मों की दुर्बलताओं की निन्दा की और मानव मात्र के लिये ग्राह्य धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आदर्शों की स्थापना की।

कबीर मस्तमौला, लापरवाह और फक्कड़ फकीर थे और अनपढ़ थे, किन्तु वे बहुश्रुत थे। उनका ज्ञान व अनुभव बहुत समृद्ध था। उनके काव्य संग्रह को 'बीजक' नाम से पुकारा जाता है। उनका काव्य साखी तथा पदों में है। उनकी भाषा में ब्रज, अवधी, बुंदेलखण्डी, अरबी, फारसी आदि का मेल है, पर वह भाषा आम बोलचाल की भाषा है। कबीर के काव्य की भाषा को विद्वानों ने 'सधुक्कड़ी' भाषा कहा है। कबीर को संतमय का प्रवर्तक माना जाता है। उनके पद आज भी लोगों की जबान पर है। कबीर पंथ में हिन्दू-मुसलमान दोनों का समान रूप से आदर है तथा उन्होंने एक ऐसे मानव धर्म की प्रतिष्ठा पर बल दिया है जो सभी वर्गों को ग्राह्य है।

पाठ परिचय–प्रस्तुत पाठ में कबीर की गुरु महिमा, स्मरण का महत्त्व, विरह भाव, ब्रह्म परिचय और संत-संगति से सम्बन्धित साखियाँ ली गई हैं, जिनमें कबीर ने अपने अनुभव को अभिव्यक्ति दी है। पदों में कबीर ने मन को जाग्रत रहकर ईश प्राप्ति के लिये प्रेरित किया है। धन-दौलत के मोह को त्यागने, माया के बन्धन से दूर रहने तथा आडम्बरों से दूर रहने की बात कबीर ने प्रभावपूर्ण ढंग से कही है।

साखी

1. गुरु महिमा

(1)

''दीपक दीया तेल...आँवौं हट्ट।''

कठिन शब्दार्थ–अघट्ट = कभी न घटने वाली, विसाहूणां = क्रय-विक्रय, हट्ट = बाजार (हाट)।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्यांश कबीर ग्रन्थावली से अवतरित है। कबीर ने प्रस्तुत दोहे में सत्‌गुरु की महिमा का वर्णन किया है।

व्याख्या–सतगुरु ने प्रेमरूपी तेल से परिपूर्ण एवं सर्वदा रहने वाली ज्ञानवर्तिका से युक्त दीपक मुझे प्रदान किया है। इसके प्रकाश में संसार रूपी बाजार में मैंने कर्मों का समस्त क्रय-विक्रय उपयुक्त रीति से कर लिया है। अब मैं पुनः इस बाजार में नहीं आऊँगा अर्थात् इस ज्ञान ज्योति से मैं जीवन मुक्त हो जाऊँगा।

विशेष–(1) इस दोहे में सांगरूपक और रूपकातिशयोक्ति अलंकार का प्रयोग किया गया है। (2) कबीर के इस दोहे में पुनर्जन्म, आवागमन में विश्वास का परिचय प्राप्त होता है। (3) दोहा छंद है।

(2)

''ग्यान प्रकास्या...गुर मिलिया आइ।''

कठिन शब्दार्थ–जिनि = नहीं, बिसरि = छोड़ना (भूलना)।

प्रसंग–पूर्व प्रसंग।

व्याख्या–गुरुदेव से भेंट होने पर हृदय में ज्ञान का प्रकाश हो गया है । ऐसे ज्ञान स्वरूप गुरु से विमुख नहीं होना चाहिए । यह प्रभु कृपा का ही फल है कि गुरुवर मुझे मिल गये हैं ।

विशेष–सतगुरु की प्राप्ति के लिये कबीर भगवान कृपा को आवश्यक मानते हैं ।

(3)

"कबीर गुर...धरोगे कौण ।"

कठिन शब्दार्थ–गुर = गुरु, गरवा = गौरवमय अभिमान, लूंण = नमक, नांव = नाम, कौण = कौन-सा ।

सप्रसंग व्याख्या–पूर्ववत् प्रसंग में कबीर कहना चाहते हैं कि मुझे गौरवमय गुरुदेव के दर्शन हुए हैं । उन्होंने अपने ज्ञान-स्वरूप में मुझे इसी प्रकार एक कर लिया अर्थात् अपने में मिला लिया, जैसे आटे में नमक मिल जाता है । गुरुदेव के इस प्रकार एक होने से मेरा स्वतन्त्र अस्तित्व न रह गया और मेरे स्वतन्त्र अस्तित्व के बोधक जाति-पाँति, कुल आदि सब नष्ट हो गये । अब तुम अर्थात् संसार मुझे गुरु से पृथक् मानने के लिये किस नाम से पुकारोगे ।

विशेष–इसमें कबीर का गुरु के ज्ञानस्वरूप के साथ ऐक्य स्थापित हो गया है ।

(4)

"माया दीपक...आध उबरंत ।"

कठिन शब्दार्थ–भ्रमि-भ्रमि = मँडरा-मँडरा कर, इवै = उसी पर ।

सप्रसंग व्याख्या–माया रूपी दीपक है और मानव पतंगा है जो मँडरा-मँडरा कर आकर्षित होकर उसी दीपशिखा पर गिरकर नष्ट होता है । कबीर कहते हैं कि इस माया दीप के आकर्षण से कोई एकाध विरले ही गुरु से ज्ञान प्राप्त करके बच पाते हैं ।

विशेष–(1) माया से बचने का उपाय गुरु का ज्ञान है । (2) सांगरूपक अलंकार का प्रयोग हुआ है ।

(5)

"गुरु गोविन्द...तौ पावै करतार ।"

कठिन शब्दार्थ–दूजा = दूसरा, आपा = अभिमान, अहम् भाव ।

सप्रसंग व्याख्या–ईश्वर प्राप्ति के लिये कबीर कहते हैं कि गुरु और गोविन्द एक ही हैं, दूसरा रूप यह मेरा आकार है जो अज्ञान स्वरूप है । जब व्यक्ति अपने अहम् भाव को नष्ट कर दे और अपने अस्तित्व को उसी में मिला दे, तो ईश्वर को प्राप्त कर सकता है ।

(6)

"कबीर सतगुर...घरि-घरि माँगै भीष ।"

कठिन शब्दार्थ–सीष = शिक्षा, जती = वेश, घरि-घरि = द्वार-द्वार, भीष = भीख ।

सप्रसंग व्याख्या–कबीरदासजी कहते हैं कि यदि शिष्य को सत्गुरु की प्राप्ति नहीं होती तो उसकी शिक्षा अपूर्ण रह जाती है । तपस्वी वेश धारण करके द्वार-द्वार पर भिक्षा माँगने वाले सत्गुरु नहीं होते हैं ।

(7)

"सतगुर हम सूँ .... गया सब अंग ।"

कठिन शब्दार्थ–रीझि कर = प्रसन्न कर । भीजि = भीगना ।

व्याख्या–सद्गुरु ने हमसे प्रसन्न होकर प्रभु भक्ति की ऐसी मनोरम चर्चा छेड़ी कि प्रेम का बादल बरस गया जिससे शरीर का अंग-प्रत्यंग उस प्रेम-जल से गीला हो गया ।

(8)

"कबीर बादल प्रेम .... भई बनराइ ।"

कठिन शब्दार्थ–अंतरि = अन्दर तक; बनराइ = वन-प्रदेश ।

व्याख्या–प्रभु-प्रेम का बादल बरसा जिससे आत्मा अन्तर तक उस प्रभु प्रेम जल से भीग गई और उसी के आनन्द में शरीर रूपी वन-प्रदेश में भी हरियाली-उत्फुल्लता छा गई है ।

विशेष–(1) उपरोक्त दोहे में कबीरदासजी ने असंगति अलंकार का प्रयोग किया है ।

(2) कबीरदास ने गुरु महिमा का वर्णन किया है ।

2. सुमिरण

(1)

"तत तिलक .... अधिक अपार ।"

कठिन शब्दार्थ–नाँव = नाम ।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्यांश कबीर ग्रन्थावली से लिया गया है । कबीर ने इस दोहे में निर्गुण सन्तों की भक्ति-पद्धति में आराध्य के नाम स्मरण का महत्त्व बतलाया है ।

व्याख्या–कबीरदासजी कहना चाहते हैं कि सार तत्व राम-नाम तीनों लोकों में सर्वश्रेष्ठ है । उसी को दास कबीर ने अपने मस्तक पर धारण किया है अर्थात् उसे शिरसा स्वीकार किया है । भाव यह है कि कबीर चन्दनादि का तिलक धारण नहीं करना चाहते अपितु राम-नाम ही उनके लिये तिलक है ।

(2)

"भगति भजन .... सुमिरण सार ।"

कठिन शब्दार्थ–मनसा = मन से, वाचा = वाणी से, कर्मणाँ = कर्म से ।

व्याख्या–प्रभु भक्ति और भजन जो कुछ भी है वह उनका नाम स्मरण है, इसके लिये जो अन्य साधन बतायें गये हैं वे दु:खों से परिपूर्ण हैं । कबीरदासजी कहते हैं कि मन, वाणी और कर्म से सर्वात्मना प्रभु नाम स्मरण ही सर्वश्रेष्ठ है ।

(3)

"कबीर सुमिरण .... देखौं काल ।"

कठिन शब्दार्थ–सकल = समस्त, सोधिया = अवलोकन ।

व्याख्या–एक मात्र प्रभु नाम स्मरण ही समस्त तत्वों का सार है और इसके अतिरिक्त हरि भक्ति के अन्य सांसारिक साधन जाल हैं जिनमें से निकलने का प्रयत्न करने पर मनुष्य और फँस जाता है । मैंने सांसारिक साधनों का आदि और अवसान अर्थात् अथ से इति तक अवलोकन करके देख लिया है, वे कालस्वरूप विनाश कारक हैं ।

(4)

''च्यंता तौ..काल कौ पास ।''

कठिन शब्दार्थ–च्यंता = चिन्ता, चितवैं = चिन्तन करना, नाँव = नाम ।

व्याख्या–भक्त को यदि कोई चिन्ता रहती है तो केवल हरिनाम स्मरण की, अन्य कोई चिन्ता नहीं । राम-नाम के अतिरिक्त व्यक्ति जो कुछ करता है वह मृत्यु के फन्दे के समान है अर्थात् उसके नाश का कारण है ।

(5)

''तूं-तूं करता तूं..जित दैखौं तित तूँ ।''

कठिन शब्दार्थ–हूं = अहं-भावना, जित = जिधर, तित = उधर ।

व्याख्या–हे प्रभु ! मैं तेरा नाम स्मरण करते-करते तेरे स्वरूप में ही विलीन हो गया । मुझमें किंचित भी अहं शेष नहीं रह गया है, अर्थात् मुझे अपने पृथक् अस्तित्व का ज्ञान ही न रहा । अब मैं प्रभु तेरे ऊपर बार-बार बलिहारी जाता हूँ क्योंकि जिधर मैं देखता हूँ उधर तू ही दृष्टिगत होता है ।

(6)

''कबीर निरभै राम..दिन राति ।''

कठिन शब्दार्थ–निरभै = निर्भय होकर, राति = रात ।

व्याख्या–कबीरदासजी कहते हैं कि हे मनुष्य! जब तक तेरे शरीर रूपी दीपक में जीवन रूपी वर्तिका है तब तक तू सांसारिक भ्रमों एवं चिन्ताओं से मुक्त होकर राम नाम का स्मरण कर, व्यर्थ आलस्य में अपना जीवन मत गँवा, क्योंकि श्वास रूपी तेल समाप्त हो जाने पर जीवन-वर्तिका बुझ जायेगी अर्थात् मृत्यु को प्राप्त हो जायेगा । तुझे यह जीवन प्रभु भक्ति के लिये ही मिला है, प्रभु की भक्ति कर ।

(7)

कबीर सूता..पाँव पसारि ।''

कठिन शब्दार्थ–सूता = सोता हुआ (अज्ञान में लिप्त)

व्याख्या–कबीरदासजी कहते हैं कि हे मनुष्य ! तू अज्ञान निद्रा में पड़ा हुआ क्या कर रहा है । जागकर ज्ञानयुक्त होकर प्रभु का भजन क्यों नहीं करता । यह विश्राम तो फिर भी हो सकता है क्योंकि अन्तत: एक न एक दिन अवश्य ही चिरनिद्रा में लीन होना होगा अर्थात् मृत्यु को प्राप्त करना है ।

3. विरह

(1)

''बहुत दिनन की..मनि नाहीं विश्राम ।''

कठिन शब्दार्थ–जोवती = देखती, बाट = प्रतीक्षा, जिव = प्राण, मनि = मन में ।

प्रसंग–प्रस्तुत दोहा कबीर ग्रन्थावली से लिया गया है । इस दोहे में कबीरदास ने प्रेम की परिपूर्णता एवं परिपक्वता के लिये विरह आवश्यक माना है । प्रस्तुतांश में कबीर ने भी आत्मा-परमात्मा के प्रभाव में और उसके दर्शन करने की तीव्र उत्कंठा में आत्मा के विरह का वर्णन किया है ।

व्याख्या–हे राम! मैं विरहिणी आत्मा तुम्हारी प्रतीक्षा बहुत समय से कर रही हूँ । मेरे प्राण तुम्हारे दर्शन के लिये तृषित हैं और मन बिना दर्शन के व्याकुल है ।

(2)

"बिरहिन ऊठै...दरसन किहिं काम ।"

कठिन शब्दार्थ–मूवा = मरने पर, सोदरसन = सुदर्शन ।

सप्रसंग व्याख्या–हे राम! यदि आपके दर्शनों के लिये विरहिणी यदि उठती भी है तो क्षीणकाय होने के कारण गिर पड़ती है अर्थात् आपके विरह में अत्यन्त कृशकाय हो गई है । उसके मरणोपरान्त यदि आपने रोग निवारण सुदर्शन चूर्ण अर्थात् अपना सौन्दर्यमय स्वरूप दर्शन दिया तो वह किस प्रयोजन का ।

(3)

"मूवाँ पीछैं...कौणे काम ।"

कठिन शब्दार्थ–मूवाँ = मत्यु, जिनि = यदि, कौणे = किस ।

सप्रसंग व्याख्या–कबीरदासजी कहते हैं कि हे प्रभु ! यदि आपका दर्शन मृत्यु के पश्चात् हुआ तो वह किस प्रयोजन का ? वह तो उसी प्रकार निरर्थक है जिस प्रकार कोई पारस पत्थर की प्राप्ति के लिये लोहे को प्रत्येक पत्थर से घिस कर समाप्त कर दे और तब उसे पारस पत्थर की प्राप्ति हो ।

(4)

"आइ न सकौं...तपाइ तपाइ ।"

कठिन शब्दार्थ–जियरा = जीव (प्राण), यौही = यही, लेहुगे = लोगे ।

व्याख्या–कबीर की वियोगनी आत्मा कहती है कि मैं तेरे पास भी नहीं आ सकती क्योंकि मैं अभी इतनी समर्थ नहीं अर्थात् मैं अभी माया में लिप्त हूँ और तुझे अपने पास बुला नहीं सकती क्योंकि मैं अभी सर्वात्मा-समर्पण नहीं कर सकी जो तुझे आकृष्ट कर मेरे पास ले आये । अत: अब तो यही दिखाई देता है कि तुम हमारे प्राणों को इसी प्रकार विरह में तपाते-तपाते समाप्त कर दोगे ।

(5)

यहु तन जालौं...बुझावै अग्गि ।"

कठिन शब्दार्थ–मसि = क्षार राख, सरिग्ग = स्वर्ग, मति = सम्भव है, अग्गि = आग, विरह = दु:ख, बरसि = जल (वारि) ।

व्याख्या–विरह की इस असहनीय अवस्था में यह इच्छा होती है कि मैं अपना यह शरीर भस्म कर क्षार (राख) कर दूँ जिससे मेरी अस्थियों का जो धुआँ आकाश में फैलेगा तो सम्भव है कि दयानिधि राम दयार्द्र होकर अपनी कृपा-दृष्टि के (वारि) जल से उस अग्नि को बुझावें ।

(6)

"यहु तन जालौं...राम पठाउँ ।"

कठिन शब्दार्थ–जालौं = जलाकर, मसि = स्याही, नाउँ = नाम, करंक = अस्थि-पंजर, पठाउँ = भेजूँ ।

व्याख्या–विरहिणी कहती है कि मेरी इच्छा होती है कि इस शरीर को जला कर स्याही बनाकर अस्थिपंजर की लेखनी बनाकर इस पर राम का नाम लिखूँ और लिख-लिखकर अपने प्रभु राम को भेजूँ, कदाचित् ऐसा कार्य करने से प्रसन्न होकर राम दर्शन दें ।

(7)

''अंषड़ियाँ झाई पड़ी..............................राम पुकारि पुकारि ।''

कठिन शब्दार्थ–अंषड़ियाँ = नेत्र (आँखें), झाई = मन्द, जीभड़ियाँ = जिह्वा ।

व्याख्या–कबीरदासजी कहना चाहते है कि प्रिय आगमन का मार्ग तकते-तकते मेरी नेत्र-ज्योति मंदी पड़ गई है और राम-राम पुकारते-पुकारते मेरी जीभ में छाले पड़ गये हैं ! हे प्रियतम! मैं कब से तुम्हारी बाट जोह रही हूँ ।

(8)

''जौ रोऊँ तो..............................काठहि खाइ ।''

कठिन शब्दार्थ–बिसूरणाँ = क्रन्दन, घुण = घुन, काठहि = काष्ठ को (लकड़ी को ।)

व्याख्या–कबीरदासजी कहना चाहते हैं कि यदि मैं राम के विरह में रोता हूँ तो मेरी शक्ति क्षीण हो जाती है और हँसता हूँ तो राम को प्रिय नहीं है । क्योंकि बिना मिलन उल्लास क्यों और कैसे । अब मेरी आत्मा अन्दर ही अन्दर क्रंदन कर मुझे क्षीण करती रहती है, जैसे घुन भीतर ही भीतर काष्ठ को काट कर खोखला कर देता है । भाव यह है कि विरह भीतर ही भीतर सालता रहता है ।

(9)

''हँसि-हँसि..............................दुहागनि कोइ ।''

कठिन शब्दार्थ–कंत = पूर्ति, जिनि = जिसने, तिन = वो, दुहागनि = दुर्भागिनी ।

व्याख्या–हँस-हँस कर सांसारिक आनन्द भोगते हुए किसी ने प्रभु को नहीं पाया है । जिसने भी ईश्वर की प्राप्ति की है उसने उनके विरह की मर्मानुभूति की है । जो इस प्रकार भोग-विलास द्वारा ब्रह्म की सुहागिन बन जाये तो कोई अभागिन रहे ही नहीं ।

4. ब्रह्म-परिचय

(1)

''पिंजर प्रेम..............................पियारा कंत ।''

कठिन शब्दार्थ–पिंजर = पिंजड़ा (अस्थि-पिंजड़ा) अर्थात् शरीर जो पाँच तत्वों का पिंजड़ा, खूटा = समाप्त हुआ ।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्यांश कबीर ग्रन्थावली से लिया गया है । इस दोहे में कबीरदास जी ने आत्मा और परमात्मा के महामिलन का परिचय देते हुए ब्रह्म के स्वरूप का परिचय दिया है ।

व्याख्या–कबीरदासजी कहते हैं कि हृदय में प्रेम प्रकाशित होने पर आत्मा और परमात्मा का जो प्रिय और प्रेमी का सनातन सम्बन्ध है, वह जाग उठा है । इस प्रेम भावना के जगने से अज्ञानवश जो भ्रम थे वे नष्ट हो गये एवं प्रिय ब्रह्म मिलन का अमिट सुख प्राप्त हुआ ।

विशेष–हृदय प्रिय आत्मा-परमात्मा के संयोग का आनन्दमय दृश्यावलोकन

''२

(2)

''प्यंजर प्रेम..फूटी बास।''

कठिन शब्दार्थ–प्यंजर = शरीर, उजास = प्रकाश (रोशनी, उजाला), बास = सुगंधि (खुशबू)।

सप्रसंग व्याख्या–कबीरदासजी कहते हैं कि इस शरीर में प्रभु प्रेम के उदित होने पर हृदय उस प्रेम-ज्योति से ज्योतित हो उठा है और साधक का मुख प्रेम की सुगन्ध से परिपूर्ण हो गया है जिससे उससे निस्सृत वाणी भी प्रभु-प्रेम की सुगन्ध से सुगन्धित थी।

(3)

''पाँणीं ही तैं ....कह्या न जाइ।''

कठिन शब्दार्थ–पाँणीं = पानी (जल) अर्थात् परम रत्व ब्रह्म, हिम = बर्फ तत्व से निर्मित पदार्थ या वस्तु अर्थात् जीव।

सप्रसंग व्याख्या–कबीरदासजी कहते हैं कि आत्मा और ब्रह्म का अद्वैत सम्बन्ध है। जिस प्रकार पानी से बर्फ बनती है एवं नष्ट होकर वह पुनः पानी में परिवर्तित हो जाती है, उसी प्रकार जीवात्मा ब्रह्म का ही अंश है और मृत्यु को प्राप्त होने पर पुनः उसी परमात्मा में लय हो जाता है। इस प्रकार तत्व या आत्मा अंततः अपना प्रकृत स्वरूप ग्रहण कर लेता है।

विशेष–निम्नस्थ पद में भी कबीर ने यही भावना व्यक्त की है—

''जल में कुम्भ कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पानी।
फूटा कुम्भ जल जलहि समाना, इहि तथ कथ्यो ग्यानी।''

(4)

''आया था संसार..नजरि अनूप।''

कठिन शब्दार्थ–देषण = देखने को। अनूप = ब्रह्म।

सप्रसंग व्याख्या–इस नानारूपात्मक जगत् में विविध सांसारिक उपादानों को देखने के लिये ही मेरा जन्म हुआ था, किन्तु कबीरदासजी कहते हैं कि मुझे इस संसार में आकर ब्रह्म के दर्शन हो गये।

(5)

''अंक भरे..दोइ सरीर।''

कठिन शब्दार्थ–अंक = गोद (आलिंगन), जब लग = जब तक, दोइ = दो, सरीर = शरीर।

सप्रसंग व्याख्या–कबीरदासजी कहते हैं कि मैं प्रिय से प्रेम विभोर हो कस-कस कर आलिंगनबद्ध हुआ, फिर भी मन में धैर्य नहीं है। वह एक प्राण दो तन चाहता है। मन तो परमात्मा में एकाकार होना चाहता है किन्तु कबीरदासजी कहते हैं कि जब दो शरीर हैं तब तक एकाकार कैसे हो सकते हैं ? यह द्वैत ही आत्मा और परमात्मा के मिलन में बाधक है।

5. संत की संगति

(1)

''कबीर संगति साध..सुमति बताइ।''

कठिन शब्दार्थ–दुरमति = दुर्बुद्धि , गँवाइसी = नाश, सद्बुद्धि = सुबुद्धि, बताइ = प्राप्ति (ग्रहण) ।

प्रसंग–प्रस्तुत दोहा कबीर ग्रन्थावली से उद्धृत है । प्रस्तुत दोहे में कबीर ने सत्संगति की महिमा का वर्णन किया है । वे कहते हैं कि साधुओं की संगति कभी भी निष्फल नहीं होती है । साधु संगति के बिना तीर्थों का कोई प्रयोजन नहीं होता है ।

व्याख्या–कबीरदासजी कहते हैं कि साधुजनों की संगति शीघ्रातिशीघ्र करनी चाहिये । उससे दुर्बुद्धि का नाश होता है और सद्बुद्धि की प्राप्ति होती है ।

(2)

''मथुरा जावै..........................न आवै हाथ ।''

कठिन शब्दार्थ–भावै = जहाँ इच्छा हो ।

व्याख्या–कबीरदासजी कहते हैं कि मथुरा, द्वारिका, जगन्नाथ या अन्य तीर्थ-स्थल चाहे जहाँ चले जाओ किन्तु साधु संगति और प्रभु भक्ति के बिना कुछ भी प्राप्ति नहीं हो सकती है ।

(3)

''कबीर सोइ..........................सरीरौ जाहिं ।''

कठिन शब्दार्थ–मिलाहिं = मिलना, भेटिया = भेंट करना, सरीरौ = शरीर ।

व्याख्या–प्रस्तुत दोहे में कबीरदासजी कहना चाहते हैं कि वह दिवस (दिन) श्रेष्ठ है जिस दिन सन्त-दर्शन हो जायें और उनको प्रेम-पूर्वक आलिंगन कर भेंट करने से शरीर के समस्त पाप दूर हो जाते हैं ।

(4)

''कबीर चंदन..........................होते उन पास ।''

कठिन शब्दार्थ–बिड़ा = वृक्ष, सरीखे = समान ।

व्याख्या–कबीरदास कहते हैं कि चन्दन का वृक्ष आकड़े और पलास जैसे अपने निकट के पेड़-पौधों को भी अपने समान ही बना देता है अर्थात् अच्छी संगति के प्रभाव से बुरे लोग भी अच्छे बन जाते हैं ।

(5)

''कबीर खाई..........................गंगोदिक होइ ।''

कठिन शब्दार्थ–कोट = किला, गंगोदिक = गंगा जल ।

व्याख्या–प्रस्तुत दोहे में कबीरदासजी कहते हैं कि किले से निकलने वाली गन्दी खाई, नाले का पानी कोई नहीं पीता है, किन्तु जब वही नाला गंगाजी में जाकर मिल जाता है तो पवित्र गंगाजल हो जाता है जिसका सब श्रद्धापूर्वक पान करते हैं ।

विशेष–तुलसी से तुलना कीजिये—

''गगन चढ़हिं राज पवन-प्रसंगा ।''

पद

(1)

''मन रे..........................रतन धन पाया ।''

कठिन शब्दार्थ–गाफिल = चेतनाशून्य, चोर = पाँच चोर—काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह, पंच पहरवा = पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, बसतैं = कुण्डलिनी ।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्यांश कबीर पदावली से अवतरित है । कबीरदासजी के पदों की प्रमुख विशेषता यह है कि इनमें आत्मा के ज्ञान की प्राप्ति के लिये गुरु के प्रति श्रद्धा को आवश्यक बताया है ।

व्याख्या–कबीरदासजी अपने मन को प्रबोध देते हुये कहते हैं कि—हे मन ! तू चेतनाशून्य हो अपनी पूँजी को मत खो अन्यथा माया रूपी चोर का शरीर के घर में प्रवेश हो जायेगा ।

यह शरीर षट्चक्रोंयुक्त स्वर्ण कोठारी है जिसमें कुण्डलिनी सुप्तावस्था में पड़ी है, किन्तु जब प्राणायाम द्वारा कुण्डलिनी चक्रों का भेदन करती हुई ऊपर जायेगी तो समस्त रहस्य प्रकट हो जायेगा । इस अवस्था में पहुँचकर शरीर की पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ रूपी पहरेदार जो समस्त क्रिया व्यापार के संचालक हैं सो गये हैं, अर्थात् उन्होंने अपनी गति स्थिर कर दी है । उनके सोते ही कुण्डलिनी जग गई और वह शून्य की ओर अग्रसर होने लगी, वह ब्रह्मरन्ध्र पर पहुँच गई । वहाँ पहुँचने पर फिर जीवात्मा को जन्म-मरण का भय नहीं रहता है । मन में विचार करते ही करते यह सिद्धि प्राप्त हुई है अथवा मन की वृत्तियों को अन्तर्मुखी कर देने पर ब्रह्म प्राप्ति हो गई । इसके लिये मुझे कहीं इधर-उधर न भटकना पड़ा । कबीरजी कहते हैं कि इस प्रकार राम रूपी अमूल्य रत्न को प्राप्त करके मैं संसार-संशय से छूट गया ।

विशेष–(1) कबीर ने इस पद में सधुक्कड़ी भाषा का प्रयोग किया है ।
(2) इनके पदों में संगीतात्मकता, माधुर्यता, प्रवाहमयता का पुट है ।

(2)

"राम थोरे...संगि न जाई ।"

कठिन शब्दार्थ–क्रिपन = कृपण (कंजूस), गरबि = गर्व (घमण्ड), नागा = नंगा (खाली हाथ), हंस = जीव ।

प्रसंग–कबीर ने प्रस्तुत पद में सांसारिक धन-दौलत को महत्त्वहीन बताते हुए कहा है कि जीव को एक दिन खाली हाथ ही जाना पड़ता है ।

व्याख्या–कबीर कहते हैं कि हे प्रभु! थोड़े दिन स्थिर रहने वाले इस सांसारिक धन का क्या करना, इसके लिये न जाने कितने प्रयत्न जी तोड़कर करने पड़ते हैं । यदि कोई साहूकार अथवा राजा अपने द्वार पर हाथी बाँधकर भवन पर सौ पताकायें फहरा दे और कृपण अपने कोष में अतुल धन जमा कर ले इसका किसी और को क्या लाभ ? ये लोग धनाभिमान में प्रभु को भी नहीं पहचान पाते हैं, किन्तु जब यम इन्हें ले जाता है तो नंगे होकर खाली हाथ जाते हैं । कबीरदासजी कहते हैं कि सब सावधान हो प्रभु-भक्ति का भजन करो, क्योंकि प्राण निकल जाने पर कुछ भी साथ नहीं जाता, यह सांसारिक वैभव यथावत् यों ही धरा रह जाता है ।

विशेष–(1) कबीर ने लोभ और कृपणता के त्याग का उपदेश दिया है ।
(2) पद की भाषा सरल सधुक्कड़ी है ।

(3)

"काह कूं माया...माया काहू खाई ।"

कठिन शब्दार्थ–बंध = बन्धु, तुरंगम = घोड़े, ल्यौ = प्रेम।

प्रसंग–कबीर ने सांसारिक वैभव को निरर्थक बताते हुए राम नाम की सार्थकता को प्रकट किया है।

व्याख्या–कबीरदासजी कहना चाहते हैं कि हे जीव! तूने यह माया, धन, सम्पत्ति व्यर्थ क्यों दु:ख उठा-उठा कर संचित की है। तुझे मृत्यु होने पर लाल रंग का वही पाँच गज का वस्त्र प्राप्त होगा अन्य कुछ नहीं।

इस संसार में कोई किसी का न बन्धु है न सखा, समस्त संसार-सम्बन्ध मिथ्या है फिर क्यों धनिक लोग द्वार पर हाथी-घोड़े बांध कर वैभव का प्रदर्शन करते हैं। झोंपड़ी, महल, सरोवर अन्य भवन सब को यहीं छोड़कर बड़े-बड़े राजा मृत्यु को प्राप्त हो गये। कबीर कहते हैं कि मूढ़ (मूर्ख) जीव! तू प्रेम सहित प्रभु भक्ति कर। इस माया को कोई नहीं खाये जाते।

विशेष–(1) कबीर ने संसार को माया, धन-दौलत की बजाय ईश्वर से प्रेम करने की सलाह दी है।

(4)

"कहा भयौ..कहै कबीर।"

कठिन शब्दार्थ–भयौ = हुआ, गरै = गले में, स्वांग = वेश धारण, सेत = श्वेत (उज्ज्वल)।

व्याख्या–प्रस्तुत पद में कबीरदासजी ने ईश्वर प्राप्ति के लिये सच्चे प्रेम और भक्ति की आवश्यकता पर बल दिया है। कबीरदासजी कहते हैं कि तिलक धारण करने, गले में माला डालने आदि से क्या होता है जब तक गोपाल अर्थात् ईश्वर से मिलन के रहस्य को नहीं जान लो तब तक सब व्यर्थ है। जैसे कोई पशु (गाय-बैल आदि) बहुत उद्दण्डी हो जाता है तो ग्वाला उसके गले में लकड़ी का भारी-सा डंडा बाँध देता है जो उसके पैरों में टकराता रहता है और पशु भाग-दौड़ नहीं कर पाता है, परन्तु उसकी आदत में परिवर्तन नहीं आता है। वैसे ही ढोंगी व्यक्ति गले में काठ की माला पहनकर सच्चा भक्त नहीं हो जाता है। जिस व्यक्ति की वेशभूषा तो संतों जैसी है परन्तु करनी या मन के भाव काले हैं, वह गले में माला धारण करके क्या प्राप्त कर सकता है। जब तक सच्चा प्रेम न हो तब तक व्यर्थ ही रोने से क्या लाभ, जब तक मन में विकार भरे हैं तब तक ऊपरी रूप से तन को धोने से पवित्र नहीं हो सकता। कबीर कहते हैं कि विषय-वासनाओं में लिप्त मन भक्ति नहीं कर सकता, उसके मन में सच्ची ईश्वर भक्ति होनी चाहिए।

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

नोट–सही उत्तर का क्रमाक्षर दाहिनी ओर के कोष्ठक में लिखिये—

प्रश्न 1. "हँसि-हँसि..दुहागनि कोइ।"
कबीर ने हँसी को हरि-मिलन में बाधक क्यों बतलाया है ?

उत्तर–(ग) हँसी अहंकार को बढ़ाती है।

प्रश्न 2. "माया दीपक नर पतंग, भ्रमि-भ्रमि इवै पड़ंत।
कहै कबीर गुरग्यान तैं, एक आध उबरंत।" इस साखी में कौन-सा अलंकार प्रयुक्त है—

उत्तर–(घ) रूपक।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. "तेल घट्या बाती बुझी (तब) सोवेगा दिन राति ।" इस कथन में कबीर ने क्या चेतावनी दी है ?

उत्तर–कबीर ने प्रस्तुत साखी के माध्यम से मानव को चेतावनी दी है कि जब तक तेरी उम्र बाकी है तब तक ईश्वर का नाम स्मरण कर ले, इस समय को आलस्य में व्यतीत मत कर । जब तेरा आयु रूपी तेल समाप्त हो जायेगा और जीवन रूपी दीपक बुझ जायेगा तो तू सदा के लिये सो जायेगा । अत: अभी समय रहते राम नाम का स्मरण कर लें ।

प्रश्न 4. "यह तन जालौं मसि करूँ, ज्यूँ धुवाँ जाइ सरग्गि ।
मति वै राम दया करैं, बरसि बुझावै अग्गि ।"

कबीर ने विरह की आग को बुझाने का निषेध क्यों किया है ?

उत्तर–कबीर चाहते हैं कि उनके विरह की अग्नि जलती रहे, क्योंकि जब तक इसका धुआँ स्वर्ग में ईश्वर के पास पहुँचेगा तो वे मुझे विरह में जलता देखकर शायद कृपा कर दें और अपनी कृपा वृष्टि करके मेरी इस अग्नि को स्वयं ही बुझा दें ।

प्रश्न 5. "पाणी ही तैं हिम भया, हिम ह्वै गया बिलाइ ।
जो कुछ था सोई भया, अब कछु कह्या न जाइ ॥"

इस कथन में संकेतित कबीर के दार्शनिक विचार को स्पष्ट कीजिए ।

उत्तर–प्रस्तुत साखी में कबीर ने आत्मा-परमात्मा की एकरूपता को पानी और पानी से निर्मित बर्फ के माध्यम से स्पष्ट किया है । कबीर कहते हैं कि आत्मा और परमात्मा एक ही तत्व है । आत्मा परमात्मा का ही रूप है । जैसे जल से बर्फ बनती है और बर्फ पिघल कर पुन: जल बन जाती है, वैसे ही आत्मा परमात्मा के अंश से ही बनती है और फिर शरीर के बन्धन से मुक्त होकर पुन: परमात्मा में ही लीन हो जाती है ।

प्रश्न 6. "कबीर चंदन का बिड़ा, बैठ्या आक पलास ।
आप सरीखे करि लिये, जे होते उन पास ॥"

इस कथन में 'चंदन' और 'आक-पलास' शब्दों का प्रतीकार्थ स्पष्ट कीजिये ।

उत्तर–यहाँ 'चन्दन' का प्रतीकार्थ है सज्जन या साधु लोग तथा 'आक-पलास' का प्रतीकार्थ दुष्ट या बुरे स्वभाव वाले लोग हैं ।

प्रश्न 7. कबीर ने ब्रह्म-परिचय के क्या लक्षण बताये हैं ?

उत्तर–कबीर के अनुसार जब मानव को ब्रह्म का परिचय होता है तो उसके हृदय में प्रेम का प्रकाश प्रस्फुटित हो जाता है, उसे योग का ज्ञान हो जाता है और उसके मन के सब संशय दूर हो जाते हैं । उस मानव के मुख से कस्तूरी की सुगन्ध महकने लगती है और उसके वचनों में भी सुगन्ध और माधुर्य व्याप्त हो जाता है ।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. गुरु से सम्बन्धित कबीर की साखियाँ पढ़ने पर आज के विद्यार्थी के मन में गुरु-विषयक क्या प्रतिक्रिया होगी ? कल्पना के आधार पर उत्तर दीजिए ।

उत्तर–कबीरदासजी ने गुरु को परमात्मा का ही स्वरूप माना है । उनके अनुसार गुरु ही हमें अज्ञान से प्रकाश की ओर ले जाता है, वही हमारे हृदय में ईश्वर प्रेम को उत्पन्न करता है । गुरु की कृपा के बिना हम ईश्वर को प्राप्त नहीं कर सकते । गुरु के प्रति कबीर

की यह धारणा उस युग के अनुसार थी, जब ज्ञान का स्रोत मात्र गुरु ही था, अन्य प्रकार के साधन या व्यवस्थाएँ समाज में उपलब्ध नहीं थे।

वर्तमान समाज में जहाँ शिक्षा के अनेक साधन, व्यवस्थाएँ, संस्थाएँ आदि विद्यमान है, तो विद्यार्थी के मन में गुरु के प्रति वह भावना नहीं रही जो कबीर और उसके युग के समाज में थी। आज के विद्यार्थी गुरु को एक वेतनभोगी कर्मचारी य ट्यूशन करने वाले व्यक्ति के रूप में भी देखते हैं तो गुरु का पद व सम्मान उनकी दृष्टि में स्वत: ही कम गरिमा का हो जाता है। फिर भी कुछ श्रेष्ठ संस्कार वाले विद्यार्थी आज भी गुरु को उसी दृष्टि से स्वीकार करते हैं जो कबीर के युग में थी क्योंकि यह बात सदैव सत्य है कि ज्ञान-विज्ञान चाहे जितनी उन्नति कर लें, परन्तु माता-पिता का स्थान सदैव वही रहेगा जो युगों से रहा है और यही बात गुरु के संदर्भ में भी लागू होती है।

प्रश्न 9. कबीर के काव्य की समालोचना निम्नांकित विचार-बिन्दुओं के आधार पर कीजिए—

(i) वर्ण्य-विषय (ii) प्रतीक एवं उपमान
(iii) रस-योजना (iv) भाषा।

उत्तर–कबीर निर्गुण काव्य परम्परा या संत काव्य धारा के श्रेष्ठतम कवि हैं। उनका काव्य साखी (दोहा) तथा पदों में है। इनकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नांकित बिन्दुओं में देखी जा सकती है—

(i) **वर्ण्य-विषय**–कबीर के काव्य का वर्ण्य-विषय कोई एक नहीं है। उसमें विषय वैविध्य मिलता है। अत: विषय की दृष्टि से कबीर के काव्य में सामाजिक आलोचना, प्रेम और भक्ति, आत्मा-परमात्मा, द्वैत-अद्वैत, नीति और धर्म, दर्शन, जीवन के अनुभव, योग दर्शन, ज्ञान, वैराग्य, मन, सदाचार, गुरु, ईश्वर आदि विभिन्न विषयों से संबंधित विचार समाहित हैं।

(ii) **प्रतीक एवं उपमान**–कबीरदासजी ने अपने काव्य में लोकप्रचलित उपमानों और प्रतीकों का ही प्रयोग किया है। इनकी साखियों में प्रतीकों की अधिकता पाई जाती है। इनके प्रतीक सांकेतिक और पारिभाषिक दोनों प्रकार के मिलते हैं। जैसे गगन मण्डल (ब्रह्मरन्ध्र), बंकनाल (सुषुम्ना नाड़ी), जल-मीन (आत्मा-परमात्मा) आदि प्रतीकों का प्रयोग इनके काव्य में पर्याप्त मिलता है। उपमान भी कबीर ने पारम्परिक एवं लोक-प्रचलित ही काम में लिए हैं।

(iii) **रस-योजना**–कबीर के काव्य का स्थायी भाव निर्वेद या शान्त है। अत: इनके काव्य में सर्वत्र शान्त रस की मन्दाकिनी प्रवाहित होती है। शान्त रस के अतिरिक्त इनके प्रेमात्मक रहस्यवाद में आत्मा और परमात्मा के प्रेम-प्रसंगों में श्रृंगार रस के वियोग पक्ष की सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है तथा कहीं-कहीं संयोग-श्रृंगार के उदाहरण भी मिलते हैं। इनके अतिरिक्त कबीर के काव्य में अद्‌भुत रस का समावेश भी हुआ है।

(iv) **भाषा**–कबीर की भाषा सधुक्कड़ी भाषा के नाम से जानी जाती है। उनकी भाषा में ब्रज, अवधी, बुंदेलखंडी, अरबी, फारसी आदि का मिश्रण है। इनकी भाषा आम बोलचाल की है, कबीर का ध्यान भावों की अभिव्यक्ति पर अधिक रहा है, भाषागत सौन्दर्य या चमत्कार पर बहुत कम, फिर भी उनकी भाषा में भाव सम्प्रेषणीयता का अभाव नहीं है।

डॉ. हजारी प्रसाद ने कहा है कि भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रूप में प्रकट करना चाहा है, उसे उसी रूप में भाषा से कहला दिया है।

कबीर की भाषा में संगीतात्मकता एवं गेयता का गुण समाविष्ट है। यद्यपि इनकी भाषा में नागरिकता का अभाव है तथापि सम्प्रेषणीयता का गुण सर्वत्र विद्यमान है। इनकी भाषा में अनगढ़पन पर्याप्त रूप में दिखाई देता है, फिर भी भाव योजना में पूर्णत: सामञ्जस्य पाया जाता है। निष्कर्ष रूप में यही कहा जा सकता है कि कबीर की भाषा सरल, लोक-प्रचलित, सम्बद्ध और ग्राह्य है, भले ही उसमें अनेक कमियाँ विद्यमान हैं, परन्तु भावाभिव्यक्ति की पूर्ण क्षमता विद्यमान है।

प्रश्न 10. निम्नलिखित अवतरण की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

"मन रे जागत...बार न होई।"

उत्तर–पाठ के व्याख्या भाग में पद संख्या एक की सप्रसंग व्याख्या देखिए।

अध्याय 5

रैदास

कवि परिचय–परम् संत रैदास (रविदास) का जन्म 15वीं या 16वीं शताब्दी में काशी के आस-पास माना जाता है। ये काशी में रहकर अपना पैतृक व्यवसाय चमड़े के जूते बनाने तथा बेचने का ही करते थे। इन्हें रामानन्द का ही शिष्य माना गया है। ये निस्पृह, संतोषी तथा उदार व्यक्ति थे। बचपन से ही इनका भगवान के प्रति लगाव था। वे प्राय: संतों की संगति में रहा करते थे। अपनी भक्ति भावना एवं परोपकारी व्यक्तित्व के कारण ये परम संत कहलाये।

संत रैदास का कोई प्रामाणिक ग्रंथ उपलब्ध नहीं होता है। इनके काव्य में आत्म-निवेदन बहुत सुन्दर और हृदयग्राही मिलता है। इन्होंने अपने आराध्य को निर्गुण रूप में ही मुख्य रूप से देखा है। इनकी भक्तिभावना पूर्णत: ईश्वर प्रेम में डूबी हुई है। अपने आराध्य के प्रति एकनिष्ठ प्रेम, आत्मसमर्पण और दृढ़ विश्वास रैदास के पदों में सर्वत्र देखने को मिलता है। इनका पद "प्रभु जी तुम चन्दन हम पानी" बहुत ही लोकप्रिय है जो इनकी भक्तिभावना के स्वरूप को भी प्रकट करता है।

रैदास के काव्य में कोई भाषायी चमत्कार न होकर सहजता और सुन्दर अभिव्यक्ति का गुण दिखाई देता है। इनकी भाषा में मुख्यत: ब्रज और अवधी का प्रयोग हुआ है साथ ही फारसी का प्रभाव भी परिलक्षित होता है।

पाठ-परिचय–प्रस्तुत पाठ में भक्त रैदास के संकलित पद उनकी भक्तिभावना, निष्काम भक्ति, द्वैत-अद्वैत, ज्ञान, वैराग्य आदि से संबंधित विचारधारा को प्रकट करते हैं। भक्त कवि रैदास ने कबीर, नामदेव आदि की भाँति अपने भावों को अपने पदों में व्यक्त

किया है । अपने आराध्य की शरण में ही अपने उद्धार की कामना की है । अन्त में साखियों के माध्यम से ईश्वर की भक्ति में दृढ़ आस्था और विश्वास को प्रकट किया है ।

व्याख्याएँ

(1)

1-4. बिनु देखे उपजै .... जपिसि अभागा ।

शब्दार्थ–देखे = देखे । दीसै = दिखाई देता है । बरन = वर्ण । निहकामु = निष्काम । परचै = परिचय । बिल्हाइ = अदृश्य या नष्ट होना । घ्रित = घी । रिदै = हृदय । कीन = किया ।

व्याख्या–भगवान की भक्ति संबंधी अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हुए परम् संत रैदास कहते हैं कि ईश्वर का रूप देखे बिना तो कोई आशा उत्पन्न नहीं होती है । जो दिखाई देता है वह विनाशशील होता है, जबकि ईश्वर अविनाशी होता है । अत: रैदास कहते हैं कि जो भगवान के नामाक्षर का जप करता है वही निष्काम भक्ति वाला योगी कहलाता है ।

रैदास कहते हैं कि जब कोई भक्त राम से परिचय या भेंट कर पाता है तो उसको उक्त दुविधा में नहीं पड़ना पड़ता, जैसे पारस पत्थर के स्पर्श के पश्चात् लोहा सोना बन जाता है, कोई संदेह शेष नहीं रह जाता है । ऐसे मुनि लोगों को मन की दुविधा नहीं होती है और वे बिना द्वार के ही त्रैलोक्य में व्याप्त हो जाते हैं । यदि कोई अपने मन या स्वभाव को शुद्ध अथवा संभु रूप प्रदान कर लेता है तो वह संसार में निर्भय हो जाता है ।

संत रैदास कहते हैं कि फलों के कारण ही वन प्रान्त प्रफुल्लित होता है और जब फल लग जाते हैं तो फूल गायब हो जाते हैं । इसी प्रकार भक्त लोग ज्ञान के लिए कर्म की अभिलाषा करते हैं और जब ज्ञान की प्राप्ति हो जाती है तो कर्म स्वत: ही समाप्त हो जाता है ।

सयाने लोग घी के लिए ही दही का मंथन करते हैं; वे जीवन से मुक्ति प्राप्त कर निर्वाण या मोक्ष को प्राप्त कर लेते हैं । रविदास कहते हैं कि हे परम वैरागी ! अपने हृदय में राम का नाम क्यों नहीं जपता, हे अभागे ! राम नाम जपने से ही मोक्ष की प्राप्ति होगी ।

विशेष–(1) कवि ने भक्ति के स्वरूप पर अपना मत प्रकट किया है ।

(2) राम नाम जपने से ही मुक्ति को संभव बताया है ।

(3) पद की भाषा सरल और आडम्बर रहित है ।

(2)

1-4. माधो भरम कैसे .... मुकत निधि कासी ।

शब्दार्थ–बिलाइ = नष्ट होना । जुदा = भिन्न । रजु = रस्सी । भुअंग = सर्प । पाहन = पत्थर । अज = अजन्मा ।

व्याख्या–ईश्वर के स्वरूप या आकार पर अपना मत प्रकट करते हुए रैदास कहते हैं कि हे माधव ! मेरे मन का भ्रम किसी भी प्रकार दूर नहीं होता है, मुझे अब भी द्वैतवाद से या भगवान के दो रूपों के भ्रम से मुक्ति नहीं मिल पायी है । जैसे सोने का कुण्डल और सूत का बना वस्त्र अलग-अलग होते हैं परन्तु एकाकार होने का भ्रम हो जाता है, रस्सी में सर्प होने का भ्रम हो जाता है, जल की तरंगों में जिस प्रकार पत्थर हिलता-

डुलता प्रतिबिम्बित होता है, अस्थिर दिखाई देता है वैसे ही मेरे मन में द्वैत और अद्वैत का भ्रम व्याप्त है। मैं ब्रह्म और जीव के विषय में इसी प्रकार भ्रमित हूँ।

रैदास कहते हैं कि परमात्मा का स्वरूप तो विमल और एकरस होता है जो उदय और अस्त या जन्म-मरण रहित होता है। वह विगत और अविगत से परे, कभी न घटने वाला तथा सर्वव्यापक होता है।

वह निश्चल, निराकार, अजन्मा, अनुपम और निर्भय होता है। परमात्मा का स्वरूप अगम, अगोचर, अक्षय (नष्ट न होने वाला) अतर्क, निर्गुण और अंत में आनन्द स्वरूप होता है।

परमात्मा ज्ञानातीत, अव्यक्त, निर्विकार और अविनाशी होता है। रैदास कहते हैं कि सहज शून्य और सत्य स्वरूप परमात्मा जीवन को मुक्ति प्रदान करने वाला है।

विशेष–(1) संत रैदास ने परमात्मा के निराकार स्वरूप की व्याख्या की है।

(2) भाषा पर फारसी का प्रभाव परिलक्षित होता है।

(3)

1-3. ज्यों तुम कारन केसवे......................................जानै सब कोई।

शब्दार्थ–लव = लौ, प्रेम। कामनी = नारी। ऊचरै = बताये। विथा = व्यथा। गोप = गुप्त, छिपा हुआ।

व्याख्या–भक्त रैदास ने परमात्मा से मिलन की सांसारिक बाधाओं का वर्णन करते हुए उनसे मिलन का उपाय भी यहाँ बताया है।

रैदास कहते हैं कि हे केशव! जिनके हृदय में तुम्हारे प्रति प्रेम की लगन लग गई है, उस अनुपम को अनुभव करने वाला हृदय वैरागी कैसे हो सकता है? इस जगत् में जो अभिमानी या अपने को चतुर समझने वाले लोग हैं, वे इस संसार में आपके स्वरूप या भक्ति को प्राप्त नहीं कर पाते, भले ही आपका सर्वव्यापी रूप है। वे ऐसे लोग हैं जो सर्वत्र जल की विद्यमानता होते हुए भी तृषित रहते हैं।

जिस प्रकार कामी पुरुष के हृदय में कामिनी को देखकर शूल उठते हैं और अनेक वेद-विधान करने पर भी उसकी व्यथा दूर नहीं होती है। रैदास कहते हैं कि जो जिसे चाहता है वह उसे मिलता है और उसका दुःख दूर होता है। भक्त रैदास कहते हैं कि यह कोई रहस्य नहीं है, इसे सब जानते हैं।

विशेष–(1) ईश्वर प्राप्ति के लिए अभिमान, काम, क्रोध, लोभ आदि विकारों को त्यागकर सच्चे मन से प्रेम और भक्ति की आवश्यकता पर बल दिया है।

(2) भाषा सरल और भाव प्रधान है।

(4)

1-3. संतों अनिन भगति......................................जो अनुरागी।

शब्दार्थ–अनिन=अनन्य। अपमारग=कुमार्ग। अस्थल=जगह।

व्याख्या–संत रैदास ने भक्ति के श्रेष्ठ रूप का वर्णन करते हुए इसके मार्ग में बाधक विकारों की ओर संकेत किया है। रैदास कहते हैं कि हे संतों! यह अनन्य भक्ति का स्वरूप नहीं है, जब तक मन पाँचों विकारों (काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह) में लिप्त

है, भक्ति नहीं हो सकती। ये विकार ही मानव-मन को हरि-चरणों से दूर करके कुमार्ग को ले जाते हैं और हर क्षण यह मन काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह की पूजा में लग जाता है।

रैदास कहते हैं कि सच्चा भक्त वही हो सकता है जो सत्य, स्नेह से अपने इष्ट की आराधना करता है और जगह-जगह भ्रमण कर जो कुछ मान-सम्मान से प्राप्त हो जावे उसी को पुत्र और पत्नी के लिए लाकर देता है।

भगवान के भक्त तो भगवान के सिवाय और किसी को नहीं जानते, वे अन्य को त्यागकर ईश भक्ति में अपने तन-मन को लगाये रखते हैं। रैदास कहते हैं कि वे ही भक्त निर्मल और श्रेष्ठ हैं जो रात-दिन भगवान से अनुराग करते हैं।

विशेष–(1) कवि ने पाँचों विकारों को त्यागकर सत्यनिष्ठा से भक्ति करने का उपदेश दिया है।

(2) छेकानुप्रास का स्वाभाविक प्रयोग हुआ है। भाषा सरल है।

(5)

1-4. गाइ गाइ अब का कहि..तत्व अब सोई।

शब्दार्थ–मुकति=मुक्ति। जासों=जिससे। परम तत्व=परमात्मा।

व्याख्या–कवि रैदास कहते हैं कि जब आत्मा परमात्मा को प्राप्त हो जाती है तब आशा या चेष्टा शेष नहीं रह जाती।

भक्त रैदास कहते हैं कि जब परमात्मा ही मेरे निकट है तो मैं गा-गाकर अब किसे पुकारूँ। जब तक इस शरीर में आशा का भाव शेष रहता है तब तक यह मन परमात्मा को पुकारता है और जब यह मन या आत्मा परमात्मा से मिलकर एकाकार हो जाती है तो तन की कोई आशा शेष नहीं रह जाती और न कोई गाने या पुकारने वाला शेष रह जाता है।

उक्त तथ्य के संदर्भ में उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कवि कहता है कि जब तक नदी समुद्र में नहीं समा जाती तब तक उसका घरघराहट का नाद गूँजता रहता है, परन्तु जैसे ही उसका समुद्र में समागम होता है तो यह पुकार स्वत: ही समाप्त हो जाती है। रैदास कहते हैं कि जब तक भक्ति और मुक्ति की कामना मन में रहती है तब तक तत्वज्ञ मुनि गाते रहते हैं, लेकिन जहाँ-जहाँ संसार में यह मन आशा रखता है वहाँ-वहाँ कुछ भी प्राप्त नहीं करता है। जब यह मन आशाओं को त्याग कर, निराश होकर परमात्मा की ओर उन्मुख होता है तब इसे सच्चा सुख प्राप्त होता है। रैदास कहते हैं कि वह परम तत्व ही सर्व आनन्द प्रदान करने वाला है।

विशेष–(1) कवि ने व्यक्त किया है कि सांसारिक आशाओं की समाप्ति पर ही परमात्मा की प्राप्ति संभव है।

(2) दृष्टान्त और अनुप्रास अलंकार स्वत: ही समाहित हो गये हैं।

(6)

1-3. सब कुछ करत..सुकृत को पावै!

शब्दार्थ–अकाम = निष्काम भाव। अनिल = पवन। तस = वैसा।

व्याख्या–रैदास कवि कहते हैं कि सब कुछ करते हुए भी उसको कैसे अभिव्यक्त किया जा सकता है, जैसे चन्द्रमा के गुणों को अनेक विधि से भी वर्णन नहीं

किया जा सकता । दर्पण में आकाश कैसे समा सकता है ? कोई पवन से अलिप्त कैसे रह सकता है ? पवन की गंध और आकाश का समुद्र में प्रतिबिम्ब दिखाई देता है ।

रैदास कहते हैं कि सब कार्यों का आरंभ निष्काम और निर्लिप्त भाव से होना चाहिए, विधिनिषिद्ध कार्य उचित नहीं है । यह पद जो व्यक्ति को कहते और सुनते हैं अथवा इसकी शिक्षा को जो जीवन में उतारते हैं, रैदास कहते हैं कि वे सुकृत को प्राप्त करते हैं या पुण्य के भागी होते हैं ।

विशेष–कवि ने निष्काम भाव से कर्म करने की महत्ता पर प्रकाश डाला है ।

(7)

1-3. चित सिमरनु करउ .... राजा राम मेरी ।

शब्दार्थ–सिमरनु = स्मरण । स्रवन = कान । राषउ = रखें । रसन = जिह्वा । सिउ = सिव । भाउ = भाव । वेनती = विनती । राषहु = रखें ।

व्याख्या–भक्त रविदास अपनी विनम्र प्रार्थना भगवान के चरणों में निवेदन करते हुए कहते हैं कि मेरा चित्त भगवान का स्मरण करे, नेत्र दर्शन करे, कान उनके सुयश का श्रवण करें, मन भ्रमर की तरह उनके गुणगान में लीन रहे तथा गोविन्द के चरण को हृदय में धारण करे और मेरी जिह्वा राम नाम रूपी अमृत शब्दों का उच्चारण करती रहे ।

कवि कहते हैं कि मेरा प्रेम भगवान गोविन्द और शिव के प्रति कम न हो, मैंने यह वस्तु (ईश भक्ति) बड़े महँगे दामों से प्राप्त की है । वे कहते हैं कि संतों की संगति के बिना हृदय में प्रेम भाव उत्पन्न नहीं होता है और भाव के बिना भक्ति नहीं होती है । भक्त रविदास कहते हैं कि हे भगवान गोविन्द ! हे शिव ! मेरी एक विनती है, मेरी लाज रखना, हे राजा राम मेरा उद्धार करना ।

विशेष–(1) भक्त हृदय की विनम्र प्रार्थना एवं उद्धार की कामना व्यक्त हुई है ।

(8)

1-3. दारिदु देषि सभको .... किआ उपमा दीजै ।

शब्दार्थ–सभ=सब । तुही=तुमही । किआ=क्या । दीजै=दी जावे । असट=अष्ट ।

व्याख्या–प्रस्तुत पद्यांश में भक्त रैदास ने परमात्मा के प्रति पूर्ण समर्पण एवं अपनी दशा को बनाने-बिगाड़ने वाले के रूप में प्रार्थना की है ।

रैदास कहते हैं कि हे प्रभु ! मेरी दरिद्रता को देखकर सब कोई हँसते हैं, मेरी ऐसी दशा हो गई है । हे राम ! आपकी कृपा से व्यक्ति के हाथों में आठों सिद्धियाँ भी आ जाती हैं । हे संसार के स्वामी राम ! आप सर्व ज्ञाता हैं, मैं कुछ नहीं जानता हूँ । मेरा यह जीव आपकी शरण में है, आप ही इसकी कामना पूर्ण करने वाले हैं । जो आपकी शरण में आ जाता है उसे कोई भार या भय नहीं रहता है । इस संसार के सब ऊँच-नीच प्राणी आपकी कृपा से ही पार उतरे हैं ।

रविदास कहते हैं कि हे प्रभु ! आपकी कथा तो अकथनीय है और अधिक क्या कहा जाय ? आपके समान तो आप ही हैं, आपको क्या उपमा दी जा सकती है ?

विशेष–(1) परमात्मा के सर्व शक्तिमान स्वरूप का वर्णन एवं विनम्र प्रार्थना है ।

(2) अन्तिम पंक्ति में अनन्वय अलंकार का सुन्दर प्रयोग हुआ है ।

साखी

1 से 3 : हरि सा हीरा...जन रैदास ।

शब्दार्थ–छाड़ि कै = त्यागकर । आन = अन्य । भगता = भक्त । घिन = घृणा ।

व्याख्या–भक्त रैदास कहते हैं कि जो व्यक्ति हरि के नाम रूपी हीरे को त्यागकर किसी अन्य की आशा करते हैं वे अवश्य यमलोक जायेंगे; रैदास यह सत्य बात कहते हैं ।

रैदास कहते हैं कि जिनके हृदय में रात-दिन राम का नाम रहता है, वे भक्त भगवान के ही समान और उन्हें काम, क्रोध आदि विकार व्याप्त नहीं होते ।

जिन पापियों को देखने से ही घृणा उत्पन्न होती है और जिनका नरक कुण्ड में निवास है, उनका भगवान की प्रेमाभक्ति से ही उद्धार हो सकता है, यह बात रैदास प्रकट रूप से कहते हैं ।

विशेष–(1) रैदासजी ने भगवान की भक्ति के महत्त्व को प्रतिपादित किया है ।

(2) दोहा छंद का प्रयोग हुआ है एवं भाषा प्रसाद गुण युक्त है ।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

नोट–सही उत्तर का क्रमाक्षर दाहिनी ओर के कोष्ठक में लिखिये—

प्रश्न 1. "जल तरंग पाहन प्रतिमा ज्यों, ब्रह्म जीव दुति ऐसा ।"

इस कथन के अनुसार रैदास किस दार्शनिक विचारधारा के समर्थक प्रतीत होते हैं—

उत्तर–(ख) विशिष्ट अद्वैतवाद ।

प्रश्न 2. "जैसे कामी देखि कमिनी, हृदय सूल उपजाई ।
कोटि वेद विधि ऊचरै, बाकी विथा न जाई ॥"

इस कथन से रैदास ने क्या प्रकट किया है ?

उत्तर–(ग) आन्तरिक व्यथा बाह्य उपाय से नष्ट नहीं होती ।

प्रश्न 3. "जब लग नदी न समंद समावै, तब लग बढ़ै हंकारा ।
जब मन मिल्यौ राम सागर सों, तब यह मिटी पुकारा ॥"

इस कथन से जीव और ब्रह्म में कैसा संबंध व्यंजित है ?

उत्तर–(क) तादात्म्य का सम्बन्ध ।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 4. "साध संगति बिन भाउ नहीं उपजै, भाव बिन भगति होइ नहीं तेरी ।"

इस कथन में 'साध संगति' और 'भाव' तथा 'भाव' और 'भक्ति' में किस प्रकार का संबंध बताया गया है ?

उत्तर–भक्त रैदास के अनुसार साधुओं की संगति मानव हृदय की बुराइयों को दूर करके उनमें ईश्वर प्रेम के भाव उत्पन्न करती है । भाव उत्पन्न होने के पश्चात् ही मानव ईश्वर भक्ति में संलग्न होता है और अन्ततः मुक्ति को प्राप्त करता है ।

प्रश्न 5. "घ्रित कारन दधि मथै सइआन, जीवत मुकत सदा निरवान।"

रैदास के अनुसार जीवन मुक्ति कैसे प्राप्त की जा सकती है ?

उत्तर–मानसिक विकारों को त्याग कर सच्चे मन से ईश-भक्ति करके ही मुक्ति प्राप्त की जा सकती है, ऐसा भक्त रैदास का मत है।

प्रश्न 6. "कनक कुण्डल सूत पट जुदा, रजु भुअंग भ्रम जैसा।
जल तरंग पाहन प्रतिमा ज्यों, ब्रह्म जीव दुति ऐसा।"

इस कथन में रैदास ने भ्रम का आधार किसे माना है ?

उत्तर–इस कथन में रैदास के भ्रम का आधार द्वैतवाद है। उसे परमात्मा के स्वरूप में द्वैत स्वरूप का भ्रम होता है।

प्रश्न 7. "तू जानत मैं किछु नहीं, भव तू षंडन राम।
सगल जीअ सरनागति, प्रभु परिपूरन काम॥"

रैदास की भक्ति किस प्रकार की थी ?

उत्तर–भक्त रैदास की भक्ति दास्य भाव की थी। उनकी भक्ति में पूर्ण समर्पण, एकनिष्ठा और विश्वास की भावना थी।

प्रश्न 8. "जैसा तू वैसा तुही किआ उपमा दीजै।"
इस कथन में कौनसा अलंकार है ?

उत्तर–इस कथन में अनन्वय अलंकार है।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 9. रैदास के काव्य की निम्नांकित के आधार पर समालोचना कीजिए—

(i) भक्ति का रूप (ii) आराध्य का रूप
(iii) भाषा (iv) काव्य-रूप।

उत्तर–संत-परम्परा के कवियों में रैदास कवि का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन्होंने अपने हृदय की भक्ति भावना को सामान्य पद्य भाषा में स्वाभाविक रूप में व्यक्त किया है। उक्त बिन्दुओं के आधार पर इनके काव्य को निम्नलिखित प्रकार से समझा जा सकता है—

(i) भक्ति का रूप–रैदास की भक्ति में पूर्ण समर्पण भाव है, एकनिष्ठ प्रेम और आस्था एवं विश्वास है। कवि ने परमात्मा के निराकार स्वरूप को अपना आराध्य स्वीकारा है। परमात्मा की कृपा को ही अपना सर्वस्व मानकर रैदास ने अपनी मुक्ति की कामना की है। इनकी भक्ति में विनय, प्रार्थना और समर्पण का भाव सर्वत्र परिलक्षित होता है। प्रस्तुत पद्य इसी भाव को प्रकट करता है—

"प्रभु जी तुम चन्दन हम पानी, जाकी अंग-अंग बास समानी।
....ऐसी भगति करे रैदासा।"

(ii) आराध्य का रूप–रैदास के आराध्य सर्वशक्तिमान् परमात्मा हैं जो निराकार हैं। रैदास ने उन्हें गोविन्द, राजाराम, सिव आदि नामों से भी पुकारा है। रैदास विशिष्ट अद्वैतवाद में विश्वास करते थे। इनके अनुसार जीव ब्रह्म से मिलकर एकाकार हो जाता है और मुक्ति की अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

(iii) भाषा–रैदास के काव्य की भाषा साधारण बोलचाल की ब्रज भाषा है, जिस पर अवधी का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। कहीं-कहीं फारसी के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। इनकी भाषा में सहजता का गुण व्याप्त है। प्रसाद गुण की प्रधानता है तथा

अलंकारों का कहीं-कहीं स्वाभाविक समावेश हो गया है। भाषा में चमत्कार या आडम्बर कहीं नहीं है।

(iv) **काव्य-रूप**–रैदास का काव्य भक्त की भावना की पद्यमय अभिव्यक्ति है। इसमें कहीं अलंकारिकता, चमत्कार या विद्वता का प्रदर्शन नहीं है। कवि ने साधारण भाषा में अपने हृदय के भावों को अभिव्यक्त किया है। विशेष रूप से गेय पदों तथा दोहा छंद के माध्यम से कवि ने अपनी बात कही है।

प्रश्न 10. रैदास के काव्य की सामान्य विशेषताएँ क्या हैं ? सोदाहरण स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–प्रश्न संख्या 9 में रैदास के काव्य की विशेषताओं का वर्णन किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त रैदास के काव्य के विषय में यही कहा जा सकता है कि इनका काव्य भक्ति काव्य की श्रेणी में आता है। इसका भाव पक्ष ही प्रबल है, कला पक्ष की दृष्टि से रैदास का काव्य इतना सशक्त नहीं है।

भक्त रैदास के काव्य में तत्कालीन संत काव्य का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। कबीर, नामदेव आदि की भाँति रैदास ने भी परमात्मा से अपने उद्धार की कामना की है। जीव और ब्रह्म के तादात्म्य पर अपना मत प्रकट किया है।

भाषा की दृष्टि से काव्य में प्रचलित भाषा का ही प्रयोग हुआ है, कोई अनूठापन या अतिरिक्त विशेषता इसमें नहीं है। कवि की साधारण भाषा उनके भावों को पूर्णतया अभिव्यक्त करने में सक्षम रही है। काव्य शास्त्र सम्बन्धी चमत्कार इसमें नहीं है।

अध्याय 6

मलिक मोहम्मद जायसी

कवि परिचय–हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्तिकाल की प्रेममार्गी शाखा के जायसी प्रतिनिधि कवि हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने हिन्दी साहित्य की त्रिवेणी—तुलसी, सूर, जायसी में इनको स्थान दिया है। शुक्लजी की मान्यता है कि जायसी के समय भारतीय जनता 'राम और रहीम' की एकता को स्वीकार कर चुकी थी। इस समय तक हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरे से बहुत परिचित हो गये थे। इसकी अभिव्यक्ति ही जायसी के काव्य में हुई है।

उनके तीन ग्रन्थ मिलते हैं—पद्मावत, अखरावट तथा आखिरी कलाम। जायसी की 'आखिरी कलाम' पुस्तक में दिये गये 900 हिजरी के अनुसार उनका जन्म सन् 1492 के लगभग ठहरता है। वे वर्तमान उत्तर प्रदेश के जायस नामक स्थान के रहने वाले थे, इसी से उन्होंने अपना उपनाम जायसी रख लिया था। 'पद्मावत' नामक महाकाव्य में जायसी ने प्रेम की पीर, लोकव्यवहार का प्रशस्त रूप तथा आध्यात्म की गूढ़ व्यंजना की है। रानी पद्मावती तथा राजा रतनसेन की प्रेम-कथा के माध्यम से उन्होंने सूफी तथा भारतीय चिन्तन धाराओं का समन्वय किया है तथा जीवन में सच्चे प्रेम का महत्त्व प्रतिपादित किया है।

कवित्व और भाव-व्यंजना की दृष्टि से 'पद्मावत' अप्रतिम है । पद्मावती का सौन्दर्य वर्णन, नागमती का विरह वर्णन, रतनसेन का साहस-त्याग-शौर्य वर्णन कतिपय ऐसे स्थल हैं जिनमें जायसी का काव्य कौशल चरम पर है । सर्वत्र शैली की प्रौढ़ता और गम्भीरता है । जायसी की काव्य भाषा अवधी है तथा उन्होंने दोहा-चौपाई शैली में काव्य रचना की है ।

पाठ परिचय–संकलित अंश 'पद्मावत' महाकाव्य के 'मानसरोदक खण्ड' का प्रारम्भिक अंश है । कवि ने यहाँ पद्मावती का सखियों सहित मानसरोवर के जल में स्नान, विविध क्रीड़ाओं आदि का सुन्दर वर्णन किया है । पद्मावती और उसकी सखियों का मानसरोवर में जाना, जल में उतरना, क्रीड़ाएँ करना, मधुर वार्तालाप करना तथा प्रकृति के सुन्दर दृश्यों का अंकन भी कवि ने पूर्ण कुशलता के साथ किया है । बीच-बीच में कवि ने लौकिक प्रसंग के साथ-साथ अलौकिक या पारलौकिक की ओर भी संकेत किया है ।

मानसरोदक खण्ड

(1)

''एक दिवस .... परिमला मोद ।''

कठिन शब्दार्थ–पूनो = पूर्णिमा, अन्हाई = नहाने, सुकेत = केतकी, बकौरि = बाकवली, बकचुन = गुच्छा, बोलसरि = मोलसिरी, नागेसिर = नागकेसर, गंध्रप = भौरेल (गंधर्व), परिमलामोद = सुगन्ध के आनन्द में ।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्यांश जायसी द्वारा रचित 'पद्मावत' महाकाव्य के 'मानसरोदक खण्ड' से अवतरित है । इसमें जायसी पद्मावती एवं उसकी सखियों के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए कहते हैं कि–

व्याख्या–एक दिन पूर्णिमा की तिथि आई और पद्मावती मानसरोवर के जल में नहाने चली । उसने अपने साथ नहाने के लिये सारी सखियों को बुलाया । जब उन्हें पद्मावती ने बुलाया तो ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो पूरी की पूरी फुलवारी ही उसके पास आ गई हो । जायसी ने उन सखियों का विभिन्न फूलों के रूप में वर्णन करते हुए लिखा है कि उनमें कोई चम्पा, कोई कुंद, कोई केतकी, कोई करना, कोई रस बेल की भाँति थी । कोई लाल गुलाल या सुदर्शन जैसी थी । कोई गुल बकावली के गुच्छों के समान बिहँसती थी । कोई मोलसिरी की भाँति पुष्पों से लदी थी, कोई जाति और कोई यूथिका एवं सेवती के फूलों की भाँति थी । कोई सोनजरद, कोई केसर के समान थी, कोई हरसिंगार और नागकेशर जैसी थी । कोई कूंजा के फूल, कोई हजारा, गैंदा और कोई चमेली जैसी थी । कोई कदम्ब या सुन्दर रसबेल जैसी थी ।

इस प्रकार वे सब सखियाँ मालती के साथ चलीं मानो कमल के साथ कोकाबेली फूली हों । इनके सौन्दर्य से सर्वत्र आनन्द का वातावरण बन गया । उनके सुन्दर सौरभ से भौंरों के समूह वहीं बिंध गये अर्थात् गंधर्वगन भी इनके सौन्दर्य से मोहित हो उठे ।

विशेष–(1) पद्मावती एवं उसकी सखियों की सुन्दर पुष्पों की उपमा बहुत सुन्दर बन पड़ी है ।

(2) अवधी भाषा का मूल रूप प्रयुक्त हुआ है ।

(3) चौपाई एवं दोहा छंद है तथा उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग हुआ है ।

(2)

''खेलत मानसरोवर...जनम निबाह ।

कठिन शब्दार्थ–खेलि = क्रीडा, नैहर = पीहर (पिता का घर) तथा यह लोक, सासुर = ससुराल (परलोक), गौनव = जायेंगी, काली = कल, कित = कहाँ, जिउ = प्राण, निबाह = निर्वाह ।

प्रसंग–उक्त पद्य खण्ड 'पद्मावत' के मानसरोदक खण्ड से अवतरित है, जिसमें जायसी ने पद्मावती और उसकी सखियों की मधुर किन्तु गम्भीर वार्ता को प्रस्तुत किया है—

व्याख्या–जायसी कहते हैं कि पद्मावती अपनी सखियों के साथ खेलते-खेलते स्नान करने के लिये मानसरोवर पर जा पहुँची और जाकर सरोवर की पाल पर खड़ी हो गई। सरोवर की सुन्दरता को देख कर अपने आनन्द का भाव उन्होंने हँसी-मजाक एवं खेल के बहाने प्रस्तुत किया। तब पद्मावती से उसकी सहेलियाँ कहने लगीं कि हे रानी! यह बात मन में विचार कर देखो, यहाँ पिता के घर चार दिन का रहना है। जब तक पिता का राज है, जो खेलना चाहो आज मन भर कर खेल लो अर्थात् जब तक पिता की देखभाल में हम हैं तब तक ही खेलने-खाने की छूट है। फिर कल हम सब ससुराल चली जायेंगी। फिर कहाँ हम और कहाँ यह सरोवर की पाल? फिर आना अपने हाथ कहाँ और कहाँ एक साथ खेलना? सास और ननद बोलियों की मार से प्रांण ले लेंगी और कठोर ससुर आने न देंगे। कहने का तात्पर्य यह है कि ससुराल चले जाने पर इस तरह खेलना आदि नहीं हो पायेगा और वहाँ पर कठोर ससुर का अनुशासन इस तरह का होगा कि वह भी हमें यहाँ आने नहीं देगा।

वैसे ससुराल में पति का प्रेम इन सबसे ऊपर होता है लेकिन वह भी न जाने कैसा व्यवहार करेगा। इस सम्बन्ध में कुछ भी निश्चित नहीं है। हम अभी क्या कह सकते हैं कि वह हमें सुख से रखेगा या दुःख से। न जाने हमारे जीवन का निर्वाह कैसे होगा।

विशेष–(1) जायसी सूफी मत को मानने वाले थे, जहाँ परमात्मा का स्वरूप प्रियतमा या पत्नी के रूप में माना गया है और साधक को पति या प्रेमी रूप में माना गया है। इस काव्यांश में पद्मावतो, परमात्मा रूप में है और मानसरोवर की अद्वितीयता व अलौकिकता इसी अर्थ में है।

(2) यहाँ समासोक्ति का निर्वाह बहुत स्वाभाविक एवं सुन्दर रूप में हुआ है।

(3) इस पद्यांश में नारी जीवन की वास्तविकता का जो चित्र प्रस्तुत किया गया है, वह बहुत अनूठा है।

(4) नैहर और ससुराल का लौकिक और पारलौकिक अर्थ भी प्रकट होता है।

(3)

''सरवर तीर पदुमिनी...लहरैं देइ ॥''

कठिन शब्दार्थ–खौंपा = बालों का जूड़ा, अरधानी = सुगन्ध, राहौं = राहू, दसन = दाँत, कुच = स्तन, मिसु = बहाने।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्य में पद्मावती के मानसरोवर में स्नान करने के समय उसके खुले हुए आंगिक सौन्दर्य का वर्णन किया गया है।

व्याख्या—सरोवर के किनारे पर स्नान करने के लिये पद्मावती आई। उसने केशों का बँधा हुआ जूड़ा खोल दिया। उस समय रानी पद्मावती का मुख चन्द्रमा के समान लग रहा था तथा अंग-अंग मलयगिरी के समान था। उसके शरीर पर खुले हुए बाल ऐसे लग रहे थे, मानो सर्पनियों ने अपने शरीर को ढक लिया हो। उसके सघन केश ऐसे लग रहे थे, मानो बादल घिर आये हों अथवा राहू ने चन्द्रमा की शरण ले ली हो जिससे छाया हो

गई हो। उसके मुख का तेज देखकर दिन में सूर्य लज्जित हो गया और छिप गया तथा पद्मावती रूपी चन्द्रमा अपनी सखियों रूपी नक्षत्रों के साथ रात्रि में उदित हुआ। इससे चकोर पक्षी भी भ्रम में पड़ गया और वह पद्मावती के मुख को ही चन्द्रमा समझ बैठा और अपनी दृष्टि उसके मुख की ओर लगा ली, क्योंकि उसे फैली हुई केश-राशि के बीच पद्मावती का मुख ऐसा लगा जैसे बादलों की घटा में चन्द्रमा दिखाई पड़ रहा हो। उसके दाँत बिजली की तरह चमक रहे थे और बोलना कोयल की भाँति था, उसकी भौंहें ऐसी लग रही थीं, जैसे आकाश में इन्द्रधनुष पड़ गया हो। दोनों नेत्र-खंजन की तरह क्रीडा कर रहे थे अर्थात् अपनी चंचलता का आभास करा रहे थे। उसके स्तन नारंगी की तरह सुन्दर लग रहे थे, जिनके ऊपर काला हिस्सा ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो भौंरा रसपान कर रहा हो।

जायसी कहते हैं कि उसके सौन्दर्य को देखकर मानसरोवर भी मोहित होकर प्रसन्नता के साथ हिलौरें लेने लगा। कवि कल्पना करते हुए कहता है कि वह इस उद्देश्य से हिलौरें ले रहा था कि ऐसी सौन्दर्य की देवी का चरणों का स्पर्श तो शायद मिल जाये।

विशेष—(1) पद्मावती के सौन्दर्य और पावस के सौन्दर्य की एकरूपता बहुत प्रभावशाली बन पड़ी है।

(2) मानसरोवर के हिलौरें लेने की तथ्यात्मकता की कल्पना से पद्मावती के चरण स्पर्श तक ले जाना एक कल्पनाशील एवं भावुक कवि के लिये ही संभव है।

(3) समासोक्ति से पद्मावती के अद्वितीय एवं अलौकिकता का संकेत दिया गया है।

(4)

"घरीं तीर सब...दोसर जल माँह।"

कठिन शब्दार्थ—हुलसी = प्रसन्न या उल्लासमय होना, करिल = काले, बिसहर = विषधर सर्प, दारिवँ = दाड़िम, अनार, कुई = कुमुदनी, सरग = आकाश।

प्रसंग—प्रस्तुत पद्यांश में मानसरोवर में पद्मावती और उसकी सखियों के स्नान का वर्णन किया गया है।

व्याख्या—सबने अपनी चोलियाँ और साड़ियाँ उतार कर किनारे पर रख दीं। तब वे बालाएँ स्नान के लिये सरोवर में पानी में उतरीं। तब वे पानी का स्पर्श पाकर बहुत प्रसन्न हुईं तथा अनेक तरह की काम क्रीड़ाएँ करने लगीं। पानी के बीच वे ऐसी उल्लसित हुईं, जैसे कलियों में बसंत का आगमन हो गया हो। उनके काले केश पानी के ऊपर इस प्रकार तैर रहे थे मानो जहरीले सर्प लहरें ले रहे हों और कमलों का मुख चुम्बन करने के लिये आकांक्षी हो रहे हों। उनके अधर और स्तन ऐसे थे मानो अनार-और अंगूर में कोंपल आई

हो। वह सरोवर पद्मावती और सखियों के सौन्दर्य के वशीभूत होकर संसार में फूला नहीं समा रहा था क्योंकि उन्हें स्नान करते हुए देखकर ऐसा लगता था जैसे स्वयं चन्द्रमा ही तारागणों को साथ लेकर उस सरोवर में स्नान करने आया हो।

उस चन्द्रमुखी पद्मावती को नहाती हुई देखकर चकवी भी भ्रमवश अपने चकवे से बिछुड़ गई और वियोग में विलाप करने लगी कि हे प्रियतम! आप कहाँ मिलेंगे क्योंकि रात्रि में तो एक चन्द्रमा आकाश में दिखाई पड़ता है और दिन में यह दूसरा जल में दिखाई देता है। कहने का अर्थ यह है कि दिन में चन्द्रमा के अस्त हो जाने से चकवा-चकवी मिल जाते हैं लेकिन अब वे कैसे मिल पायेंगे। दिन का चन्द्रमा यह पद्मावती जो है।

विशेष–(1) उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, भ्रान्तिमान अलंकारों की वर्णनी शैलियों का प्रयोग कर कवि ने अपनी कल्पना का वैभव दिखलाया है।

(2) चकवा और चकवी की काव्य रूढ़ि भी परम्परा से चली आ रही है।

(3) दाड़िम और द्राक्षा की अरुणिमा में रंगबोध स्पष्ट है।

(5)

''लागीं केलि करै..फुलाएल तेल।''

कठिन शब्दार्थ–मँझ = मध्य, बीच, तराइन = तारों, पेमा = प्रेम, रौताई = ठकुराई, हैकड़ी, कूसल = कुशल, फुलाएल = फुलेल, सुगन्धित तेल।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्यांश जायसी कृत 'पद्मावत' के मानसरोदक खण्ड के उस प्रसंग से लिया गया है, जिसमें पद्मावती सखियों के साथ स्नान के लिये मानसरोवर में उतरती है और वहाँ एक खेल खेलती है।

व्याख्या–सभी सखियाँ सरोवर में अनेक तरह की क्रीड़ाएँ करने लगीं, जिनके कौशल एवं सौन्दर्य में लज्जित होकर हंस भी किनारे पर आकर बैठ गये। इसके बाद उन्हें एक खेल खेलने की सूझी, जिसमें उन सखियों ने पद्मावती को अपनी बराबरी का न समझ अर्थात् अपने से सौन्दर्य एवं कौशल में ज्यादा बड़ा समझ खेल से अलग रखते हुए कहा कि तुम तो ससि के समान हो और हम तारागणों की तरह, अतः तुम हमारे खेल की साक्षी

रहो। उसके बाद उन्होंने खेल की शर्त रखी कि जो खेल हार जायेगा, उसे अपना हार देना पड़ेगा। ऐसी शर्त रखकर उन्होंने खेल आरम्भ किया। जायसी आगे कहते हैं कि पहले उन्होंने अपनी-अपनी जोड़ी बनाई, जोड़ी बनाते समय साँवरे रंग की बाला ने साँवरे रंग की बाला के साथ और गोरे रंग की बाला ने गोरे रंग की बाला के साथ अपनी-अपनी जोड़ी बनाई और चेतावनी देते हुए यह घोषणा की कि सभी को बहुत ध्यान से यह खेल खेलना चाहिए और इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि कहीं ऐसा न हो कि गले का हार किसी दूसरे के पास चला जाये। यह खेल तो बस आज का ही है, बाद में यह खेल होने वाला नहीं है और एक बार खेल समाप्त हो जाने पर फिर खेल खेलने का अवसर नहीं मिलता। उसका जीवन धन्य है जो ऐसे खेल को प्रेम के साथ खेलता है। ठकुराई और कुशलता दोनों साथ-साथ नहीं रह सकते अर्थात् खेल में ठकुराई दिखाने में खेल की भावना समाप्त हो जाती है।

जायसी कहते हैं कि प्रेम की बाजी लगाकर मन चाहे उस तरह का खेल खेला जा सकता है । वे उदाहरण देते हुए कहते हैं कि जिस तरह तिलों को फूलों के साथ रख देने से फूलों की सुगन्ध तेल में मिल जाती है उसी तरह के खेल के साथ प्रेम को मिला देने से खेल भी प्रेममय हो जाता है और खेल का आनन्द बढ़ जाता है ।

विशेष–(1) प्रेम की महत्ता को स्थापित किया गया है ।

(2) 'रउताई औ कुसल खेमा'—लोकोक्ति जैसी है ।

(3) रूपक, समासोक्ति, उत्प्रेक्षा और दृष्टान्त का सफल निर्वाह किया गया है ।

(6)

"सखी एक तेइँ .... काहू हाथ ।"

कठिन शब्दार्थ–कासों = किससे । सैं हाथाँ = अपने हाथों से । पाउबि = पाना । पैसारू = प्रवेश (छुटकारा) । भोरी = भोली । पौनु = हवा । हेरि = ढूँढ़ना । बूड़ि = डुबकी लगाकर ।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्यांश में जायसी ने मानसरोवर में जलक्रीड़ा के माध्यम से प्रेम मार्ग की कठिनता को बतलाया है । प्रेम मार्ग पर चलना आसान काम नहीं है । इसके लिए बहुत साधना और सोच-विचार की आवश्यकता है ।

व्याख्या–उन सब सखियों के बीच खेल शुरू हो गया लेकिन एक सखी ऐसी थी, जो उस खेल को नहीं जानती थी । वह जल्दी ही अपना मणियों का हार गँवा बैठी और गुम हो जाने से व्याकुल हो गई । वह कमल नाल को पकड़ कर अपना जीवन बचा सकी और पुकार-पुकार कर कहने लगी कि अब मैं अपना हार किससे लूँ । मेरा हार कहाँ गया । वह कहने लगी कि मैं इन सबके साथ खेलने क्यों आई, जो मुझे अपना हार गँवाकर घर खाली हाथ लौटना पड़ेगा । घर में प्रवेश करते ही हार के विषय में पूछा जायेगा तब मैं क्या उत्तर दूँगी, जिससे घर में प्रवेश कर सकूँ । उसकी नेत्र रूपी सीपियों में आँसू भरे थे, वे आँसू ढलते हुए ऐसे बिखर रहे थे मानो मोती बिखर रहे थे । तब अन्य सखियाँ समझती हुई कहने लगीं कि, 'हे भोली कोकिला, पानी का कौनसा बुलबुला है जिसमें हवा नहीं मिली अर्थात् खेल में ऐसा हो जाता है तुम उस जल में थोड़ी देर और रहकर ढूँढ़ लेती । ठीक है जो हार खो देता है वह ऐसे ही रोता है । यदि वह खो गया है, तो उसे स्वयं ढूँढ़ो और हम सबसे ढूँढ़वा लो । ऐसा कहकर अन्य सखियाँ उसे विश्वास बँधाती हैं ।

यह कहकर उन सब सखियों ने एक साथ सरोवर में डुबकी लगा-लगाकर ढूँढ़ने लगीं । जिसमें किसी के हाथ मोती लगा और किसी के हाथ घोंघा ही लगा ।

विशेष–(1) प्रेम मार्ग में कठिनाइयाँ आती हैं ।

(2) जीवन संघर्षमय है, लेकिन रास्ता निकाला जा सकता है । उसके लिए धैर्य और श्रम की आवश्यकता है ।

(3) उपमा, रूपक एवं उत्प्रेक्षा की वर्णन प्रणालियों से जायसी अपनी बात को कलात्मक रूप प्रदान करते हैं ।

(7)

"कहा मानसर चहा .... जोति नग हीर ।"

कठिन शब्दार्थ–निरमर = निर्मल । तेन्ह = उसके । पुत्रि = पुण्य । भै = हुई । हीर = हीरा ।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्य खण्ड जायसी के 'पद्मावत' महाकाव्य के मानसरोदक खण्ड से अवतरित है। इसमें जायसी ने पद्मावती के दिव्य स्वरूप का चित्रण करते हुए कहा है।

व्याख्या–कवि मलिक मोहम्मद जायसी कहते हैं कि मानसरोवर ने कहा, "जिसे मैंने चाहा था उसे पा लिया। पारस रूप पद्मावती मेरे समीप तक आ गई, अर्थात् पारस पत्थर के स्पर्श से लोहा स्वर्ण बन जाता है उसी प्रकार उसके चरण छूकर मैं निर्मल हुआ और उसके रूप का दर्शन करके मैंने भी रूप पाया है। उसके शरीर से मलय वायु की सुगन्ध मुझे मिली जिससे मैं शीलत हुआ और मेरी जलन शान्त हो गई। वह कहता है कि मुझे पता नहीं कि मेरे ऐसे कौनसे पुण्यों का फल है और यह भी मालूम नहीं कि जाने कौन सी हवा इस दिव्य गंध को यहाँ तक ले आई है, जिससे मेरी दशा पवित्र हो गई और सारे पाप नष्ट हो गये हैं। जब मानसरोवर ऐसा अनुभव कर रहा था तभी उसी क्षण खोया हुआ हार वेग के साथ पानी की ऊपरी सतह पर दिखाई दिया। सखियों ने उसे उठा लिया। यह कौतुक देख पद्मावती बहुत प्रसन्न हुई। पद्मावती रूपी चन्द्रमा को देखकर कुमुदिनी रूप सखियाँ बहुत प्रसन्न हुईं और उस दिव्य रूप को जहाँ जिसने उसे देखा वह उसी रूप का हो गया। कहने का अर्थ यह है कि उस समय वहाँ सभी को दिव्यानुभव हुआ। इतना ही नहीं उस समय जैसा सब चाहते थे वैसे रूप उन्होंने पाये। शशि मुख पद्मावती के लिए सब पदार्थ दर्पण बन गये अर्थात् वह जिसकी ओर देखती थी उसी में अपने रूप की परछाई डालती थी।

उस अलौकिक रूप पद्मावती को जिसने देखा वे कमल बन गये। शरीर की छाया से निर्मल जल हो गया। उसे हँसते हुए जिसने देखा वे हंस हो गये। दाँतों की ज्योति हीरा नग बन गई। इन सब वस्तुओं ने दर्पण की भाँति पद्मावती के अंगों का प्रतिबिम्ब ग्रहण किया। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रकृति के सभी रूपों की उत्पत्ति उसी दिव्य ज्योति से हुई है।

विशेष–(1) समासोक्ति का जैसा निर्वाह इन अंशों में हुआ है, वैसा अन्यत्र नहीं है और कई स्थलों पर तो ऐसा लगता है कि प्रस्तुत अर्थ से अप्रस्तुत अर्थ अधिक प्रमुख हो गया है।

(2) रहस्यवादी अर्थ की यहाँ प्रधानता हो गई है। मानसरोवर साधक का प्रतीक है और पद्मावती परमात्मा का।

(3) उक्त पद्य में दोहा और चौपाई छन्द का प्रयोग हुआ है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

नोट—सही उत्तर का क्रमाक्षर दाहिनी ओर के कोष्ठक में लिखिए—

प्रश्न 1. "पद्मावती सब सखीं बोलाई। जनु फुलवारि सबै चलि आई।"
पद्मावती की सखियों को फुलवारी से उपमित क्यों किया गया है ?

उत्तर–(ख) वे विभिन्न प्रकार के फूलों जैसी थीं।

प्रश्न 2. सरवर रूप बिमोहा, हियँ हिलोर करेइ।
पाय छुवै मकु पावौं, तेहि मिसु लहरें देइ॥

इन पंक्तियों में कौन-सा अलंकार प्रयुक्त है ?

उत्तर–(ख) उत्प्रेक्षा।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. "चकई बिछुरनि पुकारै, कहाँ मिलहु हो नाँह ।
एक चाँद निसि सरग पर दिन दोसर जल माँह ॥"

चकवा से चकवी के बिछुड़ने का क्या कारण था ?

उत्तर—साहित्यिक परम्परा में यह माना जाता है कि चकवा और चकवी बहुत प्रेमी जल पक्षी होते हैं । ये चन्द्रमा को देखकर रात्रि में एक दूसरे से बिछुड़ जाते हैं और दिन में मिल जाते हैं । यहाँ मानसरोवर में एक चन्द्रमा तो रात्रि को आकाश में दिखाई देता है और दूसरा पद्मावती रूपी चन्द्रमा दिन में सरोवर में प्रकट हो जाता है । ऐसी स्थिति में बेचारी चकवी अपने प्रियतम से रात और दिन सदा के लिए ही बिछुड़ जाती है ।

प्रश्न 4. "सखी एक तेइँ खेल न जना ।
चित अचेत भइ हार गँवाना ।"

खोये हुए हार को ढूँढ़ने के लिए सखियों ने जब जल में डुबकियाँ लगाईं तब उनके हाथों में क्या-क्या आया ?

उत्तर—जब सखियों ने हार ढूँढ़ने के लिए मानसरोवर में डुबकियाँ लगाईं तो किसी के हाथ मोती लगा और किसी के हाथ घोंघा, सीपी आदि लगे ।

प्रश्न 5. "भा निरमर तेन्ह पायन परसें । पावा रूप रूप के दरसें ।"

जायसी ने किस उद्देश्य से पद्मावती का यह अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णन किया ?

उत्तर—मलिक मुहम्मद जायसी पद्मावती के अनुपम सौन्दर्य को शब्दों में अभिव्यक्त करके पूर्णत: सन्तुष्ट नहीं थे । अत: उन्होंने उसके सौन्दर्य की अनुपमता को यह कहकर ऊँचाई प्रदान करना चाहा कि उस सुन्दर मानसरोवर को भी पद्मावती के रूप का स्पर्श करने से सौन्दर्य या रूप प्राप्त हुआ ।

प्रश्न 6. "जब लगि अहै पिता कर राजू ।
खेलि लेहु जो खेलहु आजू ।"

इस कथन में किस सामाजिक व्यवस्था के प्रति असंतोष व्यंजित है ?

उत्तर—पद्मावती और उसकी सखियों के उक्त कथन में हमारी वैवाहिक व्यवस्था के प्रति असंतोष व्यक्त हुआ है । कवि ने यहाँ यह कहना चाहा है कि पुत्री को पिता के घर में जो सुख, स्वतन्त्रता और खेलने-कूदने के अवसर प्राप्त होते हैं, वे सब ससुराल में नहीं मिल पाते । हमारे समाज में बहू और बेटी में अन्तर किया जाता है । बहू को घर की सेविका या दासी की तरह भी व्यवहार किये जाने की घटनाएँ देखी जाती हैं । इसी व्यवस्था के प्रति असंतोष उक्त कथन में दिखाई देता है ।

निबंधात्मक प्रश्न—

प्रश्न 7. "कहुँ सुख राखै को दुख दहुँ कस जनम निबाह ।" पद्मावती की सहेली की उपर्युक्त चिन्ता पर आधुनिक युग की युवती की क्या प्रतिक्रिया होगी ? कल्पना के आधार पर उत्तर दीजिए ।

उत्तर—पद्मावती की सहेली की उपर्युक्त चिन्ता तद्युगीन परिस्थितियों के आधार पर है । वर्तमान युग में परिस्थितियाँ उक्त संदर्भ में और भी जटिल हो गई हैं । आज दहेज को आधार बनाकर युवतियों के साथ जो अत्याचारपूर्ण व्यवहार समाज कर रहा है, वह

किसी से छिपा हुआ नहीं है । अत: आज की युवती उपर्युक्त चिन्ता को और अधिक गम्भीरता से लेते हुए अपने भविष्य के बारे में अधिक चिन्तित होगी । वह विचार करेगी कि तत्कालीन समाज में जब पद्मावती जैसी राजकुमारी की सखियाँ ही ससुराल के विषय में इतनी चिन्तित थीं तो आज तो स्थिति बहुत विकराल रूप धारण कर चुकी है । आज की युवती तो सुख-दु:ख की ही नहीं अपने अस्तित्व या जीवन की चिन्ता करने लगेगी । ससुराल में बहुओं को जला देना, दहेज के लिए बेघर कर देना आदि अनेक अत्याचारों को दृष्टिगत रखते हुए आज की युवती सामान्यत: अधिक चिन्तित होगी । कुछ युवतियाँ जो अत्यन्त जागरूक, स्वावलम्बी और निर्भीक स्वभाव की हैं वे इस विषय में अवश्य निश्चिन्त रहेंगी क्योंकि वे पढ़ी-लिखी युवतियाँ समाज में अपने स्थान को पहचानती हैं, वे अपने अधिकारों और कर्त्तव्यों के प्रति सजग हैं, वे पुरुष पर ही सब प्रकार से आश्रित नहीं हैं; अत: उनकी इस विषय पर प्रतिक्रिया भिन्न प्रकार की ही होगी ।

प्रश्न 8. जायसी के काव्य की समालोचना निम्नांकित के आधार पर कीजिए—

(i) विषय-वस्तु (ii) काव्य-रूप (iii) रूप-सौन्दर्य (iv) भाषा ।

उत्तर—मलिक मुहम्मद जायसी हिन्दी के भक्तिकालीन साहित्य की प्रेमाश्रयी शाखा के प्रतिनिधि कवि हैं । इन पर सूफी मत का प्रभाव है । भारतीय संस्कृति और इतिहास की घटना को आधार बनाकर इन्होंने 'पद्मावत' महाकाव्य की रचना की जिसमें भारतीय समाज और परम्पराओं का सुन्दर चित्रण हुआ है ।

(i) विषय-वस्तु–'पद्मावत' में चित्तौड़ के राजा रतनसेन और सिंहलद्वीप की राजकुमारी पद्मावती के प्रेम और विवाह का चित्रण हुआ है । अलाउद्दीन खिलजी के साथ रतनसेन का युद्ध, नागमती का विरह वर्णन तथा अन्त में दोनों रानियों के सती होने का वर्णन भी इस महाकाव्य की प्रमुख घटनाएँ हैं । 'पद्मावत' का पूर्वार्द्ध कल्पित तथा उत्तरार्द्ध इतिहास पर आधारित है । कवि ने लौकिक कथा के साथ-साथ सूफी मत की परम्परानुसार अलौकिक की ओर भी संकेत किया है ।

(ii) काव्य-रूप–'पद्मावत' महाकाव्य में एक प्रबन्ध काव्य की सभी विशेषताएँ देखी जा सकती हैं । इसका क्या संगठन, वर्णनात्मक पक्ष, कल्पना वैभव, मर्मस्पर्शी स्थलों की योजना, प्रकृति चित्रण, विरह-वर्णन, भाषा, शैली, अलंकार योजना, छंद योजना आदि सभी तत्व मिलकर इसे एक श्रेष्ठ कोटि के प्रबन्ध काव्य की श्रेणी में स्थान प्रदान करते हैं । पद्मावत भाव पक्ष और कला पक्ष दोनों ही दृष्टियों से एक सशक्त और सुन्दर प्रबन्ध काव्य है ।

'पद्मावत' का प्रेम खण्ड, नख-शिख वर्णन, युद्ध वर्णन, विरह वर्णन, पद्मावती गोरा-बादल संवाद खण्ड, सिंहल द्वीप वर्णन, मानसरोवर वर्णन आदि अनेक ऐसे स्थल हैं जो इसे श्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य के रूप में प्रतिष्ठित करते हैं ।

(iii) रूप-सौन्दर्य–'पद्मावत' की नायिका पद्मावती है । कवि ने पद्मावती का जैसा रूप-सौन्दर्य वर्णन किया है वैसा साहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है । पद्मावती का नखशिख वर्णन 'पद्मावत' महाकाव्य की अनमोल निधि है । हीरामन तोता द्वारा पद्मावती का रूप-सौन्दर्य राजा रतनसेन के समक्ष तथा राजा रतनसेन [illegible]

पद्मावती के समक्ष हीरामन ने जिस प्रकार किया है वह अद्वितीय है । अत: यह कहा जा सकता है कि मलिक मुहम्मद जायसी ने नारी रूप-सौन्दर्य वर्णन में अपनी अद्भुत कला का परिचय दिया है ।

(iv) **भाषा**–'पद्मावत' महाकाव्य में जायसी ने ठेठ अवधी भाषा का प्रयोग किया है, फिर भी अवधी के ठेठ रूप में ही इन्होंने जितना माधुर्य और सौन्दर्य भरा है वह अद्भुत है । जायसी ने अपनी भाषा में सरसता का समावेश भी यथासंभव किया है । सरसता के साथ-साथ भावमयता भी जायसी की भाषा में विद्यमान रही है । पद्मावत में विभिन्न रसों का समावेश होने के कारण भाषा में प्रसाद, ओज और माधुर्य तीनों गुणों को रसानुकूल रूप में देखा जा सकता है ।

जायसी के काव्य में रहस्यवादी भावना के निरूपण में पारिभाषिक और प्रतीकात्मक शब्दों का प्रयोग भी देखा जा सकता है । इनकी भाषा में चित्रात्मकता एवं बिम्ब विधान का गुण भी समाविष्ट है । नाद सौन्दर्य भी जहाँ-तहाँ भाषा में विद्यमान है । अत: कहा जा सकता है कि जायसी की भाषा में वे भी गुण विद्यमान हैं जो एक प्रबन्धकार की भाषा में अपेक्षित हैं ।

प्रश्न 9. 'मानसरोदक खण्ड' के आधार पर जायसी के काव्य की विशेषताएँ सोदाहरण लिखिये ।

उत्तर–मलिक मुहम्मद जायसी द्वारा रचित 'पद्मावत' महाकाव्य का 'मानसरोदक खण्ड' एक महत्त्वपूर्ण भाग है । इस खण्ड में कवि ने वय-सन्धि को प्राप्त पद्मावती और उसकी सहेलियों के मानसरोवर में स्नान का सुन्दर वर्णन किया है । कवि ने मानसरोवर की सुन्दरता के साथ-साथ सखियों के संग पद्मावती के सौन्दर्य द्वारा सरोवर की सुन्दरता में चार चाँद लगा देने का अद्भुत वर्णन किया है । इस खण्ड में कवि ने सरस और मधुर भाषा का प्रयोग किया है । इसमें काव्य का प्रसाद और माधुर्य गुण विद्यमान है । भाषा की सरसता के साथ-साथ भावात्मक माधुर्य भी इसमें विद्यमान है । अलंकारों में उपमा, उत्प्रेक्षा, प्रतीप, अनुप्रास आदि का सौन्दर्य दृष्टव्य है । छंद की दृष्टि से सम्पूर्ण काव्य में एकरूपता है अर्थात् चौपाई और दोहा छंद का प्रयोग हुआ है । इस प्रकार कला पक्ष की दृष्टि से 'मानसरोदक खण्ड' बहुत सुन्दर और सरस बन पड़ा है ।

जायसी ने 'मानसरोदक खण्ड' में मधुर भावों के साथ-साथ हमारे समाज की परम्पराओं एवं परिस्थितियों का भी चित्रण किया है । पद्मावती की सखियों का ससुराल के बारे में सोचकर चिन्तित होना कि वहाँ पता नहीं सुख मिले या दु:ख, हमारी सामाजिक स्थिति का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करता है । कवि ने कुछ संकेत अलौकिक या परलोक की ओर भी किये हैं । कर्मानुसार फल की प्राप्ति का संकेत भी सखियों द्वारा डुबकी लगाकर मोती, घोंघा आदि हाथ लगने के प्रसंग में दिया गया है । कवि ने प्रेम मार्ग की कठिनता का संकेत खेल में एक सखी द्वारा हार गँवा बैठने की घटना से दिया है ।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि 'मानसरोदक खण्ड' पद्मावत का महत्त्वपूर्ण अंश है जो कल्पना पर आधारित होते हुए भी महाकाव्य की कथा से जुड़ा हुआ तथा सौन्दर्यवर्धक प्रसंग है ।

अध्याय 7

सूरदास

कवि परिचय–महाकवि सूरदास भक्तिकाल के कृष्णाश्रयी शाखा के अनन्यतम कवि हैं । इनका जन्म सीही नामक ग्राम में 1478 ई. के लगभग माना जाता है । सूरदास जन्मांध थे या बाद में हुए, इस विषय में विद्वानों में मतैक्य नहीं है । सूरदास बल्लभाचार्य के शिष्य बने । इन्होंने भगवान कृष्ण की लीला-वर्णन में असंख्य पदों की रचना की । इन पदों में साख्य भक्ति भाव के अतिरिक्त माधुर्य, वात्सल्य जैसे भावों की अधिकता है । डॉ. दीनदयाल गुप्ता ने सूरदास के 25 ग्रन्थों की सूचना दी है, किन्तु 'सूरसागर' और 'साहित्य लहरी' इनकी श्रेष्ठ रचनाएँ हैं । साहित्य लहरी में सूरदास के कूटपद संकलित हैं तथा सूरसागर में भगवान कृष्ण की लीला के पद संकलित हैं जिनका आधार भागवत् की कथा है ।

सूरदास यों तो भक्त कवि हैं और उनके आराध्य भगवान कृष्ण हैं, परन्तु वात्सल्य वर्णन में वे अद्वितीय हैं । सूरदास के बाल-लीला के पदों को पढ़कर अनुमान लगाया जा सकता है कि बाल मनोविज्ञान का एक अंधे व्यक्ति को कितना सूक्ष्म ज्ञान हो सकता है । सूरदास ने भक्ति के साथ शृंगार को जोड़कर संयोग और वियोग शृंगार का बहुत ही सजीव चित्रण किया है । कृष्ण की रासलीलाओं का सूर ने बहुत ही मनमोहक वर्णन कर साहित्य को समृद्ध बनाया है ।

सूरदास का 'भ्रमर गीत' एक उपालम्भ काव्य है जिसमें कवि ने निर्गुण ब्रह्म का खण्डन कर सगुण ब्रह्म की उपासना का पक्ष प्रस्तुत किया है । कृष्ण-वियोग में ब्रज नारियों की विरह-व्यथा का प्रभावपूर्ण कवि ने अपने 'भ्रमर गीत' में वर्णन किया है । सूरदास की भाषा साहित्यिक और परिमार्जित ब्रज भाषा है । इनके पद गेय हैं जिन्हें विभिन्न राग-रागनियों के माध्यम से गाया जा सकता है ।

पाठ-परिचय–प्रस्तुत पाठ में संकलित प्रथम तीन पद बाल-लीला से सम्बन्धित हैं । चौथा पद कृष्ण की मुरली से गोपियों के स्रोत भाव को प्रकट करता है । पाँचवें और छठे पद में संयोग शृंगार तथा अन्तिम छः पद वियोग-वर्णन से सम्बन्धित हैं । सभी पद गेयता लिये हुए हैं ।

बाल-लीला

(1)

जसौदा हरि..भामिनि पावै ।

शब्दार्थ–निदरिया = नींद । बेगि = शीघ्र । सैन = संकेत । इहि अन्तर = इसी बीच । भामिनि = पत्नी ।

प्रसंग–प्रस्तुत पद "सूरदास" के पदों से लिया गया है, इसमें सूरदासजी ने भगवान श्रीकृष्ण की बाल लीला को दर्शाया है । यशोदा माँ द्वारा भगवान श्रीकृष्ण को पालने में झुलाती है उसका वर्णन करते हुए सूरदासजी कहते हैं कि—

व्याख्या–यशोदा कृष्ण को पालने में झुला रही हैं। वे उन्हें हिलाती हैं, दुलराती हुई मल्हारती हैं तथा जैसा-तैसा कुछ गाती हैं। यशोदा गाती हुई कहती है कि मेरे लाल को नींद आ जाये। हे नींद ! तू हमारे लाल को जल्दी आकर क्यों नहीं सुलाती ? तू जल्दी क्यों नहीं आती, तुझे कृष्ण बुला रहे हैं। कभी भगवान पलकें बन्द कर लेते हैं, कभी होंठ फड़फड़ाने लगते हैं। उन्हें सोता हुआ समझकर यशोदा मौन होकर अन्य लोगों को इशारे से बताती है कि अभी कन्हैया सो रहा है, तुम सब चुप रहो नहीं तो यह जाग जायेगा। इसी बीच भगवान व्याकुल हो उठे और यशोदाजी पुनः मधुर गीत गाने लगती हैं। सूरदासजी कहते हैं कि जो सुख देवताओं और मुनियों को भी दुर्लभ है उसे नन्द-पत्नी (यशोदा) प्राप्त कर रही है।

विशेष–(1) प्रस्तुत पद में सूरदास ने बाल-चित्रण करने में अपनी कुशलता का परिचय दिया है।

(2) प्रस्तुत पद में स्वभावोक्ति अलंकार का प्रयोग हुआ है।

(2)

मैया, मैं तो..सुमंगल गैहौं ॥

शब्दार्थ–लैहों = लूँगा। धरनी = पृथ्वी। सुरभी = गाय। बेनी = चोटी।

व्याख्या–बालक कृष्ण अपनी माँ से चाँद रूपी खिलौना माँगते हुए हठ करने लग जाते हैं। वे कहते हैं कि हे माता ! मैं तो यह चाँद ही लूँगा। यदि तू यह चाँद मुझे खेलने को नहीं देगी तो मैं धरती पर लोट जाऊँगा और तेरी गोद में नहीं आऊँगा। मैं गाय का दूध भी नहीं पीयूँगा और चोटी भी नहीं गुँथवाऊँगा। मैं अब नन्द बाबा का ही बेटा बनूँगा, तुम्हारा पुत्र नहीं कहलाऊँगा। कृष्ण की इस प्रकार की बातें सुनकर यशोदा माता उसे प्रलोभन देती हुई कहती है कि हे पुत्र ! तू आगे आ और मेरी बात सुन, यह बात तू बलराम को भी मत बताना। यशोदा माता हँसती हुई कृष्ण को समझाते हुए कहती है कि मैं तुझे नई दुल्हनियाँ दूँगी। यह सुनकर बालक कृष्ण प्रसन्न हो जाते हैं और माता यशोदा से कहते हैं कि माता यशोदा तेरी सौगन्ध, मेरी बात सुन मैं अभी विवाह करने जाऊँगा। सूरदास कहते हैं कि इस विवाह में कुटिल बराती बनकर मंगल गीत गायेंगे।

विशेष–(1) प्रस्तुत पद में कवि ने बाल सुलभ हठ और स्वभाव की विशेषताओं को प्रकट किया है।

(2) वात्सल्य रस से पूर्ण गेय पद है और ब्रज भाषा का सरल रूप प्रयुक्त हुआ है।

(3)

मैया बहुत बुरो..मिले सखाऊ ॥

शब्दार्थ–मौंड़ा = लड़के। हाऊ = हौवा (भय का प्रतीक)। हौं = मैं। थरसि = स्तम्भित होना। साऊ = साहु।

प्रसंग–प्रस्तुत पद सूरदास की बाल लीलाओं से संकलित है। इसमें श्रीकृष्ण माँ यशोदा से बलादाऊ की शिकायत कर रहे हैं।

व्याख्या–कृष्ण माता यशोदा से शिकायत करते हुए कहते हैं कि हे माता ! बलभद्र बड़ा दुष्ट है। वह वन में कहने लगा कि बड़ा सुन्दर तमाशा है, सब लोग मिलकर आओ। मुझे भी पुचकार कर वहीं ले गया जहाँ झाऊ का सघन वन था। फिर वहाँ से यह

कह कर भाग गया कि 'हउआ' काट खायेगा। मैं डर से काँप रहा था और रो रहा था, लेकिन कोई भी धीरज नहीं बँधाता था। इस तरह श्रीकृष्ण अपनी विवशता बताते हुए कहते हैं कि मैं डर से स्तम्भित हो गया इसलिए भाग भी नहीं सका। वे आगे-आगे भागते चले जा रहे थे। मुझसे कहते हैं कि तू चोर है और बलदाऊ अपने को साहु कहते हैं। बलदाऊ तो दुष्ट है ही वैसे ही, उससे मित्र भी मिल गये हैं।

विशेष–(1) सूरदासजी ने बाल सुलभ छेड़छाड़, चिढ़ाने, बहकाने आदि की प्रवृत्ति का सुन्दर चित्रण किया है।

(2) पद में ब्रज भाषा का माधुर्य एवं गेयता का गुण समाहित है।

मुरली महिमा

मुरली स्यामहिं..बहुत बढ़ाई ॥

शब्दार्थ–मूंड = शिर। मुँह लाई = मुँह लगाया। बस्य = वश में।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद में सूरदासजी ने गोपियों के हृदय में मुरली के प्रति उत्पन्न सोतिया डाह का सुन्दर चित्रण किया है। गोपियाँ कृष्ण की मुरली से ईर्ष्या करती हुई कहती हैं कि कृष्ण ने ही इस मुरली को सिर पर चढ़ा रखा है। वे कृष्ण न जाने क्यों बार-बार इसे होठों पर धारण करके घमण्ड करा रहे हैं। जब से कृष्ण ने इसे मुँह लगाया है तब से यह किसी को कुछ गिनती ही नहीं है। न मालूम यह मुरली और क्या करने वाली है, हमें तो कोई भलाई नजर नहीं आती है। इसने कृष्ण को अपने वश में कर लिया है और हमारी शत्रु बन गई है। हे भाई ! कृष्ण तो इतना कुछ हो जाने पर भी इसे अच्छी ही मानते हैं।

विशेष–(1) नारी स्वभाव का सहज चित्रण यहाँ हुआ है।

संयोग-श्रृंगार

1. हरि-मुख..गुन जात बखाने ॥

शब्दार्थ–निरखत = देखते हुए। ढिग = पास। सिलीमुख = भ्रमर। मकरन्द = शहद। रसनिधि = रस का सागर। नागर = चतुर।

सप्रसंग व्याख्या–कृष्ण को देखकर एक गोपिका अपनी सुध-बुध खो बैठती है और दूसरी सखी से कहती है कि हे सखी ! हरि के मुख को देखकर हमारी आँखें ठगी-सी रह गई हैं। ये अपनी सुध-बुध भूल गयी हैं। हमारे नेत्र तो भौंरे के समान कमल रस के लोभी हैं, अतः कृष्ण के कमल रूपी मुख को देखा तो भौंरे रूपी हमारी आँखें उड़ नहीं पायीं। जिस प्रकार भ्रमर कमल के रस पान के लालच में वहीं ठगा-सा रह जाता है, वहाँ से हट नहीं पाता उसी प्रकार हमारे नेत्र रूपी भौंरे कृष्ण के मुख-कमल को देखकर वहीं निर्निमेष ठगे से रह गये। मकराकृति के कुण्डल कृष्ण के कपोलों के समीप लटकते हुए ऐसे सुशोभित होते हैं मानो सूर्य उनके समीप रात्रि का समय बिताने के लिए आया हो। श्याम वर्ण वाले कृष्ण के कपोल श्याम वर्ण हैं और चमकते हुए कुण्डल रवि के समान दीप्तमान। दोनों का संयोग मानो रात्रि और सूर्य का संयोग है। कृष्ण की भौंहें अत्यन्त सुन्दर हैं उनके नेत्रों की गति को देखकर, नेत्रों की चंचलता को देखकर खंजन पंक्षी और मछली भी लज्जित हो गये हैं। चंचलता और सुन्दरता में मीन और खंजन भी उन कृष्ण के नेत्रों की समानता नहीं कर सकते, इसीलिए लज्जित हो गये हैं। श्रीकृष्ण के अधर लाल हैं और दाँत करोड़ों बज्र की चमक के समान अत्यन्त चमकीले हैं। श्याम-शरीर में ये दाँत और अधर

चन्द्रमा और बादल की समानता करते हैं। उस सुन्दर मुख पर पड़ी हुई घुँघराली बालों की लटें ऐसी शोभित होती हैं मानो भौंरे कमल का रस-पान करके उड़ रहे हों। कृष्ण के मस्तक पर सुन्दर तिलक है, गले में मोतियों की माला है और मणियों से जड़े हुए सुन्दर आभूषण हैं। सूरदासजी कहते हैं कि रस के सागर उन चतुर कृष्ण के गुणों का बखान कैसे किया जा सकता है अर्थात् कृष्ण का रूप अवर्णनीय है।

विशेष–(1) कृष्ण के रूप सौन्दर्य को अलंकारिक रूप से प्रस्तुत किया है।

(2) उत्प्रेक्षा, उपमा, रूपक, अनुप्रास आदि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

2. बूझत स्याम .... राधिका भोरी ॥

शब्दार्थ–बूझत = पूछते हैं। खीरी = गली। ब्रजतन = ब्रज तक। पौरी = घर का बरामदा। स्रवननि = कानों से। ढोटा = पुत्र। जोरी = जोड़ी। भुरइ = भोली बन गई।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्य में सूरदासजी ने राधा-कृष्ण के मिलन का वर्णन किया है।

व्याख्या–भगवान कृष्ण जब प्रथम बार राधा को देखते हैं तो पूछते हैं कि हे गौरी ! तुम कौन हो ? कहाँ रहती हो ? किसकी बेटी हो ? तुम्हें ब्रज की गलियों में तो कभी नहीं देखा। इस पर राधा कृष्ण से कहती है कि मैं ब्रज में किसलिए आऊँ, अपने द्वार पर खेलती रहती हूँ। सुना है कि यहाँ नन्दजी का बेटा श्रीकृष्ण रहता है जो दही की चोरी करता फिरता है। कृष्ण कहते हैं कि मैं तुम्हारा क्या चुरा लूँगा, आओ साथ मिलकर खेलने चलें। सूरदासजी कहते हैं कि रसिक शिरोमणि कृष्ण ने भोली राधा को अपनी बातों से ही फुसला लिया।

विशेष–(1) कवि ने राधा-कृष्ण के प्रथम परिचय को बड़े सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है।

(2) कृष्ण का रसिक रूप प्रकट हुआ है।

(3) पद में भावानुकूल माधुर्य एवं गेयता विद्यमान है।

वियोग-वर्णन

1. अँखियाँ हरि-दरसन .... लैहों कासी ॥

शब्दार्थ–कमलनैन = कृष्ण। गर = गले। काहू = किसी। कोउ = कोई। लैहों = लूँगा। दरस = दर्शन।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्य में सूरदासजी ने कृष्ण ब्रज छोड़कर मथुरा चले जाते हैं, तो गोपियाँ उनके वियोग में व्याकुल हैं, का वर्णन किया है।

व्याख्या–गोपियाँ श्रीकृष्ण के चले जाने पर अपने वियोग की दशा का वर्णन करती हुई कहती हैं कि आँखें कृष्ण के दर्शन के लिए प्यासी हैं, वे कमल के समान नयन वाले कृष्ण को देखना चाहती हैं इसीलिए रात-दिन उदास रहती हैं। हे उद्धव, वृन्दावन के वासी (श्रीकृष्ण) केसर का तिलक लगाये हुए और मोतियों की माला पहने हुए एक दिन हमारे आँगन में आये और गले में प्रेम की फाँसी देकर चले गये अर्थात् वियोग की असह्य पीड़ा देकर चले गये। किसी के मन को कोई क्या जाने ? लोगों के मन हँसी ही रहती है। सूरदासजी कहते हैं कि (गोपियाँ कहती हैं) कृष्ण तुम्हारे दर्शन के लिए काशी में करवट व्रत ले लूँगी।

विशेष–(1) गोपियों की मार्मिक वाणी में उनकी विरहावस्था का चित्रण हुआ है।

(2) कृष्ण का रूप-सौन्दर्य और गोपियों के मन में उनका प्रेम चित्रित है।

(3) विप्रलम्भ शृंगार और भक्तिरस का मिश्रित भाव है।

2. प्रीति करि काहु...नीर बह्यो ॥

शब्दार्थ–अलिसुत = भ्रमर। जलसुत = कमल। सारंग = मृग। नाद = स्वर। नीर बह्यो = अश्रु बह रहे हैं।

प्रसंग–उपर्युक्त पद्यांश में सूरदासजी श्रीकृष्ण के वियोग में गोपियों की वेदना का वर्णन करते हुए कहते हैं कि—

व्याख्या–प्रेम करके किसी ने सुख प्राप्त नहीं किया। प्रेम करने वाले सब दु:ख ही भोगते हैं। पतंगे ने दीपक से प्रेम किया तो अपने प्राणों को जला दिया। भ्रमर ने कमल से प्रेम किया और उसमें अपने को बन्द करवा लिया। भ्रमर जब सायंकाल कमल के कोष पर बैठकर रसपान करता है और यदि उसी समय सूर्यास्त हो जाये तो कमल की पंखुड़ियाँ बन्द हो जाने पर वह उसमें ही बन्दी हो जाता है। मृग ने नाद से प्रेम किया जिसके कारण उसे सम्मुख ही बाण सहना पड़ा। हिरण के शिकारी वाद्य बजाकर हिरण को मोहित कर लेते हैं और फिर बाण के द्वारा हिरण को मार देते हैं। हमने जो श्रीकृष्ण से प्रेम किया तो उन्होंने चलते समय कुछ नहीं कहा, इस वियोग वेदना का तो वर्णन करना असम्भव है। सूरदासजी कहते हैं कि (गोपियाँ कहती हैं कि) हम कृष्ण के बिना दु:ख पाती हैं और नेत्रों से आँसू बहते रहते हैं, प्रेम करके दु:ख ही उठाया है।

विशेष–(1) कवि ने यहाँ इस तथ्य को प्रकट किया है कि प्रेम में पीड़ा ही अधिक मिलती है, सुख कम।

(2) दृष्टान्त और अनुप्रास अलंकार का सहज प्रयोग हुआ है।

(3) भावानुकूल भाषा और गेयता का गुण विद्यमान है।

3. संदेसनि मधुवन...पलक कपाट अरे ॥

शब्दार्थ–कूप = कुएँ। पठवत = भेजना। कै = अथवा। मसि = स्याही। सर दव = सरकंडे के वन की आग (दावाग्नि)। अरे = अड़े हुए, बन्द।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्य में गोपियों द्वारा कृष्ण को भेजे गये संदेशों का वर्णन किया है, जब उनके पत्रों का कोई जवाब नहीं आता तो गोपियाँ कहती हैं कि—

व्याख्या–संदेशों से मधुवन के कुयें भर गये अर्थात् हम उन्हें कई पत्र (संदेश) भेज चुकी हैं। कृष्ण अपने संदेश तो भेजते ही नहीं, हमारे संदेशों का उत्तर भी नहीं देते। जितने पथिकों को मधुवन भेजा उन्होंने लौटकर कोई खबर न दी। पता नहीं या तो श्रीकृष्ण ने उन्हें सिखा-पढ़ाकर समझा लिया इसलिए नहीं आये अथवा वे बीच में ही (रास्ते में ही) मर गये। बादलों के कारण कागज गल गए, स्याही समाप्त हो गई या सरकंडे के जंगल की आग में जल गए। इस प्रकार गोपियाँ संदेश प्राप्त न होने के कई कारण बताती हैं और कहती हैं कि लिखने वाला सेवक सूर अंधा है, उसके पलक रूपी किवाड़ बन्द हैं, सूर ज्ञानरहित है, तभी तो पत्रोत्तर नहीं आ पाता। इस प्रकार गोपियाँ वियोग में अपने दु:ख को प्रकट करती हैं।

विशेष–(1) कवि ने गोपियों की विरह वेदना को मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है।

(2) गोपियों के मन में कृष्ण के प्रति उपालम्भ के साथ-साथ अनेक आशंकाएँ भी पथिकों के विषय में उत्पन्न होती हैं।

(3) विप्रलम्भ शृंगार का सुन्दर वर्णन है।

4. बिलगि जनि मानहु..गुन न्यारे ॥

शब्दार्थ–बिलगि = बुरा। मनियारे = मणिधारी, काला सर्प। माट = मटका। काढ़ै = निकाले। पखारे = धोए। कालिन्दी = यमुना।

प्रसंग–जब गोपियों को उद्धव निर्गुण ब्रह्म का उपदेश देते हैं तो गोपियाँ उद्धव से कहती हैं कि—

व्याख्या–हे प्यारे उद्धव ! हमारी बातों का बुरा मत मानो। तुम हमें जो ज्ञान-योग सिखाने आये हो, उसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है, क्योंकि जहाँ से तुम आये हो, वह मथुरा काजल की कोठरी है। इसीलिए वहाँ से जो भी आता है, काला ही होता है। तुम काले हो, अक्रूर भी काले हैं और उधर से उड़कर आने वाले भ्रमर भी घोर काले हैं। इन सब काले लोगों के साथ कमल के समान नेत्रों वाले कृष्ण मणिधारी सर्प के समान शोभा पा रहे हैं। उन्होंने हमें डसकर अपने विरह रूपी विष से व्याकुल बना रखा है।

तुम सब लोगों को देखकर ऐसा प्रतीत होता है, मानो तुम सब नीले रंग से भरे हुए एक मटके में पड़े थे और किसी ने तुम सबको उसमें से निकाल कर यमुना में धोकर साफ करने का प्रयत्न किया था इसलिए यमुना का जल भी नीला हो गया है। उन काले लोगों के गुण ही निराले होते हैं।

विशेष–(1) गोपियों के कथन में व्यंग्य और उपहास का पुट है। कृष्ण-वियोग की वेदना भी इसमें छिपी हुई है।

(2) गोपियों की वाक्-विदग्धता का सुन्दर उदाहरण है।

5. निरगुन कौन देस..मति नासी ॥

शब्दार्थ–सौंह = सौगन्ध। बरन = वर्ण, रंग। गाँसी = कपट की बात। ठग्यो सौ ठगा हुआ सा, स्तम्भित। नासी = नष्ट हो गई।

प्रसंग–प्रस्तुत पद सूरदासजी द्वारा रचित है। गोपियाँ उद्धव द्वारा निर्गुण ब्रह्म का उपदेश देने पर उसकी हँसी उड़ाती हुई, उद्धव से निर्गुण का परिचय प्राप्त करने के लिए कुछ प्रश्न पूछती हैं।

व्याख्या–हे भ्रमर ! तुम यह बताओ कि निर्गुण किस देश का निवासी है। हम तुम्हें शपथ देकर पूछती हैं सही-सही समझाकर बताओ। इसमें हँसने की कोई बात नहीं है। उस निर्गुण का कौन पिता है, कौन माता है, कौन स्त्री तथा कौन दासी है, अर्थात् उसके बारे मे हमें पूर्ण जानकारी दो क्योंकि जिस निर्गुण ब्रह्म का आप उपदेश दे रहे हैं उसके बारे में जानने की हमारे मन में जिज्ञासा हो गई है क्योंकि किसी के बारे में जानकारी बिना उससे सम्बन्ध नहीं जोड़ा जा सकता है। इसी क्रम में गोपियाँ अपने जिज्ञासा भाव को जागृत करते हुए उद्धव से कहती हैं कि उसका रंग कैसा है, कैसा वेष है, किस रस की अभिलाषा करता है ? यदि तुम उसके बारे में बताने में किसी प्रकार का छल-कपट करोगे तो अपने किये का फल पाओगे। सूरदासजी कहते हैं कि उद्धव यह सब सुनते ही चुप रह गये,

उनकी सारी बुद्धि नष्ट हो गई अर्थात् उनकी बातें सुनकर मौन रह गये और उनकी असंमजस की स्थिति हो गई।

विशेष–(1) गोपियों के द्वारा उद्धव द्वारा उपदिष्ट निर्गुण के प्रति जिज्ञासा प्रकट करते हुए उस पर व्यंग्य किया गया है।

(2) सूरदास ने सहज भाव से गोपियों के मुख से कर्म-फल की प्रधानता को प्रतिपादित किया है।

(3) ब्रज भाषा के सहज प्रयोग में वियोग शृंगार रस की सृष्टि हुई है।

6. ऊधो, मन नाहीं..मन जगदीस ॥

शब्दार्थ–हुतौ = था। आराधै = आराधना करें। स्वासा = साँस। कोटि = करोड़ों। बरीस = वर्ष। सकल = सम्पूर्ण। ईस = ईश्वर।

प्रसंग–उद्धव जब श्रीकृष्ण के दूत बनकर ब्रज में गोपियों को योग मार्ग की शिक्षा देने आते हैं तो गोपियाँ कहती हैं कि योग मन से होता है और मन एक है, वह एक मन भी श्रीकृष्ण के साथ चला गया, अब योगाराधना के लिए दूसरा मन कहाँ से लायें ? यही तर्क देती हुई गोपियाँ कहती हैं कि—

व्याख्या–हे उद्धव ! हमारे दस-बीस मन नहीं हुए। एक था वह कृष्ण के साथ चला गया, अब ईश्वर की आराधना कौन करे ? कृष्ण के बिना इन्द्रियाँ शिथिल हो गयीं, जैसे बिना सिर के देह। जिस प्रकार शीश कटने पर शरीर कुछ काम नहीं कर सकता उसी प्रकार कृष्ण के वियोग में हमारी सारी इन्द्रियाँ एकदम शिथिल हो गयी हैं। हम जीवित भी इसलिए हैं कि कृष्ण के दर्शनों की आशा में श्वास अटकी हुई है उनसे मिलने की आशा में ही सैकड़ों वर्ष जीवित रहूँगी। हे उद्धव ! तुम तो कृष्ण के मित्र हो तथा समस्त योग के स्वामी हो। सूरदास कहते हैं (गोपियाँ कहती हैं) कि कृष्ण के सिवाय हमारे कोई आराध्य नहीं हैं। अत: किसी ओर की भक्ति हम नहीं कर सकतीं।

विशेष–(1) इस पद में गोपियों का जो भोलापन है, वह अज्ञानता न होकर ज्ञान-प्रसूत है।

(2) जड़ता संचारी भाव की व्यंजना है।

(3) वियोग-शृंगार की अभिव्यक्ति है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

नोट—सही उत्तर का क्रमाक्षर दाहिनी ओर के कोष्ठक में लिखिए—

प्रश्न 1. 'जो सुख सूर अमर मुनि दुर्लभ सो नंद भामिनि पावै।'

सूरदास इस कथन से क्या प्रकट करना चाहते हैं ?

उत्तर–(ख) बाल कृष्ण को खिलाने का सुख।

प्रश्न 2. 'आये ऊधौ फिरि गए अँगना, डारि गए गर फाँसी।'

इस कथन में गोपियों का कौनसा मनोभाव व्यंजित है ?

उत्तर–(ग) व्याकुलता।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. 'मुरली स्यामहिं मूंड चढ़ाई।'

गोपियाँ मुरली से अप्रसन्न क्यों हैं ?

उत्तर–गोपियाँ मुरली को अपनी सौतन समझती हैं जो सदा कृष्ण के अधरों का रसपान करती रहती है। गोपियों को यह देखकर और भी दु:ख होता है कि कृष्ण भी उसे बहुत अधिक महत्त्व देते हैं। यही गोपियों की अप्रसन्नता का कारण है।

प्रश्न 4. 'तातें स्याम भई कालिन्दी।'

यमुना का जल स्याम वर्ण कैसे हो गया है ?

उत्तर–सूरदास के अनुसार गोपियों के शब्दों में मथुरा के सभी काले रंग वाले लोगों को काले रंग के मटके में से निकालकर यमुना में लाकर धो डाला, इसलिए यमुना काली हो गई। गोप्रियों के इस कथन में उपहास मिश्रित व्यंग्य निहित है।

प्रश्न 5. 'निरगुन कौन देस को बासी।'

गोपियों के इस प्रश्न पर उद्धव की क्या प्रतिक्रिया हुई ?

उत्तर–गोपियों के उक्त प्रश्न को सुनकर उद्धव ठगा-सा रह गया। वह निरूत्तर हो गया मानो उसकी बुद्धि पूर्णत: नष्ट हो गई हो।

प्रश्न 6. 'प्रीति करि काहु सुख न लह्यो।'

गोपियों ने अपने इस मत के समर्थन में कौन-कौनसे उदाहरण प्रस्तुत किये हैं ?

उत्तर–गोपियाँ कहती हैं कि प्रीति करके किसी को सुख नहीं मिला। अपने इस कथन के समर्थन में उन्होंने पतंगे और दीपक के प्रेम, भ्रमर और कमल के प्रेम, मृग का मधुर स्वर से प्रेम और कृष्ण से स्वयं गोपियों के प्रेम के उदाहरण प्रस्तुत किये हैं।

प्रश्न 7. 'वह मथुरा काजर की कोठरि।'

गोपियों ने उद्धव को यह उपालम्भ क्यों दिया ?

उत्तर–गोपियों ने उद्धव को कहा कि मथुरा से जो भी आता है वह काला ही होता है, चाहे अक्रूरजी हों या भ्रमर, उद्धव या कृष्ण हों, सब काले हैं और उन्होंने गोपियों के साथ छल किया है। इसी कारण गोपियों ने उद्धव को यह उपालम्भ दिया कि यह मथुरा तो काजल की कोठरी है।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. 'भ्रमरगीत' में गोपियों के तर्कों के रहते हुए भी काव्यगत सरसता कैसे विद्यमान है ?

उत्तर–जहाँ तर्क हों वहाँ सरसता का अभाव ही पाया जाता है, यह एक सर्वमान्य तथ्य है। तर्क में एक कटु सत्य निहित होता है और उसकी अभिव्यक्ति भी प्राय: रसहीन शब्दावली और भावनाओं की परवाह किये बिना की जाती है। परन्तु सूरदास का 'भ्रमरगीत' काव्य इसका अपवाद ही कहा जा सकता है। सूरदास के 'भ्रमरगीत' में गोपियों का विरह तथा कवि का सगुण ब्रह्म के पक्ष में प्रबल मत मुख्य रूप से अभिव्यक्त हुआ है। सूरदासजी ने अपने इस काव्य में निर्गुण ब्रह्म की आराधना का खण्डन किया है और सगुण ब्रह्म की आराधना के मार्ग को ही सर्वश्रेष्ठ और सुगम माना है।

सगुण ब्रह्म की श्रेष्ठता और निर्गुण ब्रह्म की असारता को कवि ने अनेक तर्कों द्वारा प्रमाणित करने की कोशिश की है; किन्तु उनके तर्कपूर्ण पदों में काव्यगत सरसता कहीं भी लुप्त नहीं हुई है। इसका प्रमुख कारण यह है कि ये सब तर्क कवि ने गोपियों के माध्यम से बहुत ही सरस और मधुर शब्दों तथा हास्य और व्यंग्य शैली में प्रस्तुत किये हैं।

गोपियों ने उद्धव के निराकार ब्रह्म की अवहेलना बहुत ही रोचक ढंग से की है। वे अपनी बात इस प्रकार से कहती हैं कि अपने उद्देश्य को भी पूरा कर लेती हैं और उद्धव से हँसी-मजाक भी कर लेती हैं। एक तरफ वे उद्धव का उपहास करती हैं तो दूसरी ओर कृष्ण के प्रति अपने प्रेम को प्रकट करती हुई निर्गुण ब्रह्म की आराधना में अपनी असमर्थता को भी प्रकट कर देती हैं। सूरदासजी ने गोपियों की वाक्विदग्धता और उद्धव की असहाय अवस्था का चित्रण कर अपने तार्किक कथनों की नीरसता को सरसता में परिवर्तित कर दिया है। इस बात का सुन्दर प्रमाण सूरदास द्वारा रचित 'भ्रमरगीत' का प्रस्तुत पद है—

"निरगुन कौन देश को वासी।
मधुकर कहि समुझाइ सौंह दे, बूझति साँच न हाँसी।
..............सूर सबै मति नासी॥"

उक्त पद में निर्गुण ब्रह्म की निस्सारता को प्रकट करने के लिए सूरदासजी ने अनेक तर्क दिये हैं, परन्तु गोपियों के माध्यम से उद्धव को इस ढंग से कहा गया है कि यह बहुत ही सरस और रोचक बन गया है। इसी प्रकार एक अन्य पद में गोपियाँ निर्गुण ब्रह्म की आराधना में अपने को असमर्थ बताते हुए कृष्ण के प्रति अपने प्रेम को प्रकट करती हुई कहती हैं—

'ऊधो, मन नाहीं दस बीस।
एक हुतो सो गयो स्याम संग को आराधे ईस।
...........तुम तो सखा स्याम सुन्दर के सकल जोग के ईस।"

प्रस्तुत पद में गोपियाँ उद्धव को कृष्ण का सखा कहकर तो अपने मन की कामना, (कृष्ण-दर्शन), को पूरा करने का प्रयत्न करती हैं तथा 'सकल जोग के ईस' कहकर निर्गुण ब्रह्म के उद्धव के ज्ञान पर व्यंग्य भी करती हैं।

इस प्रकार निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि सूरदासजी के 'भ्रमरगीत' में सगुण के पक्ष में और निर्गुण ब्रह्म के विपक्ष में अनेक तर्क होते हुए भी यह एक सरस और रोचक काव्य बन गया है।

प्रश्न 9. सूरदास के 'भ्रमरगीत' की समालोचना निम्नांकित के आधार पर कीजिए—

(i) भाव-व्यंजना (ii) शब्द-शक्ति (iii) उक्ति-वैचित्र्य (iv) संगीतात्मकता।

उत्तर–'भ्रमरगीत' सूरदास का सबसे अधिक मर्मस्पर्शी और वाग्वैदग्धपूर्ण काव्य है। यह सूरसागर का महत्त्वपूर्ण अंश है। उपालम्भ काव्य के रूप में भी इसे जाना जाता है। इसकी प्रमुख विशेषताएँ उक्त बिन्दुओं के अन्तर्गत इस प्रकार से हैं—

(i) भाव-व्यंजना–'भ्रमरगीत' वास्तव में उपालम्भ काव्य है। अपने प्रियतम कृष्ण के प्रति गोपियों की भावपूर्ण शिकायतें, उनके विरह में अपनी दशा की अभिव्यक्ति, कृष्ण के प्रेम की मधुर स्मृतियाँ, कृष्ण से पुनर्मिलन की आकांक्षा आदि इस काव्यांश की प्रमुख बातें हैं। कवि सूरदास ने गोपियों के उक्त भावों को बहुत ही प्रभावपूर्ण ढंग से अभिव्यक्त किया है। उनके हृदय के निश्छल प्रेम, मिलन की व्याकुलता आदि को कवि ने सुन्दर प्रस्तुती दी है। उद्धव के साथ गोपियों के वर्तालाप में उनकी कुशलता, वाक्चातुर्य और भोलापन आदि सब एक साथ देखने को मिल जाते हैं। इन्हीं संवादों में कवि ने निर्गुण

का खण्डन करके सगुण की महत्ता को सहज ही स्थापित करने का सफल प्रयत्न किया है ।

(ii) **शब्द-शक्ति**–'भ्रमरगीत' में मुख्यत: गोपियों की वाग्वैदग्धता का सुन्दर परिचय मिलता है । गोपियों ने अपनी बात सीधे-साधे तरीके से न कहकर व्यंजना और लक्षणा शब्दशक्तियों का सहारा लेकर कही है । उदाहरणार्थ सूरदासजी के निम्नलिखित पदों को देखिये—

"निरगुन कौन देश को वासी ।
.......सूर सबै मति नासी ।"

तथा—

"वह मथुरा काजर की कोठरि जे आवैं ते कारे ।"

इन पदों में गोपियों ने व्यंग्य की भाषा में अपनी बात कही है । अत: व्यंजना शब्द-शक्ति का प्रयोग हुआ है ।

अनेक स्थलों पर गोपियों ने लक्षणा शब्द-शक्ति के माध्यम से अपनी बात कहकर अपनी वाक्‌चातुरी का परिचय दिया है ।

(iii) **उक्ति-वैचित्र्य**–सूरदासजी ने 'भ्रमरगीत' में गोपियों और उद्धव के संवादों को अपने कथ्य का माध्यम बनाया है । गोपियाँ उद्धव के निर्गुण ज्ञान को नकारने तथा कृष्ण मिलन की अपनी आकांक्षा को बड़ी चतुराई से अभिव्यक्त करती हैं । वे सीधी-साधी भाषा में न कहकर अपनी बात को घुमा-फिराकर बड़े विचित्र तरीके से कहती हैं । यही इस काव्य में उक्ति-वैचित्र्य की विशेषता के समावेश का कारण है । अधिकतर संवादों में गोपियों ने अपने कथन में उक्ति-वैचित्र्य को ही अपनाया है, जैसे—

'बिलग जनि मानो ऊधौ प्यारे ।
वह मथुरा काजर की कोठरि, जे आवै ते कारे ।
.........सूर स्याम गुन न्यारे ।"

इस पद में गोपियों ने कृष्ण और उसके सखा उद्धव पर जो व्यंग्य बाण चलाये हैं, वह उनकी इसी कला का प्रमाण है । अत: कहा जा सकता है कि 'भ्रमर गीत' में उक्ति-वैचित्र्य की विशेषता पर्याप्त रूप में विद्यमान है ।

(iv) **संगीतात्मकता**–सूरदास एक उच्चकोटि के विद्वान थे । उन्हें साहित्य के साथ-साथ संगीत का भी अच्छा ज्ञान था । यही कारण है कि उनके काव्य में गेयता, सरसता और संगीतात्मकता विद्यमान है । 'भ्रमरगीत' के पद बहुत ही सरस और मधुर तो हैं ही, उनमें गेयता का श्रेष्ठ गुण भी विद्यमान है । इन पदों को संगीत की विभिन्न राग-रागनियों के माध्यम से गाया जा सकता है । 'भ्रमरगीत' का प्रत्येक पद किसी न किसी राग-रागिनी पर आधारित सुन्दर संगीतपूर्ण रचना है । इस प्रकार सूरदास की 'भ्रमरगीत' रचना पूर्णत: संगीतात्मक रचना है ।

प्रश्न 10. सूरदास के काव्य की विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए ।

उत्तर–"सूर-सूर तुलसी शशि" वाली उक्ति के अनुसार सूरदास वास्तव में हिन्दी साहित्याकाश में रवि के समान हैं । सूरदास ने प्रमुख रूप से मुक्तक काव्य की रचना की है । उनके पद गेय हैं और उच्चकोटि के हैं । उनकी शैली में व्यंग्य, सजीवता, स्वाभाविकता, चित्रोपमता और भाव गाम्भीर्य देखते ही बनता है । सूरदास वात्सल्य रस के सम्राट माने जाते

हैं । बालक कृष्ण की बालसुलभ क्रीड़ाओं और चेष्टाओं का जैसा सुन्दर और स्वाभाविक वर्णन सूरदास के काव्य में मिलता है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है । वात्सल्य के अतिरिक्त शृंगार के संयोग और वियोग पक्ष का सुन्दर वर्णन भी इनके काव्य की महत्त्वपूर्ण विशषता है । हास्य, करुण, शान्त, अद्‌भुत आदि रसों का समावेश भी सूरदास के काव्य में हुआ है ।

सूरदास की भाषा ब्रज भाषा का मधुर और परिष्कृत रूप है । इन्होंने बहुत ही मधुर, सरस और गेय पदों की रचना कर साहित्य को समृद्ध बनाया है । प्रसाद, ओज और माधुर्य गुणों की त्रिवेणी का प्रवाह उनके काव्य में सर्वत्र देखने को मिलता है । ब्रज भाषा को सबसे पहले साहित्यिक रूप सूर ने ही दिया है ।

सूरदास भक्तिकाल के सगुणोपासक कवि हैं । इन्होंने अपने काव्य के माध्यम से सगुण ब्रह्म की उपासना का समर्थन किया है । सगुण भक्ति को ही ईश्वर प्राप्ति का सहज और सुगम मार्ग माना है । कवि सूरदास ने कृष्ण को अपना आराध्य माना है । इनकी भक्ति सख्य भाव की है ।

'भ्रमरगीत' काव्यांश के अन्तर्गत सूरदासजी ने निर्गुण ब्रह्म की उपासना की अपेक्षा सगुण ब्रह्म की उपासना को सहज, सुगम और श्रेष्ठ बताया है । इसमें गोपियों के विरह वर्णन के साथ-साथ उनकी वाक्‌चातुरी, व्यंग्यपूर्ण भाषा और तर्क शैली के भी दर्शन होते हैं । गोपियों ने अपनी बातों में सगुण उपासना को महत्त्व दिया है तथा निर्गुण का उपहास किया है ।

सारांश रूप में कहा जा सकता है कि सूरदास हिन्दी साहित्य के महान् कवि हैं । इन्होंने अपनी विद्वत्ता और भक्ति भावना से पूर्ण साहित्य की रचना कर हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाने में अपना अपूर्व सहयोग प्रदान क़िया है ।

अध्याय 8

तुलसीदास

कवि परिचय–भारतीय संस्कृति के प्रतिनिधि कवि गोस्वामी तुलसीदास का जन्म बाँदापुर जिले के राजापुर गाँव संवत् 1532 में हुआ था । इनके माता और पिता ने इन्हें मूल नक्षत्र में पैदा होने के कारण त्याग दिया था । रत्नावली नामक सुन्दरी से विवाह होने के बाद अपनी प्रिया के ही व्यंग्य बाणों से मर्माहत होकर तुलसी संसार से विमुख हो गये और राम भक्ति में लीन हो गये ।

इनके आराध्य राम थे और भक्ति दास्य भाव की थी । इनकी सर्वश्रेष्ठ कृति 'रामचरितमानस' हिन्दी साहित्य का अनुपम ग्रंथ है जो धर्म और भारतीय संस्कृति की अनमोल निधि है । आज इसे घर-घर में पूजा जाता है और श्रद्धा के साथ पढ़ा जाता है । यह ग्रंथ ज्ञान, भक्ति, नीति, कर्मयोग आदि का अमूल्य भंडार है ।

तुलसीदास का काव्य अपने समय की प्रचलित काव्य परम्पराओं का समन्वय है । इसमें कवि की बहुमुखी प्रतिभा का परिचय मिलता है । दोहा, चौपाई, सोरठा आदि छंदों से

युक्त इस रचना में विभिन्न अलंकार स्वयं ही आकर समा गये हैं। इसकी भाषा अवधी है जो बहुत ही सरल, सरस और माधुर्य गुण से युक्त है, प्रवाहशीलता और भावानुकूलता इनकी भाषा का विशेष गुण है।

तुलसीदास भक्त, कवि, पंडित, सुधारक और लोकनायक थे। इनकी भक्ति सगुण थी और आराध्य राम थे। इन्होंने राम को मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में प्रस्तुत कर एक आदर्श समाज के समक्ष रखा है।

तुलसीदास की रचनाएँ रामचरितमानस, जानकी मंगल, पार्वती मंगल, गीतावली, दोहावली, कवितावली, विनयपत्रिका, बरवैरामायण आदि हैं।

पाठ-परिचय–प्रस्तुत पाठ में तुलसी के प्रथम तीन पद 'विनयपत्रिका' से उद्धृत हैं जिनमें इनका विनय भाव प्रकट हुआ है। 'दोहावली' से अवतरित दोहों में कवि की राम भक्ति प्रकट होती है। 'रामचरित मानस' से लिये गये 'संत-असंत' स्वभाव' में कवि ने सज्जन और दुर्जन व्यक्तियों की प्रवृत्ति को दर्शाते हुए दोनों की वंदना की है। 'गीतावली' और 'कवितावली' से संकलित पद राम कथा पर आधारित हैं।

विनय-पत्रिका

1. ऐसो को उदार .... कृपानिधि तेरो ॥

शब्दार्थ–उदार = दयालु। द्रवै = कृपा करे। गति = मुक्ति। देत = दी। पहँ = से। सकल = सब। पूरन = पूरे (पूर्ण)।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद तुलसीदास कृत 'विनय पत्रिका' से अवतरित है। तुलसीदासजी ने भगवान राम की उदारता को स्पष्ट करते हुए कहा है कि ऐसा इस संसार में कौन उदार है जो बिना सेवा किये ही दीन (गरीब) पर द्रवित हो उठता है, अर्थात् उन पर कृपा कर देता है। ऐसा राम के अतिरिक्त और कोई नहीं है। जिस मोक्ष को मुनी और ज्ञानी योग, वैराग्य आदि अनेक साधन करने पर भी प्राप्त नहीं कर सकते हैं वह गति श्रीराम ने गिद्ध और शबरी भीलनी को हृदय में कुछ न जानकर दे दी। रावण ने अपने दस मस्तक चढ़ाकर जो सोने की लंका की सम्पत्ति शिवजी से प्राप्त की थी, वही सम्पत्ति श्रीराम ने विभीषण को बहुत संकोच के साथ दे दी, अर्थात् उस सम्पत्ति को तुच्छ वस्तु समझा। तुलसीदासजी कहते हैं कि अरे मन ! जो तू सब तरह से सब सुख चाहता है तो श्रीराम का भजन कर। कृपा के समुद्र श्रीराम तेरी सारी मन की इच्छाओं को पूर्ण कर देंगे। तेरे सब मनोरथ सफल हो जायेंगे।

विशेष–(1) राम की उदारता व भक्त-वत्सलता का चित्रण है।

(2) वक्रोक्ति, विभावना, अनुप्रास आदि अलंकारों का सार्थक प्रयोग किया गया है।

2. अब लौं नसानी .... कमल बसैहौं ॥

शब्दार्थ–अब लौं = अब तक। नसानी = नष्ट हुई, बिगड़ी। नसैहों = नष्ट करूँगा। सिरानी = बीत गई। डसैहौं = बिछौना बिछाऊंगा। खसैहौं = खिसकने दूँगा, गिराऊँगा। कसैहौं = कस लूँगा। हँसैहौं = हँसी उड़वाऊँगा। पनकै = प्रण करके।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद तुलसीदास कृत 'विनयपत्रिका' से संकलित है। इसमें कवि संकल्प करता है कि जो समय व्यर्थ में ही सांसारिक मोह-माया में फँसकर मैंने

बिता दिया, सो बिता दिया अब और समय व्यर्थ नष्ट नहीं करूँगा, यह संकल्प लेते हुए तुलसीदासजी कहते हैं कि—

"हे स्वामी ! अब तक जो नष्ट हुई सो हुई, अब और आयु नष्ट नहीं होने दूँगा। मेरे जीवन का जो अंश अब बिगड़ा सो बिगड़ा और तनिक भी नहीं बिगड़ने दूँगा। श्रीराम की कृपा से संसार रूपी रात्रि बीत चुकी है, अर्थात् मेरा मोह-जनित अज्ञान नष्ट हो चुका है, अब एक बार जाग जाने के बाद फिर बिछौना नहीं बिछाऊँगा, अब पुन: सांसारिक मोह में नहीं पड़ूँगा। अब तो मुझे श्रीराम के नाम की चिन्तामणि प्राप्त हो गई है, अब उस चिन्तामणि को हृदय रूपी हाथ से नहीं गिराऊँगा। राम नाम सब प्रकार की कामनाओं की पूर्ति करने वाली चिन्तामणि के समान है। उस राम नाम को हृदय में बसाये रखूँगा, खोऊँगा नहीं। श्रीरामचन्द्रजी के पवित्र सुन्दर रूप को कसौटी पर अपने चित्त रूपी कंचन को कसूँगा। परवश जानकर इन इन्द्रियों ने मेरी बहुत हँसी उड़ाई है, अब अपने वश में होकर और हँसी नहीं उड़वाऊँगा। जब तक इन्द्रियों के वश में रहा तब तक बहुत हँसी का पात्र बना, अब इन्द्रियों को मैंने अपने वश में कर लिया है अत: हँसी का पात्र नहीं बनूँगा। तुलसीदासजी कहते हैं कि अब तो प्रण करके अपने मन रूपी मधुकर को रामचन्द्रजी के चरण रूपी कमलों में बसा दूँगा। अब मन को पूर्णतया श्रीराम भक्ति में लीन कर दूँगा, इसके लिए कृत संकल्प हूँ।"

विशेष–(1) संसार के माया-मोह से विलग होकर भगवान की शरण में आने की अभिव्यक्ति है।

(2) सांगरूपक अलंकार का सौन्दर्य विद्यमान है।

(3) ब्रज भाषा का माधुर्य और पद की गेयता ध्यान आकृष्ट करने वाली है।

(4) कवि की विद्वत्ता प्रतिबिम्बित हो रही है।

3. मोहि मूढ़ मन .... नींद भरि सोयो।

शब्दार्थ–मूढ़ = मूर्ख। बिगोयो = बहकाया, भ्रमित किया। पियूष = अमृत। बारि = पानी। बिलोयो = मंथन किया। बिहाय = त्यागकर। गोयो = छिपाया।

सप्रसंग व्याख्या–तुलसीदास अपनी व्यर्थ में व्यतीत आयु का पश्चांताप प्रकट करते हुए अपने समस्त दोषों को दूर करने का राम से निवेदन करते हैं तथा अपने ऊपर कृपा करने की प्रार्थना करते हैं।

तुलसीदासजी कहते हैं कि हे राम ! मुझे मेरे मूर्ख मन ने बहुत बहकाया और भ्रमित रखा। हे करुणामय ! मैं इसके कारण संसार में कई जन्मों तक दु:खों को सहता हुआ रोता रहा। मैंने भ्रमवश रामभक्ति रूपी अमृत के सहज सुख को अपने निकट होते हुए भी दूर खो दिया। मैं मोह के वशीभूत होकर व्यर्थ ही श्रम करता रहा और मूर्ख की भाँति पानी का ही मंथन करता रहा। मैं कर्म रूपी कीचड़ में जान-बूझकर अपने चित्त को लिप्त करके मल से ही मल को धोने का कुप्रयास करता रहा। मेरा यह मूर्ख मन प्यासा होकर रामभक्ति रूपी गंगा को त्यागकर बार-बार व्याकुल होकर आकाश को निचोड़ने का प्रयत्न करता रहा।

तुलसीदास कहते हैं कि हे प्रभु ! अब आप मुझ पर कृपा कीजिए, मैंने अपना कोई दोष नहीं छिपाया है। मैं तो उस अभागे की तरह हूँ जिसकी रात्रि बिछौना बिछाने के

प्रयत्न में जागते हुए ही व्यतीत हो जाती है और कभी भी नींद भर कर चैन से नहीं सो पाता है।

विशेष–(1) कवि का पश्चाताप एवं दोषों का आत्मबोध उसके मन की शुद्धता को प्रकट करता है।

(2) अलंकारिक और मुहावरेदार भाषा से कथन अधिक प्रभावी बन गया है।

(3) भक्ति और शान्त रस के साथ-साथ करुण रस की अनुभूति होती है।

(4) भावानुकूल ब्रजभाषा का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

दोहावली

1. एक भरोसो, एक बल..चातक तुलसीदास ॥

शब्दार्थ–घनस्याम = काले बादल (राम के लिए प्रयुक्त)। चातक = पपीहा (तुलसीदास के लिए प्रयुक्त)।

प्रसंग–तुलसीदास द्वारा रचित दोहावली से अवतरित प्रस्तुत सातों दोहों में कवि तुलसीदास ने स्वयं को चातक रूपी भक्त और राम को काले बादल रूपी स्वामी (प्रभु) के रूप में प्रस्तुत किया है। कवि ईश्वर से कामना करता है कि हमें अपनी कृपा रूपी वर्षा से तृप्त कीजिए, हमारी तृष्णा को शान्त कीजिए।

व्याख्या–भक्त तुलसीदास राम रूपी घनस्याम (बादल) को संबोधित कर कहते हैं कि इस चातक को केवल आपका ही भरोसा, आपका ही बल और आपका ही विश्वास है। इस तुलसी रूपी पपीहा की तृष्णा को राम रूपी बादल ही शान्त करेंगे।

2. जो घन बरषै..तिहारी आस।

शब्दार्थ–तऊ = तो भी। तिहारी = तुम्हारी।

व्याख्या–उपर्युक्त प्रसंगानुसार ही तुलसीदास कहते हैं कि यदि बादल समय-समय पर वर्षा करे या जन्म भर चातक को प्यासा या उदास रखे, तो भी उसे उसी की आशा लगी रहती है अर्थात् राम कृपा करें या न करें तुलसीदास को तो सदैव उनकी ही आशा रहती है।

3. रटत रटत रसना..रुचि रंग।

शब्दार्थ–रसना = जीभ। लटी = थक गई। तृषा = प्यास।

व्याख्या–तुलसीदास कहते हैं कि इस चातक की जिह्वा भी घनस्याम रूपी राम का नाम रटते-रटते थक गई है। तृष्णा से सारे अंग सूख गये हैं फिर तुलसी रूपी चातक के हृदय में राम के प्रति नित्य नई रुचि के साथ प्रेम पनपता रहता है।

4. चढ़त न चातक..नाप न जोख।

शब्दार्थ–पयोद = बादल। पयोधि = समुद्र।

व्याख्या–कवि भक्त तुलसीदास कहते हैं कि पपीहा कभी भी अपने प्रियतम बादल के दोष चित्त में नहीं लाता है। तुलसीदास कहते हैं कि इसीलिए प्रेम रूपी सागर की गहराई को कभी नापा नहीं जा सकता।

5. उपल बरसि..दूसरी ओर।

शब्दार्थ–उपल = ओले। कुलिस = वज्र।

व्याख्या–तुलसी कहते हैं कि भले ही बादल ओलों की बरसात करें, कठोर वज्रपात करें, परन्तु क्या कभी चातक बादलों को छोड़कर कहीं अन्यत्र देखता है, अर्थात् नहीं, उसका प्रेम अनन्य होता है।

6. पबि, पाहन, दामिनि..रागहिं रीझि।

शब्दार्थ–पबि = वज्र। पाहन = पत्थर। दामिनि = बिजली। राग = प्रेम।

व्याख्या–तुलसीदास कहते हैं कि बादल चाहे वज्र, पत्थर या बिजली गिराये, उसे झकझोर कर परेशान कर दे, परन्तु चातक अपने प्रिय बादल के दोषों पर क्रोध नहीं करता है, वह उसके प्रेम पर रीझता अवश्य है।

7. नाहिं जाँचत..बारिद बिन देइ।

शब्दार्थ–जाँचत = माँगते हैं। मानी = स्वाभिमानी। माँगनेहि = माँगने वाला। बारिद = बादल।

व्याख्या–तुलसीदास कहते हैं कि जो न तो माँगता है, न संग्रह करता है और न ही सिर झुकाकर लेता है ऐसे स्वाभिमानी याचक को बादल के बिना कौन दे सकता है।

रामचरितमानस

संत–असंत स्वभाव

1. बंदऊँ संत..चरन रति देहु॥

शब्दार्थ–बंदऊँ = वन्दना करता हूँ। अनहित = हानि। सुभाउ = स्वभाव। रति = प्रेम, प्रीति। देहु = दें।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद्य तुलसीदास द्वारा रचित 'रामचरित मानस' से अवतरित है। इसमें कवि ने संत-असंत के गुणों की विवेचना की है। वे कहते हैं कि मैं संतों को प्रणाम करता हूँ, जिनके चित्त में समता है, जिनका न कोई मित्र है और न शत्रु। जैसे अञ्जलि में रखे हुए सुन्दर फूल दोनों ही हाथों को समान रूप से सुगन्धित करते हैं, वैसे ही संत शत्रु और मित्र दोनों का ही समान रूप से कल्याण करते हैं।

तुलसीदासजी कहते हैं कि संत सरल हृदय और जगत् के हितकारी होते हैं, उनके ऐसे स्वभाव और स्नेह को जानकर मैं विनय करता हूँ, मेरी इस बाल-विनय को सुनकर कृपा करके श्रीरामजी के चरणों में मुझे प्रीति दें।

विशेष–(1) कवि ने सज्जन स्वभाव की विशेषता का उल्लेख करते हुए उनकी वन्दना की है।

(2) सरस अवधी भाषा का प्रयोग हुआ है।

2. बहुरि बंदि खल..पर दोष निहारा॥

शब्दार्थ–बंदि = प्रणाम। सतिभाएँ = सत्य भाव से। राकेस = चन्द्रमा। भट = वीर। सहसाखी = हजार आँखों से। कृसानु = अग्नि। हिमउपल = ओले। अघ = पाप। सक्र = इन्द्र। सुरानीक = शराब अच्छी लगती है। निहारा = देखते हैं।

सप्रसंग व्याख्या–तुलसीदासजी कहते हैं कि अब मैं सच्चे भाव से दुष्टों को प्रणाम करता हूँ, जो बिना ही प्रयोजन, अपना हित करने वाले के भी प्रतिकूल आचरण करते हैं। दूसरों के हित की हानि ही जिनकी दृष्टि में लाभ है, जिनको दूसरों के उजड़ने में हर्ष और बसने में विषाद होता है। तुलसीदासजी असंतों (दुष्टों) का उदाहरण देते हुए

कहते हैं कि जो हरि और हर के यशरूपी पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान हैं अर्थात् जहाँ कहीं भगवान् विष्णु या शंकर के यश का वर्णन होता है, उसी में बाधा देते हैं और दूसरों की बुराई करने में सहस्त्रबाहु के समान वीर हैं। जो दूसरे के दोषों को हजार आँखों से देखते हैं और दूसरों के हित रूपी घी के लिए जिनका मन मक्खी के समान है अर्थात् जिस प्रकार मक्खी घी में गिरकर उसे खराब कर देती है और स्वयं भी मर जाती है, उसी प्रकार दुष्ट लोग दूसरों के बने-बनाये काम को अपनी हानि करके भी बिगाड़ देते हैं। जो तेज में अग्नि और क्रोध में यमराज के समान हैं, पाप और अवगुणरूपी धन में कुबेर के समान धनी हैं, जिनकी बढ़त सभी के हित को नाश करने के लिए पुच्छल तारे के समान है और जिनके कुम्भकरण की तरह सोते रहने में ही भलाई है।

तुलसीदासजी कहते हैं कि जैसे ओले खेती का नाश करके आप ही गल जाते हैं, वैसे ही वे दूसरों का काम बिगाड़ने के लिए अपना शरीर तक छोड़ देते हैं। मैं दुष्टों को शेषजी के समान समझकर प्रणाम करता हूँ, जो पराये दोषों का हजार मुखों से बड़े रोष के साथ वर्णन करते हैं। पुनः उनको राजा पृथु जिन्होंने भगवान का यश सुनने के लिए दस हजार कान माँगे थे, उनके समान जानकर प्रणाम करता हूँ जो दस हजार कानों से दूसरे के पापों को सुनते हैं। फिर इन्द्र के समान मानकर उनकी विनय करता हूँ, जिनको मदिरा नीकी और हितकारी मालूम होती है। जिनको कठोर वचनरूपी वज्र सदा प्यारा लगता है और जो हजार आँखों से दूसरों के दोषों को देखते हैं।

विशेष–(1) कवि ने दुष्ट व्यक्तियों की सुन्दर उपमाओं और उदाहरणों द्वारा प्रकृति को अभिव्यक्त किया है।

(2) चौपाई छंद तथा उपमा, रूपक, उदाहरण, अनुप्रास आदि अलंकारों का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

3. उदासीन अरि...करइ सप्रीति।

शब्दार्थ–उदासीन = तटस्थ। अरि = शत्रु। खल = दुष्ट। पानि जुग = दोनों हाथ।

सप्रसंग व्याख्या–यह दोहा तुलसीदास रचित 'रामचरितमानस' से अवतरित है। इसमें तुलसीदास ने दुष्टों की रीति का वर्णन करते हुए लिखा है कि वे उदासीन शत्रु अथवा मित्र, किसी का भी हित सुनकर जलते हैं। यह जानकर दोनों हाथ जोड़कर यह जन प्रेमपूर्वक उनसे विनय करता है।

4. मैं अपनी दिसि...नीक तेहि सोई॥

शब्दार्थ–बायस = कौवा। निरामिष = शाकाहारी। भल-अनभल = अच्छा-बुरा। सुधा = अमृत। नीक = भला।

सप्रसंग व्याख्या–उक्त प्रसंग में तुलसीदासजी कहते हैं कि मैंने अपनी ओर से विनती की है, परन्तु वे अपनी ओर से कभी नहीं चूकेंगे। कौओं को बड़े प्रेम से पालिये, परन्तु वे क्या कभी मांस के त्यागी हो सकते हैं? अब मैं संत और असंत दोनों के चरणों की वन्दना करता हूँ, दोनों ही दुःख देने वाले हैं, परन्तु उनमें कुछ अन्तर कहा गया है। वह अन्तर यह है कि एक संत तो बिछुड़ते समय प्राण हर लेते हैं और दूसरे मिलते हैं तब दारुण दुःख देते हैं। दोनों जगत् में एक साथ पैदा होते हैं, पर कमल और जोंक की तरह

उनके गुण अलग-अलग होते हैं। साधु अमृत के समान और असाधु मदिरा के समान, मोह, प्रमाद और जड़ता उत्पन्न करने वाला है।

तुलसीदासजी कहते हैं कि भले और बुरे अपनी-अपनी करनी के अनुसार सुन्दर यश और अपयश की सम्पत्ति पाते हैं। अमृत, चन्द्रमा, गंगाजी और साधु एवं विष, अग्नि, कलियुग के पापों की नदी अर्थात् कर्मनाशा और हिंसा करने वाला व्याघ्र, इनके गुण-अवगुण सब कोई जानते हैं, किन्तु जिसे जो भाता है, उसे वही अच्छा लगता है।

5. भलो भलाइहि..सराहिअ मीचु ॥

शब्दार्थ–भलो = अच्छा। लहई = लेता है। सुधा = अमृत। मीचु = मृत्यु।

सप्रसंग व्याख्या–तुलसीदासजी कहते हैं कि भला भलाई ही ग्रहण करता है और नीच नीचता को ही ग्रहण किये रहता है। अमृत की सराहना अमर करने में होती है और विष की मारने में।

6. खल अघ अगुन..दोष विभागा।

शब्दार्थ–उदधि = समुद्र। अवगाहा = अथाह। पोच = बुरे। अमिय = अमृत। साना = लिप्त। अवनीसा = राजा।

सप्रसंग व्याख्या–उपर्युक्त प्रसंगानुसार तुलसीदासजी कहते हैं कि दुष्टों के पापों और अवगुणों की ओर साधुओं के गुणों की कथाएँ दोनों ही अपार और अथाह समुद्र हैं। इसी से कुछ गुण और दोषों का वर्णन किया गया है, क्योंकि बिना पहचाने उनका ग्रहण या त्याग नहीं हो सकता। भले, बुरे सभी ब्रह्मा के पैदा किये हुए हैं, पर गुण और दोषों को विचार कर वेदों ने उनको अलग-अलग कर दिया है। वेद, इतिहास और पुराण कहते हैं कि ब्रह्मा की यह सृष्टि गुण-अवगुणों से सनी हुई है। दुःख-सुख, पाप-पुण्य, दिन-रात, साधु-असाधु, सुजाति-कुजाति, दानव-देवता, ऊँच-नीच, अमृत-विष, सुजीवन-मृत्यु, माया-ब्रह्म, जीव-ईश्वर, सम्पत्ति-दरिद्रता, रंक-राजा, काशी-मगध, गंगा-कर्मनाशा, मारवाड़-मालवा, ब्राह्मण-कसाई, स्वर्ग-नरक, अनुराग-वैराग्य वेद-शास्त्रों ने उनके गुण-दोषों का विभाग कर दिया है।

विशेष–(1) तुलसीदास ने अच्छे और बुरे कर्मों के आधार पर संत-असंतों का विभाजन किया है।

(2) चौपाई छंद और अवधी भाषा का प्रयोग हुआ है।

7. जड़ चेतन गुन...बारि बिकार ॥

शब्दार्थ–करतार = ईश्वर। पय = दूध। वारि = जल। परिहरि = त्यागकर।

सप्रसंग व्याख्या–उपर्युक्त प्रसंग में आगे संत और असंत के गुणों का बखान करते हुए कहते हैं कि विधाता ने जड़-चेतन विश्व को गुण-दोषमय रचा है। किन्तु संतरूपी हंस दोष-रूपी जल को छोड़कर गुणरूपी दूध को ही ग्रहण करते हैं।

गीतावली

1. राघौ गीध गोद..पुनि पैहौं ॥

शब्दार्थ–राघौ = राघव (राम)। अरघ जल = अर्घ्यदान। पछु = पक्ष, हितैषी। विभु = चन्द्रमा। अवलोकि = देखकर। पैहों = पाऊँगा।

प्रसंग–प्रस्तुत पद्यखण्ड तुलसीदास द्वारा रचित गीतावली से अवतरित है । इसमें भगवान राम की भक्तों के प्रति उद्धारपरक भावना का विश्लेषण किया गया है ।

व्याख्या–भगवान राम ने गिद्ध को गोद में उठा लिया और अपने नयनकमल द्वारा सनेहरूप पवित्र जल से मानो अर्घ्यदान किया । फिर कहने लगे 'लक्ष्मण ! सुनो, वन में पक्षिराज से मिल लेने पर मुझे पिताजी का मरना याद ही नहीं आया । परन्तु कुटिल विधाता मेरे इस सुख को सहन नहीं कर सका, इसी से आज उसने यह बड़ा प्रबल पक्ष नष्ट कर दिया ।' फिर रघुनाथजी ने जटायु से शरीर रखने के लिए बहुत प्रकार से कहा, परन्तु वह परम धीर अपने निश्चय से विचलित नहीं हुआ और अपने प्रेम को रोक, प्रभु का मुख चन्द्र देखकर यह मनोहर वचन बोला । हे प्रभो ! इस समय झूठे जीवन के लिए मैं धोखा नहीं खाऊँगा । भला जिनका नाम मरते समय मुनियों को भी दुर्लभ है उन आपको मैं फिर कहाँ पाऊँगा ।

विशेष–(1) कवि ने गिद्धराज जटायु की कथा के द्वारा राम की भक्तोद्धारक प्रवृत्ति को प्रकट किया है ।

(2) रूपक अलंकार युक्त पद गेयता का गुण लिए हुए करुण रस से युक्त है ।

2. मेरो सब पुरुषारथ..ज्ञानि प्रचारे ।

शब्दार्थ–थाको = नष्ट हो गया । काको = किसका । समर = युद्ध । साखामृग = बन्दर । औसर = अवसर । प्रचारे = प्रबोधित किया ।

प्रसंग–प्रस्तुत पद तुलसीदास कृत 'गीतावली' से अवतरित है । जब लक्ष्मण मूर्छित हो जाते हैं तब भगवान राम उनको मूर्छित देखकर कहते हैं कि—

व्याख्या–अब मेरा सारा पुरुषार्थ थक गया । अपनी विपत्ति को बँटाने वाले भाई रूपी भुजा के बिना अब मैं किसका भरोसा करूँ । भगवान राम सुग्रीव से कहते हैं कि सुग्रीव ! सुनो, विधाता ने सचमुच मेरी ओर से मुँह फेर रखा है, इसी से ऐसे समय युद्ध का संकट उपस्थित होने पर मुझे लक्ष्मण जैसे भाई ने त्याग दिया । वानर तो पर्वत और वनों में चले जायेंगे और मैं भैया लक्ष्मण का साथ पकडूँगा, परन्तु मेरे हृदय में यही सोच भरा हुआ है कि विभीषण की क्या गति होगी । तुलसीदासजी कहते हैं कि प्रभु के ये वचन सुनकर रीछ-वानर हृदय में व्याकुल होकर चकित हो गये । तब जामवन्त ने हनुमानजी को बुलाकर उत्तेजित किया ।

विशेष–(1) मर्यादा पुरुषोत्तम का करुणापूर्ण वचन परिस्थिति के अनुसार तथा मानव स्वभाव को प्रकट करने वाला है ।

(2) पद की भाषा करुण रसपूर्ण तथा प्रसाद गुण युक्त है ।

कवितावली

वन के मार्ग में

1. सीस जटा, उर..रावरे को हैं ॥

शब्दार्थ–उर = हृदय । बाहु = भुजाएँ । बिलोचन = नेत्र । तून = तूणीर । सरासन = धनुष । सुठि = सुन्दर । सुभायँ = अच्छे भावों से । चितै = देखते हैं । रावरे = आपके ।

प्रसंग–राम, सीता और लक्ष्मण को वन मार्ग में जाते हुए देखकर आस-पास के ग्रामों की स्त्रियाँ और पुरुष उनको देखने आ जाते हैं । ग्राम-वधुएँ सीता को एक अन्य पेड़

के नीचे ले जाती हैं और दूसरे पेड़ के नीचे खड़े राम की ओर संकेत करके इस प्रकार पूछने लगती हैं ।

व्याख्या–हे सखी ! जिनके सिर पर जटाएँ हैं, हृदय और भुजाएँ विशाल हैं, नेत्र लाल हैं और भौंहें तिरछी-सी हैं । वे तरकस, धनुष और बाण धारण किये हुए हैं तथा इस वन मार्ग में सुन्दर लग रहे हैं । वे बार-बार आदर सहित तुम्हारी ओर ऐसे देख रहे हैं कि हमारा मन मोहित हो रहा है । ग्राम-वधुएँ सीता से पूछती हैं कि हे सखी ! ये साँवरे रंग के राजकुमार आपके कौन हैं ?

विशेष–(1) सीता के प्रति राम का अनुराग अभिव्यक्त हुआ है तथा ग्राम-वधुओं की जिज्ञासा को भी सुन्दर ढंग से व्यक्त किया है ।

(2) कविता की भाषा भावानुकूल माधुर्य गुण से सम्पन्न है ।

2. सुनि सुन्दर बैन .... मंजुल कंजकली ।

शब्दार्थ–बैन = वचन । सुधारस = अमृतरस । साने = लिप्त । सयानी = समझदार । **सैन** = संकेत, इशारा । लाहु = लाभ । अली = सखी । तड़ाग = तालाब । बिगसी = विकसित हुई या खिली ।

सप्रसंग व्याख्या–उक्त प्रसंगानुसार ही प्रस्तुत कविता में तुलसीदासजी ने ग्राम-वधुओं द्वारा पूछे गये प्रश्न का उत्तर सीता से बहुत ही सुन्दर ढंग से दिलवाया है । तुलसीदास कहते हैं कि ग्राम-वधुओं के अमृत से सने हुए सुन्दर वचन सुनकर सयानी सीता कुछ तिरछे नेत्र करके, थोड़ा सा संकेत देकर उन्हें कुछ समझाती हुई मुस्करा दी अर्थात् उसने सांकेतिक भाषा में अपने हाव-भावों से यह व्यक्त कर दिया कि वे उसके पति हैं । तुलसीदास कहते हैं कि उस अवसर पर सीता को देखती हुई सब सखियाँ अति प्रसन्न हुईं, उनको अपने जीवन का लाभ मिल गया था या उनके नेत्र सफल हो गये थे क्योंकि सीता इतनी सुन्दर लग रही थी कि मानो प्रेम रूपी तालाब में सूर्य के उदित हो जाने पर कमल की कली खिल गयी हो अर्थात् सीता के मुख रूपी सूर्य के सौन्दर्य को देखकर सखी रूपी कलियाँ उनके प्रेम रूपी तालाब में विकसित हो गई थीं ।

विशेष–(1) नारी सुलभ लज्जा एवं पति का नाम न लेने की प्राचीन भारतीय परम्परा को अभिव्यक्त किया गया है ।

(2) सांगरूपक अलंकार तथा भाषा का माधुर्य गुण दृष्टव्य है ।

(3) कवित्त में अवधी और ब्रज भाषा का सौन्दर्य प्रभावित करने वाला है ।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

नोट—सही उत्तर का क्रमाक्षर दाहिनी ओर के कोष्ठक में लिखिए—

प्रश्न 1. ''सो संपत्ति विभीषन कहँ अति संकुच-सहित हरि दीन्ही ।
इस कथन में उल्लिखित राम के संकोच का क्या कारण था ?

उत्तर–(ग) भक्ति का मूल्य स्थूल वस्तु नहीं होती ।

प्रश्न 2. ''बायस पलिअहि अति अनुरागा । होहिं निरामिष कबहुँ कि कागा ।''
तुलसीदास के इस कथन का तत्त्वार्थ क्या है ?

उत्तर–(घ) प्रकृति दुस्त्याज्य होती है ।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. ''पायेऊँ नाम चिन्तामणि ।' तुलसीदास ने रामनाम को चिन्तामणि किस उद्देश्य से कहा है ?

उत्तर—चिन्तामणि सर्वश्रेष्ठ मणि है जो मानव की समस्त चिन्ताओं को दूर कर उसे समस्त सुख प्रदान करने वाली होती है । राम का नाम स्मरण भी व्यक्ति को सांसारिक कष्टों से मुक्ति प्रदान कर समस्त सुख प्रदान करने वाला है, इसीलिए रामनाम को चिन्तामणि कहा गया है ।

प्रश्न 4. 'करम-कीच जिय जानि, सानि चित, चाहत कुटिल मलहि मल धोयो ।'
रेखांकित शब्दों से कवि 'कर्म' के संबंध में क्या प्रकट करना चाहता है ?

उत्तर—रेखांकित शब्दों का अर्थ है : 'मल से मल को धोना' । कर्म के सम्बन्ध में इसका तात्पर्य यह है कि अपने बुरे कर्मों के फल को दूर करने के लिए यह मन और अधिक बुरे कर्म करना चाहता है अर्थात् यह बुराइयों में लिप्त रहने के उपरान्त अब भी बुरे कर्मों से मुँह नहीं मोड़ता है ।

प्रश्न 5. 'उपल बरसि गरजन तरजि, डारत कुलिस कठोर ।
चितव कि चातक मेघ तजि, कबहुँ दूसरी ओर ॥'
तुलसी चातक के इस स्वभाव से भक्ति के संबंध में क्या सीख देना चाहते हैं ?

उत्तर—तुलसीदास का कहना है कि बादल चाहे कितना ही वज्रपात, गर्जना, बिजली गिराना आदि कष्ट देने वाले कार्य करे, परन्तु चातक उससे प्रेम करना नहीं छोड़ता है । भक्ति के संबंध में तुलसीदासजी यह सीख देना चाहते हैं कि ईश्वर भक्त पर चाहे जितने कष्टों की झड़ी लगा दे, परन्तु भक्त को ईश्वर-प्रेम का त्याग नहीं करना चाहिए । उसे उन कष्टों को भी ईश्वर की इच्छा मानकर सहज स्वभाव से सहन करना चाहिए । जो ईश्वर कष्ट दे रहा है वही एक दिन भक्तरूपी चातक पर कृपा-वृष्टि भी अवश्य करेगा ।

प्रश्न 6. 'बंदऊँ संत असज्जन चरना । दुख प्रद उभय बीच कुछ बरना ॥''
संत और दुर्जन दोनों द्वारा दुख देने में क्या अन्तर है ?

उत्तर—तुलसीदास के अनुसार दुर्जन व्यक्ति तो मिलने पर भयंकर दुःख देता है और सज्जन व्यक्ति बिछुड़ने पर दुःख देता है । दोनों के द्वारा दुःख देने की स्थिति में यही अन्तर है । सज्जन व्यक्ति के बिछुड़ने पर व्यक्ति उसके वियोग में दुःखी होता है, उसके मिलने पर व्यक्ति को आनन्द की प्राप्ति होती है ।

प्रश्न 7. 'नयन-सरोज सनेह-सलिल सुचि मनहुँ अरघजल दीन्हों ।' रेखांकित शब्दों का तात्पर्य क्या है ?

उत्तर—रेखांकित शब्दों 'अरघजल दीन्हों' का शाब्दिक अर्थ है—'अर्घ्यजल देना' । किसी सगे-संबंधी, मित्र या प्रियजन की मृत्यु उपरान्त अर्घ्यदान करना या पानी देना हिन्दू संस्कृति का एक धार्मिक रिवाज है । श्रीराम ने अपने हितैषी जटायु की मृत्यु पर अपने कमल जैसे नेत्रों से जो आँसू बहाये वे मानो जटायु को अर्घ्यदान के रूप में समर्पित थे ।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. तुलसीदास ने दोहावली में चातक के स्वभाव की क्या विशेषताएँ बताई हैं ?

उत्तर–तुलसीदासजी ने चातक के स्वभाव की तुलना भक्त के स्वभाव तथा बादल की ईश्वर से की है । उनके अनुसार चातक सदा बादल से प्रीति करता है । उसे बादलों का ही विश्वास होता है, उन्हीं का बल होता है तथा उन्हीं को अपना हितैषी मानता है । चाहे बादल समय-समय पर वर्षा करते रहें अथवा चातक को प्यासा रखें, फिर भी वह उन्हीं के प्रति आशा लगाये रहता है । चातक निरन्तर बादलों की ही रट लगाता रहता है, वह प्यासा रहकर भी अपने प्रियतम बादल को प्रेमपूर्वक पुकारता रहता है । बादल के अनेक दोषों को भी चातक कभी अपने मन में नहीं लाता है । उसके प्रेम में सागर जैसी अथाह गम्भीरता रहती है । चातक को बादल यदि अनेक प्रकार से कष्ट भी पहुँचाये तो भी वह कभी दूसरे सहारे की ओर नहीं देखता । उसके दोषों को नजर अन्दाज करके वह उसके प्रेमपूर्ण व्यवहार से तुरन्त ही प्रसन्न हो जाता है । तुलसीदास कहते हैं कि चातक बड़ा स्वाभिमानी भी होता है । वह न तो याचना करता है और न ही संग्रह करता है, वह सिर झुकाकर लेता भी नहीं है; इस प्रकार के स्वाभिमानी के मान की रक्षा भी बादल ही करते हैं । बादल उसकी पुकार सुनकर बरसते हैं और वह मान सहित सिर ऊँचा करके वर्षा की बूँदों का पान करता है ।

प्रश्न 9. तुलसीदास के काव्य की समीक्षा निम्नांकित के आधार पर कीजिए—

(i) मार्मिक प्रसंग (ii) अलंकार-प्रयोग (iii) काव्य-शैलियाँ (iv) भाषा ।

उत्तर–तुलसीदास महान् विद्वान और सगुण भक्ति धारा के रामाश्रयी शाखा के प्रतिनिधि भक्त कवि हुए हैं । इनका काव्य रामभक्ति का सागर है । 'रामचरितमानस' जैसे अनुपम ग्रंथ के रचयिता तुलसीदास का काव्य अनेक श्रेष्ठ गुणों का भंडार है । इसकी कतिपय विशेषताएँ निम्नांकित शीर्षकों के अन्तर्गत देखी जा सकती हैं—

(i) मार्मिक प्रसंग–'रामचरित मानस' तथा 'कवितावली', 'गीतावली' आदि रचनाओं में ऐसे अनेक स्थल हैं जो पाठक या श्रोता के मर्म को हिलाकर रख देते हैं, उसके हृदय को करुणा के सागर में डुबोकर रख देते हैं । उदाहरण के लिए राम का वनगमन और दशरथ विलाप, चित्रकूट में भरत-राम मिलाप, पंचवटी में सीताहरण और राम का वियोग दुःख, लक्ष्मण मूर्छा पर राम का विलाप, अयोध्या में कौशल्या आदि माताओं का दुःख आदि अनेक मर्मस्पर्शी प्रसंगों से तुलसीदास का काव्य भरा पड़ा है ।

(ii) अलंकार-प्रयोग–तुलसीदास समन्वयवादी भक्त कवि हुए हैं । इनके काव्य में अनेक सुन्दर अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग हुआ है । इन्होंने अलंकारों का केशव की भाँति दुराग्रहपूर्वक प्रयोग कहीं नहीं किया है । इनके काव्य में प्रमुख रूप से अनुप्रास, अनन्वय, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त, उदाहरण, स्मरण आदि अलंकारों का सहज प्रयोग हुआ है । अलंकारों के प्रयोग से इनके काव्य में सौन्दर्य वृद्धि ही हुई है, कहीं किसी प्रकार की दुरूहता या असुविधा की स्थिति उत्पन्न नहीं हुई है ।

(iii) काव्य-शैलियाँ–तुलसीदासजी ने अपने समन्वयवादी व्यक्तित्व के अनुसार सभी प्रचलित शैलियों को अपने काव्य में अपनाया है । 'रामचरितमानस' में दोहा-चौपाई शैली को अपनाया तो 'कवितावली' में कवित्त को स्थान दिया । विनय-पत्रिका, गीतावली आदि में सुन्दर गेय पदों की रचना की है । अपने काव्य में इन्होंने तद्युगीन साहित्यिक परम्पराओं तथा प्रचलित छंदों को स्थान देकर अपने समन्वयवादी दृष्टिकोण का पालन किया है ।

(iv) भाषा–तुलसीदासजी ने मुख्य रूप से अवधी भाषा को अपने काव्य में अपनाया है । 'रामचरितमानस' में आपने अवधी भाषा का सरल बोलचाल का रूप प्रयोग किया है । अवधी को बहुत ही सरस और सुबोध भाषा के रूप में प्रयुक्त करने में तुलसीदास की कोई समानता नहीं है । मलिक मुहम्मद जायसी की अवधी भाषा ठेठ और क्लिष्ट.है, उसमें इतनी सरलता और सरसता नहीं है जो तुलसीदास की भाषा में है ।

अवधी भाषा के अतिरिक्त ब्रजभाषा को भी कवि ने अपने काव्य में प्रयुक्त किया है । 'विनयपत्रिका' में ब्रजभाषा का प्रयोग कर कवि ने अपनी विद्वता और समन्वयशीलता का परिचय दिया है ।

तुलसीदास की भाषा प्रसंग और भावों के अनुरूप ही प्रयुक्त हुई है । प्रवाहशीलता इनकी भाषा का अन्य महत्त्वपूर्ण गुण है । गेयता का गुण इनके सम्पूर्ण काव्य में विद्यमान है । इनकी भाषा में भावानुकूल प्रसाद, माधुर्य और ओज गुण का सफल समावेश हुआ है ।

अध्याय 9

मीराँबाई

कवि परिचय–मीराँ बाई का जन्म लगभग सन् 1503 में तथा देहावसान सन् 1546 में माना जाता है । राजस्थान के मेड़ता राजकुल की राजकन्या और मेवाड़ के महाराणा साँगा की पुत्रवधु मीराँ जब अकाल वैद्यव्य को प्राप्त हुई तो कृष्ण भक्ति ही उसके जीवन का चरम लक्ष्य बन गई । वह संसार की समस्त चिन्ताओं से मुक्त होकर भक्ति-भाव में डूब गई । मीराँ पर संत सम्प्रदाय का गहरा प्रभाव पड़ा । मीराँ के काव्य में कबीर और जायसी के समान सगुण और निर्गुण दोनों ही भावनाओं का मिश्रण है । एक ओर मीराँ अपने प्रियतम श्री कृष्ण के चिर विरह से व्यथित और विकल है तो दूसरी ओर अद्वैत ब्रह्म की आराधिका है । उनके काव्य में विनय है, प्रार्थना है, प्रेम और विरह की टीस है, मिलन की मंगल कामना है और यदाकदा संसार की असारता का उपदेश है । मीराँ सब सांसारिक बंधनों को तोड़कर अपने आराध्य की शरण में मन की शान्ति खोजती रही है ।

मीराँ के काव्य की आत्मा 'भक्ति' है । उसकी भक्ति क़ान्त भाव की है । अत: उसमें माधुर्य भाव की अधिकता है । उनकी शैली मुक्तक है तथा शृंगार रस की प्रधानता है । उनके पद गेय हैं । उनकी मुख्य भाषा राजस्थानी है जिसमें ब्रज भाषा, गुजराती भाषा तथा पंजाबी भाषा के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है ।

मीराँ की कविताएँ सत्कार-संगीत हैं जो घर-घर और कंठ-कंठ में रम गई हैं । अलौकिक पति प्रेम में ढले हुए भक्ति रस ने मीराँ की संगीतधारा में दिव्य माधुरी घोली है ।

मीराँ की प्रमुख रचनाएँ—1. नरसी जी रो माहेरो, 2. मीराँ की मल्हार, 3. मीराँ की पदावली ।

पाठ-परिचय–प्रस्तुत पाठ में संकलित मीराँ के पदों और उसकी भगवान कृष्ण के प्रति अनन्य भक्ति प्रकट हुई है । उसके अनुसार ईश नाम की वन्दना में सार है, शेष संसार तो नश्वर है । भगवान के नाम स्मरण की महिमा का वर्णन करते हुए मीराँ ने उनका नाम

जपने का उपदेश दिया है । अन्य पदों में कृष्ण वियोग में मीराँ की विरह वेदना तथा मिलन की आतुरता व्यक्त हुई है । मीराँ ने पपीहा को पिव की वाणी बोलने से मना करते हुए अपनी वेदना को प्रकट किया है । कवयित्री ने वृन्दावन को सुन्दर बताते हुए उसकी विशेषताओं का भी उल्लेख किया है ।

पदावली

1. भज मन ! चरण कँवल...जम की फाँसी ।

शब्दार्थ–अविनासी = ईश्वर । दीसै = दिखाई देते हैं । तेताई = वे सब । चहर = दिनभर । जुगति = उपाय ।

व्याख्या–प्रस्तुत पद में मीराँ भगवान कृष्ण की भक्ति करने की प्रेरणा देती हुई अपने मन को संबोधित कर कहती है कि हे मन ! तू भगवान के चरण-कमलों का भजन कर क्योंकि इस संसार में ईश्वर का नाम ही सार है और जितने भी चर-अचर इस धरती और आकाश के बीच दिखाई देते हैं, वे सब नष्ट हो जाने वाले हैं । इस शरीर पर घमण्ड नहीं करना चाहिए क्योंकि यह तो एक दिन मिट्टी में मिल जाने वाला है । यह सारा संसार तो दिनभर की भाग-दौड़ के समान है जो साँझ होने पर समाप्त हो जाता है । मीराँ आडम्बरों का विरोध करती हुई कहती है कि भगवा रंग के वस्त्र पहनने से तथा घर त्याग कर संन्यासी बन जाने से क्या होता है ? जो व्यक्ति योगी बनकर भी संसार से मुक्ति का उपाय नहीं जान पाये वे फिर संसार में बार-बार जन्म लेंगे ।

मीराँ कहती है कि हे कृष्ण ! यह अबला (नारी) आपसे हाथ जोड़कर प्रार्थना करती है कि आप अपनी इस दासी के गले से यमराज की फाँसी को काट दीजिए, अर्थात् मोक्ष प्रदान कीजिए ।

विशेष–(1) मीराँ ने भगवान की भक्ति पर बल देते हुए अपनी मोक्ष की कामना की है ।

(2) आडम्बरों को निस्सार बताया है ।

(3) पद की भाषा सरल और आडम्बर रहित है ।

(4) पद गेय एवं मधुर है ।

2. मन रे परसि हरि...अगम तारण-तरण ।

शब्दार्थ–परसि = स्पर्श करना । ज्वाला = कष्ट । गरब = घमण्ड ।

व्याख्या–प्रस्तुत पद में भक्तिमती मीराँ भगवान के चरण-कमलों की महिमा का वर्णन करते हुए उनका स्पर्श करने के लिए अपने मन से कह रही है कि हे मन ! तू भगवान कृष्ण के चरणों का स्पर्श कर या इनकी भक्ति कर । ये बहुत ही सुगम, कमल के समान कोमल और संसार के तीनों प्रकार के कष्टों (दैहिक, दैविक और भौतिक) को हरण करने वाले हैं । भगवान के इन चरणों में भक्त प्रहलाद ने मन लगाया तो इन्द्र की पदवी को प्राप्त हुआ । ये वे ही चरण हैं जिन्होंने ध्रुव भक्त को भी अपनी शरण में लेकर अटल पद प्रदान किया । इन्हीं चरणों ने समस्त ब्रह्माण्ड को नापा है, सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में इन्हीं चरणों की महिमा व्याप्त है । मीराँ कहती है कि ये ही वे चरण हैं जिनका स्पर्श करने से पत्थर की शिला बनी हुई अहिल्या का भी उद्धार हो गया था और वह पुनः सुन्दर नारी बन गई थी । ये ही वे चरण हैं जिन्होंने यमुना की काली दह में कालिया नाग को नष्ट किया और ग्वाल-बालों के साथ लीलाएँ की थीं । जिन चरणों वाले भगवान कृष्ण ने गोवर्द्धन पर्वत को

उठाकर ब्रज की रक्षा की थी और इन्द्र के अभिमान का हरण किया था, मीराँ कहती है कि ऐसे श्रीकृष्ण इस अगम संसार-सागर से भी पार उतारने वाले हैं।

विशेष–(1) मीराँ ने भगवान की महिमा का गान करते हुए अपने उद्धार की कामना की है।

(2) भक्त प्रहलाद, ध्रुव, अहिल्या, नाग दमन लीला, गोवर्द्धन धारण आदि की ओर संकेत किया है।

3. मैंने राम रतन..हरखि जस गायो।

शब्दार्थ–वसत = वस्तु। अमोलक = अमूल्य। बधत = बढ़ता है। किरपा = कृपा। खेवटिया = नाविक। हरखि = प्रसन्न होकर।

व्याख्या–मीराँ भगवान के नाम को अमूल्य रत्न के रूप में व्यक्त करती हुई कहती है कि मैंने राम नाम या भगवान की भक्ति रूपी अमूल्य निधि प्राप्त कर ली है। यह ऐसी अमूल्य निधि है जो मैंने सत्गुरु की कृपा से अपनाया है। यह मुझे जन्म-जन्मातर तक की पूँजी मिल गयी है जिसे मैंने सारे संसार को खूब खिलाया-पिलाया है। यह राम नाम रूपी पूँजी न तो खर्च होती है और न ही कोई चोर ले जा सकते हैं, बल्कि यह दिनों-दिन बढ़ता ही है। मैंने सत की नाव बाँधी है और सत्गुरु को अपना नाविक माना है, इसी से मैंने संसार सागर को पार कर लिया है। मीराँ कहती है कि हे प्रभु! मैं आपका प्रसन्न होकर यशगान करती हूँ।

विशेष–(1) मीराँ ने प्रभु नाम को ही सर्वश्रेष्ट पूँजी माना है।

(2) पद में गेयता का गुण है किन्तु भाषा का कोई आडम्बर या चमत्कार नहीं है।

4. आली री मेरे नैणां..कहैं बिगड़ी।

शब्दार्थ–आली = सखी। नैणां = नयन। बाण = आदत। उर = हृदय। मूर = मूल, संजीवनी।

व्याख्या–अपने प्रियतम कृष्ण के विरह में तड़पती मीराँ अपनी सखी को सम्बोधित कर कहती है कि हे सखी! मेरे नेत्रों को कृष्ण के दर्शन की आदत पड़ गयी है। मेरे चित्त मैं कृष्ण की मधुर और मोहिनी छवि बस गई है, वह मेरे हृदय में आकर अड़ गई है और निकाले नहीं निकलती है। मैं उस प्रियतम कृष्ण की कब से अपने भवन में खड़ी-खड़ी प्रतीक्षा कर रही हूँ। मैं अपने प्राणों को प्रियतम रूपी संजीवनी बूँटी के बिना कैसे धारण करूँ? यह मीराँ तो गिरधर के हाथों बिक गयी है और लोग कहते हैं कि यह बिगड़ गई है।

विशेष–(1) कृष्ण के वियोग में मीराँ की मार्मिक वेदना प्रकट हुई है।

(2) मीराँ की कान्ता भाव की भक्ति का स्वरूप अभिव्यक्त हुआ है।

5. राम नाम रस..रंग में भीजै॥

शब्दार्थ–सरल हैं।

प्रसंग–यह अवतरण मीराँ द्वारा रचित 'पदावली' से संकलित है। इस पद में मीराँ ने नवधा भक्ति के अन्तर्गत नाम स्मरण की महिमा का वर्णन प्रस्तुत किया है।

व्याख्या–मीराँ सांसारिक माया-मोह से ग्रस्त मानव को सम्बोधित करती हुई कहती है कि हे मनुष्य! तू भगवान राम के नाम का रसपान कर, अर्थात् राम के नाम का

स्मरण करते हुए आनन्दमग्न बना रह । अरे मनुष्यों, तुम कुसंगति को त्यागकर प्रतिदिन सज्जनों की संगति में बैठते रहो और उनसे भगवान की महिमा की चर्चा सुनते रहो । तुम्हें अपने शरीर के भीतर मन में स्थित काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह को निकालकर बाहर कर देना चाहिए, अर्थात् इन दुर्गुणों, दोषों का परित्याग कर मन को पवित्र रखना चाहिए । मीराँ कहती है कि मेरे प्रभू एवं प्रियतम तो चतुर गिरधर श्रीकृष्ण हैं और मैं उन्हीं की प्रेमाभक्ति के रंग में भीगती रहती हूँ, अर्थात् मन को पवित्र रखकर भगवान की प्रेमाभक्ति में संलग्न रहना चाहिए तभी इस संसार से मुक्ति मिल सकती है ।

विशेष–(1) मीराँ ने अपने आराध्य के 'नाम स्मरण' गुण-कीर्तन आदि के द्वारा वैष्णव भक्ति का अनुसरण किया है ।

(2) पद मधुर और गेयता से युक्त है ।

6. मीराँ मगन भई..गिरधर पै बलि जाय ।

शब्दार्थ–अंचाय = आचमन करना (पीना) । सोवण = सोने । बिधन = बाधाएँ । बलि = न्यौछावर होना ।

व्याख्या–मीराँ भगवान कृष्ण के भजन और गुणगान करती हुई मगन रहती है यह उसके देवर विक्रमसिंह को अच्छा नहीं लगा और उसने मीराँ को मारने के लिए साँप का पिटारा भेजा जो मीराँ के हाथों में सौंप दिया गया । कृष्ण का उपहार समझकर नहा-धोकर जब मीराँ ने देखा तो वह साँप भी मीराँ के लिए सालिग्राम भगवान बन गया । पुनः विक्रमसिंह ने जहर का प्याला मीराँ के लिए भेजा । कृष्ण की कृपा से वह भी अमृत बन गया । जब मीराँ ने नहा-धोकर कृष्ण का नाम लेकर उसे पिया तो वह भी अमृत-पान तुल्य हो गया । इसके पश्चात् मीराँ के लिए उसने काँटों की शय्या कृष्ण के नाम से भिजवायी । साँझ होने पर जब मीराँ सोने लगी तो वह फूलों की सेज में बदल गयी ।

मीराँ कहती है कि मेरे स्वामी श्रीकृष्ण सदा मेरे मार्ग की बाधाओं को दूर रखते हैं । यह मीराँ तो उन्हीं के भजन-भावों में मस्त होकर घूमती रहती है और अपने प्रियतम गिरधर पर बलिहारी जाती है ।

विशेष–(1) प्रस्तुत पद में यही भाव व्यंजित है कि—

"जाको राखे साँइयाँ, मार सकै ना कोय ।"

(2) मीराँ की कृष्ण के प्रति अनन्य प्रेम-भक्ति अभिव्यक्त हुई है ।

(3) पद की भाषा सरल है ।

(4) पद मधुर और गेय है ।

7. चालो मन गंगा..कमल पै सीर ।

शब्दार्थ–कान्हो = कृष्ण । बलवीर = बलराम । मुगट = मुकुट । हीर = हीरे । सीर = सिर ।

व्याख्या–मीराँ भगवान की क्रीड़ा-स्थली और गंगा-यमुना जैसी पवित्र नदियों के प्रति अपनी श्रद्धा को प्रकट करती हुई कहती है कि हे मन ! अब तो गंगा-यमुना के किनारे चलो । गंगा और यमुना का निर्मल जल है और उसमें स्नान करने से शरीर पापों और कष्टों से मुक्त होकर शीतलता और मन शान्ति प्राप्त करता है । वहीं गंगा-यमुना के किनारे प्यारा कृष्ण भी अपने बड़े भाई बलराम को साथ लेकर बाँसुरी बजाता मिलेगा । उन प्यारे कृष्ण के सिर पर मोर पंखों से युक्त मुकुट शोभायमान होगा और उन्होंने पीले वस्त्र धारण

कर रखे होंगे । उनके कानों के कुण्डलों में हीरे झलक रहे होंगे । मीराँ कहती है कि हे प्रभु गिरधर ! आपके चरण-कमलों में मीराँ का सिर है अर्थात् मीराँ आपके चरणों में प्रणाम करती है, आप इसकी प्रार्थना सुनना ।

विशेष–(1) मीराँ का कृष्ण और उनसे संबंधित स्थलों एवं नदियों से प्रेम उनकी कृष्ण के प्रति प्रेमाभक्ति को प्रकट करता है ।

(2) कृष्ण का रूप-वर्णन सुन्दर बन पड़ा है ।

(3) पद में मीराँ के हृदय का माधुर्य छलकता-सा प्रतीत हो रहा है ।

8. आली, म्हाँनें लागे .... बिना नर फीको ।

शब्दार्थ–आली = सखी । म्हाँनें = मुझे । नीको = अच्छा । फीको = नीरस, व्यर्थ । वृन्दा = तुलसी ।

व्याख्या–श्रीकृष्ण की क्रीड़ा-स्थली वृंदावन क्षेत्र के प्रति अपने लगाव को मधुर और सुन्दर शब्दों में व्यक्त करती हुई मीराँ कहती है कि हे सखी ! मुझे यह वृन्दावन बहुत सुन्दर लगता है । वृन्दावन के घर-घर में तुलसी के पौधे और ठाकुरजी (भगवान की मूर्ति) की पूजा की जाती है और भगवान गोविन्द का दर्शन होता है । वहाँ यमुना जैसी पवित्र नदी का निर्मल जल पीने को मिलता है और दूध-दही का भोजन मिलता है । वहाँ वृन्दावन में मेरे प्रियतम भगवान कृष्ण तुलसी (वृन्दा) का मुकुट धारण कर सुशोभित होते हैं । वे रत्न-जटित सिंहासन पर विराजते हैं । वृन्दावन के कुञ्जो में राधा मुरली की मधुर ध्वनि सुनकर घूमती रहती है । मीराँ कहती है कि भगवान कृष्ण के भजनों के बिना या भगवान के गुणगान बिना मानव का जीवन फीका या निरर्थक है ।

विशेष–(1) मीराँ ने वृन्दावन के प्रति अपना आकर्षण व्यक्त कर कृष्ण भक्ति का ही परिचय दिया है ।

(2) प्रस्तुत पद में मधुर भाषा और भावों के साथ-साथ गेयता का गुण विद्यमान है ।

9. पपइया रे पिव .... रह्योइ ही न जाइ ॥

शब्दार्थ–पिव की = प्रियतम की, पावेली = पाएगी, थारो = तुम्हारे, राखेली = डालेगी, मरोड़ = ऐंठकर, कालर लूण = काला नमक, कूण = कौन, मेला = मिलन, मढ़ाऊँ = मढ़ाऊँगी, सोवनी = सोने से, सिरताज = आदरणीय, धान = धान्य, अन्न ।

प्रसंग–प्रस्तुत पद में मीराँ ने पपीहा के माध्यम से अपनी विरह व्यथा का अत्यन्त मार्मिक वर्णन प्रस्तुत किया है ।

व्याख्या–पपीहे को सम्बोधित करते हुए मीराँ कहती है कि पपीहा तू प्रियतम की वाणी मत बोल क्योंकि तेरी बोली से मुझे प्रियतम की याद हो आती है । यदि तू नहीं मानेगा तो तेरा स्वर सुनकर विरहिणी मीराँ तेरे पंखों को मरोड़ डालेगी । हे पपीहा ! मैं तेरी चोंच कटवाकर उस पर काला नमक छिड़क दूँगी । अरे पपीहा क्या तू नहीं जानता कि प्रियतम मेरा है और मैं प्रियतम की हूँ फिर भला पी-पी करके प्रियतम को पुकारने वाला तू कौन है ? यदि तेरी पी-पी सुनकर मेरा प्रियतम मुझसे मिल जायेगा तो तेरा स्वर बहुत अच्छा लगेगा, तब तो हे मेरे आदरणीय पपीहे! मैं तेरी चोंच को सोने की मढ़वा दूँगी ।

इसके पश्चात् कौवे को सम्बोधित करती हुई मीराँ कहती है कि हे कौवे मैं प्रियतम को पत्र लिखूँगी और तुम उन पत्रों को ले जाना। मेरे प्रियतम से यह संदेश कहना है कि उसकी मीराँ व्याकुल है और प्रियतम को याद करके अपने प्राणों को त्याग रही है। मेरे अन्तर्यामी प्रियतम से कहना कि वे जल्दी आकर मुझे दर्शन दें। उनके बिना मुझसे रहा नहीं जाता।

विशेष–(1) विरह भावना का परम्परागत वर्णन है।

(2) मीराँ के हृदय की व्याकुलता अभिव्यक्त हो रही है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

नोट–सही उत्तर का क्रमाक्षर दाहिनी ओर के कोष्ठक में लिखिये—

प्रश्न 1. 'अरज करूँ अबला कर जोरे, स्याम ! तुम्हारी दासी।'

मीराँ की इस उक्ति में भक्ति का कौनसा गुण प्रमुख है—

उत्तर–(ख) शरणागति।

प्रश्न 2. मीराँ की भक्ति किस प्रकार की थी ?

उत्तर–(क) दाम्पत्य भक्ति।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. 'दासि मीराँ लाल गिरधर, अगम तारण तरण', शीर्षक पद में उल्लिखित कृष्ण के कोई दो भक्तोद्धारक कर्म बतलाइये।

उत्तर–मीराँ के कृष्ण अपने भक्तों को कष्टों से मुक्ति प्रदान कर उनका उद्धार करने वाले हैं। उदाहरण के लिये उन्होंने कालिया नाग को नष्ट कर ग्वाल-बालों को कष्टों से मुक्ती दिलाई। इसी प्रकार इन्द्र के कोप से डूबते हुए ब्रजवासियों की रक्षा के लिये गोवर्द्धन पर्वत को धारण किया।

प्रश्न 4. 'कहा भयो है भगवा पहर्यां, घर तज भये संन्यासी।'

मीराँ इस पद के अनुसार भक्ति के लिये क्या परमावश्यक मानती हैं ?

उत्तर–मीराँ के अनुसार भगवान की सच्ची भक्ति के लिये पाखण्ड या आडम्बर की नहीं, सच्चे मन से भगवान का भजन करने की परमावश्यकता है।

प्रश्न 5. 'मीराँ गिरधर हाथ बिकानी, **लोग कहै बिगड़ी**।'

कालांकित शब्दों से मीराँ ने मुख्यत: किन लोगों की ओर संकेत किया है ?

उत्तर–मीराँ ने यहाँ उसके ससुराल पक्ष के उन लोगों की ओर संकेत किया है जो उसके भक्तिभाव का विरोध करते थे तथा उसके चरित्र पर लांछन लगाते थे। विशेष रूप से मीराँ का देवर विक्रम और उसकी सास की ओर संकेत है।

प्रश्न 6. 'मीराँ के प्रभु सदा सहाई राखे बिघन हटाय।'

मीराँ की भक्ति में राणाजी द्वारा डाले गये दो विघ्नों के नाम लिखिये।

उत्तर–मीराँ को मारने के लिये उन्होंने एक बार विषैले नाग का पिटारा भेजा तथा दूसरी बार जहर का प्याला भेजा।

प्रश्न 7. 'आली, म्हांनें लागे, वृन्दावन नीको ।'

मीराँ को किन विशेषताओं के कारण वृन्दावन प्रिय लगता है ? वहाँ की कोई दो विशेषताएँ लिखिये ।

उत्तर–(1) वृन्दावन में घर-घर में तुलसी और ठाकुरजी की पूजा तथा गोविन्द भगवान के दर्शन होते हैं ।

(2) वृन्दावन में निर्मल जल वाली यमुना बहती है ।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. मीराँ की भक्ति की विशेषताएँ सोदाहरण लिखिये ।

उत्तर–मीराँ एक कृष्ण भक्त कवयित्री थीं । वे भक्त पहले कवयित्री बाद में थीं । उन्होंने अपने भक्तिपूर्ण भावों को ही पद्यमय भाषा में अभिव्यक्त किया है । मीराँ के काव्य का भाव पक्ष बहुत सशक्त है, परन्तु कला पक्ष में कोई विशेष बात नहीं है ।

मीराँ कृष्ण की भक्त थीं, वे कृष्ण को ही अपना पति मानती थीं, अत: उनकी भक्ति कान्ता भाव या दाम्पत्य भाव की थी । उन्होंने अपने आराध्य प्रियतम कृष्ण से मिलन की व्याकुलता को ही अपने पदों में गाया है । इनकी भक्ति में विरह वेदना भी विद्यमान है । वे कृष्ण के दर्शनों के लिये तड़पती हैं । वे कहती हैं—

"कोई कहियो रें मोहन आवक की ।
आवन की मन भावन की, कोई कहियो रे मोहन आवन की ।
ये दोऊ नैन कह्यो नहीं मानें, नदिया बहे जैसे सावन की ।"

कृष्ण की सुन्दर मनमोहिनी मूर्ति मीराँ के नेत्रों में समायी हुई है—

"आली री म्हारे नैणां बाण पड़ी ।
चित्त चढ़ी म्हारे माधुरी मूरति, उर में आन अड़ी ।
........................जीवन मूर जड़ी ।"

इन पंक्तियों में मीराँ की विरह वेदना का मार्मिक चित्रण हुआ है ।

"पपइया रे पीव की वाणी न बोल, ' पद में मीराँ की प्रियतम से मिलन की व्याकुलता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है ।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि मीराँ की भक्ति अपने प्रियतम कृष्ण के चरणों में सम्पूर्ण समर्पण भाव से युक्त है । वह स्वयं को कृष्ण के चरणों की दासी मानती है और 'मेरे तो गिरधर गोपाल', कहकर अपने भाव स्पष्ट शब्दों में प्रकट कर देती है ।

प्रश्न 9. मीराँ के काव्य की समालोचना निम्नांकित विचार-बिन्दुओं के आधार पर कीजिए—

(i) भाव पक्ष (ii) कला पक्ष ।

उत्तर–मीराँ कोई महान् कवयित्री नहीं थीं, वे एक महान् भक्त कवयित्री थीं । उनके काव्य का भाव पक्ष जितना सशक्त है उतना कला पक्ष नहीं है ।

(i) भाव पक्ष–

मीराँ कृष्ण की भक्त थी और कृष्ण को ही अपना पति मानती थी । उनकी प्रेमाभक्ति में विरहानुभूति चरम सीमा पर है । उनका हृदय अपने आराध्य एवं प्रियतम से मिलने के लिये सदैव व्याकुल रहता है । उसके नेत्रों में श्याम की मोहिनी छवि बसी हुई है । गिरधर गोपाल के अतिरिक्त दुनिया में उसका कोई नहीं है । वह गाती है—

'मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई ।
जाके सिर मोर मुकुट मेरो पति सोई ।'

मीराँ ने कृष्ण की भक्ति सोच-समझकर तथा प्रेम के बदले में अपनायी है, वह कहती है—

'माई री मैं तो लियो गोविन्दा मोल ।
.....................आवत प्रेम के मोल ।'

अपने आराध्य प्रियतम कृष्ण से मिलन की व्याकुलता और मीराँ की विरह वेदना तो उनके सम्पूर्ण काव्य में समाई हुई है । वे विरह की गायिका और वेदना की प्रतिमूर्ति हैं ।

(ii) कला पक्ष—मीराँ के काव्य का कला पक्ष यद्यपि अधिक सशक्त नहीं है तथापि इसकी अपनी विशेषताएँ हैं । मीराँ के पद बहुत ही लोकप्रिय हुए हैं, इसका कारण इनकी सरल और सरस भाषा, संगीतात्मकता और गेयता एवं भावों की अनुकूलता है ।

मीराँ के काव्य की भाषा राजस्थानी एवं ब्रज मुख्य हैं तथा गुजराती, पंजाबी आदि के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है । अलंकारिकता या अन्य चमत्कारों का इसमें अभाव ही है ।

प्रश्न 10. निम्नांकित अवतरण की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

चालो मन गंगा जमना तीर...............चरण कमल में सीर ।

उत्तर—पाठ के व्याख्या भाग में पद्य संख्या सात की व्याख्या देखिये ।

अध्याय 10

रहीम

कवि परिचय—मुगल बादशाह अकबर के नजदीकी मित्र एवं अभिभावक बैरम खाँ के पुत्र अब्दुल रहीम खानखाना का जन्म सन् 1553 में हुआ था, अकबर की हुकूमत भारत के प्रत्येक क्षेत्र में बढ़ती जा रही थी किन्तु चित्तौड़ के महाराणा प्रताप को अनेक प्रकार से अपने अधीन करने का प्रयास किया लेकिन प्रताप का देशप्रेमी मन अकबर के दरबार में नहीं झुका, उसी समय अकबर ने रहीम को प्रताप के विरुद्ध हल्दीघाटी में सेनापति बनाकर युद्ध करने के लिये भेजा था, प्रताप और पुत्र अमरसिंह के कर्त्तव्य और मानव प्रेम की भावना के सामने रहीम का सहृदय मन, आश्वस्त भाव से समर्पित हो गया था ।

रहीम को अरबी-फारसी, संस्कृत, तुर्की और हिन्दी भाषा का पर्याप्त ज्ञान था, परोपकार और विनम्रता स्वभावत: सत्य बन गई थी, अनुसंधानकर्त्ता और आलोचक यह मानते हैं, रहीम के मन में गोस्वामी तुलसीदास के प्रति गहरे अनुराग की भावना थी, कुछ समय तक चित्रकूट पर निवास किया था, जाति से मुसलमान होने के बाद भी रहीम का सहृदय मन श्रीकृष्ण भक्ति की ओर आसक्त था, श्रीकृष्ण भक्ति का भाव इनकी कविताओं का प्रमुख स्वर है । सांसारिक ज्ञान और अनुभव क्षेत्र व्यापक था, कविता द्वारा उदारता, सहनशीलता और संवेदनशीलता का यथार्थ के आधार पर चित्रण किया है । मानव जीवन

की अन्तरंग भावभूमि से भली-भाँति परिचित होने के कारण मुहावरे और लोकोक्तियों का सार्थक प्रयोग किया है। रहीम ने अपने जीवनकाल में—दोहावली, बरवैनायिका, शृंगार सोरठा, भावनात्मक, रास पंचाध्यायी, आदि काव्य रचनाएँ लिखी हैं, फारसी शैली का प्रयोग कम है, हिन्दी-संस्कृत और संस्कृत-फारसी का मिलाजुला प्रयोग अधिक है, भाषा में सरल शब्दों का प्रयोग करते हुए भावों की गंभीरता प्रस्तुत की है।

काव्यकला के आधार पर रहीम ने शृंगार, नीति भक्ति की रचनाएँ प्रस्तुत की हैं, रचनाओं का विषय भक्ति आंदोलन से प्रभावित है, नीति और श्रृंगार की विषय-वस्तु दरबारी वातावरण से अपनायी है, नीतिपरक रचनाओं में वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना है, उपदेश की भावना मार्मिकता और संवेदनशीलता पर आधारित है, दोहा, सोरठा और बरवै के साथ कवित्त, सवैया, आदि छन्द विधान अपनाया है, यूँ तो रहीम का मन दोहा छंद के प्रति विशेष रूप से आकर्षित दिखाई देता है, बरवैनायिका भेद रचना में रीतिकालीन काव्य परम्परा का निर्वाह करते हुये गृहस्थ जीवन की सरस झाँकियाँ प्रस्तुत की हैं, ब्रंज और अवधी भाषा का प्रयोग जनसाधारण के निकट पहुँच गया है।

रहीम की नीति सम्बन्धी सीख का विषय लोकजीवन की आस्थाओं से चुना गया है, जिसके कारण सामान्य व्यवहार की शैली और जीवन-दर्शन से विषय-वस्तु का चुनाव किया, इसी कारण आज भी रहीम की रचनाएँ भारतीय जनमानस के लिये महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती हैं, इस महान् सन्त का देहावसान सन् 1626 को हुआ, बादशाह अकबर के नव-रत्नों में यह सूर्य भी शामिल था। एक बार रहीम का एक नौकर छुट्टी लेकर घर आ गया, उसकी नववधू पहली बार ससुराल आयी थी, उसने पति से कुछ दिन अधिक रुकने को कहा, किन्तु नौकरी छूट जाने के भय से उसने स्वीकार नहीं किया। उस विदुषी स्त्री ने निम्नांकित बरवै लिखकर उसे लिफाफे में बंद कर पति को देते हुये कहा कि यह अपने स्वामी को दे देना—

"प्रेम प्रीति को बिरवा, चल्यो लगाय।
सींचन की सुधि लीज्यो, मुरझिन जाय।"

इसके द्वारा नारी हृदय की वेदना समझ ली और उस नौकर को लम्बे समय तक की छुट्टी दे दी तथा उसकी पत्नी के लिये आभूषण और वस्त्र भी भिजवाए। रहीम ने इस छंद के आधार पर बरवै छंद में नायिका भेद पर एक ग्रन्थ की रचना की। रहीम उदार और दानवीरता के लिये प्रसिद्ध थे।

व्याख्या भाग

दोहा

(1)

"एके साधे .... अघाय।"

कठिन शब्दार्थ—एके = एक, साधे = स्वीकार करना या मानना, सब = सभी, सधै = साधना या पाना, साधे = आश्रय या साधना या सहारा देना, मूलहिं = मूल या जड़ अथवा गहराई, सींचिबो = सींचना, फूले-फल = प्रसन्नतापूर्वक विकास, अघाय = तृप्त होना।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत दोहा बादशाह अकबर के नवरत्नों में एक रत्न कविवर रहीम कृत दोहे संग्रह से अवतरित है। रहीम की मान्यता है कि मानव जीवन की सफलता

और पूर्णता के लिए उद्देश्यपूर्ण तथ्य से सभी कार्य सिद्ध होते हैं, क्योंकि मूल केन्द्र पर ध्यान केन्द्रित रखने से सभी प्रकार की समृद्धियाँ स्वयं ही प्राप्त हो जाती हैं।

विशेष–(1) लोक-जीवन पर आधारित उदाहरणों से जीवन निर्माण की दिशा प्रदान की गई है।

(2)

"ओछो काम...न कोय।"

कठिन शब्दार्थ–ओछो = छोटा, न बड़ाई होय = प्रशंसा नहीं होती, हनुमंत = हनुमान, गिरधर = शक्तिशाली, कहै = कहना, कोय = कोई भी।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रहीम द्वारा लिखित दोहा संग्रह से लिया गया है। यदि छोटा व्यक्ति बड़े-बड़े कार्य करने लगे, तब भी प्रशंसा का पात्र नहीं बनता, जिस प्रकार हनुमानजी लक्ष्मण की मूर्च्छा तोड़ने के लिये पूरा पर्वत ही उठा लाये थे, उनको कोई भी गिरधर नहीं कहता, वह तो राम भक्त के रूप में ही प्रसिद्ध रहे हैं।

विशेष–(1) भावात्मक शैली के साथ उदाहरण अलंकार का सौन्दर्य है।

(3)

"कदली, सीप...दीन।"

कठिन शब्दार्थ–कदली = केला, सीप = सीपी, भुजंग = साँप, स्वाति = एक नक्षत्र, गुन = गुण, संगति = साथ, तैसोई = उसी प्रकार का, फल = परिणाम

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना भक्तिकालीन हिन्दी साहित्य के इतिहास में उत्तरार्द्ध भाग के अन्तर्गत रहीम द्वारा लिखित दोहे रचना से अवतरित है। महान् भक्त कवि रहीम ने बताया कि केला, सीपी और साँप के मुख में स्वाति नक्षत्र की एक बूँद तीन प्रकार के गुण देती है अर्थात् केले में पड़ने से कपूर, सीपी में मोती और साँप के मुख में पड़ने से हलाहल (विष) और मणि बन जाती है। इसी प्रकार जो मनुष्य जैसी संगति में बैठता है उसको वैसा ही फल मिलता है।

विशेष–(1) प्रसिद्ध प्रतीकों का प्रयोग करके कवि का मन जीवन के प्रति समन्वयात्मक दृष्टि प्रस्तुत करता है।

(4)

"तासों ही...पियास।"

कठिन शब्दार्थ–तासों = उससे, कछु = कुछ, पाइए = प्राप्त करना, कीजै = करना, जाकी = जिसकी, आस = आशा, रीते = खाली, सरवर = तालाब, बुझै = शान्त होना, पियास = प्यास।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रहीम कृत दोहा संग्रह से अवतरित है, जिस मनुष्य की जैसी आशा या अपेक्षा होती है उसी से कुछ पाया जा सकता है, क्योंकि आशाहीन व्यक्ति वैसा ही होता है जैसे जलहीन सरोवर पर जाने से किसी की प्यास नहीं बुझती।

विशेष–(1) उदाहरण अलंकार के साथ लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति का प्रयोग किया है।

(5)

"थोथे बादर... पाछिली बात।"

कठिन शब्दार्थ–थोथे = खाली, बादर = बादल, क्वांर = माह का महीना, ज्यों = जैसे, घहरात = गड़गड़ाहट, धनी = धनवान, निर्धन = धनहीन, भये = होना, पाछिली = पिछली या बीती हुई।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रहीमकृत दोहा संग्रह से अवतरित है। क्वार माह के थोड़े से खाली बादल आसमान में गर्जना करते हैं, इसी प्रकार धनवान मनुष्य निर्धन हो जाता है तो अपने पुराने दिनों के सुख को बार-बार स्मरण करता है।

विशेष–(1) नीति प्रधान वातावरण पौराणिक सत्य पर आधारित है।

(6)

''कौन बड़ाई...रहीम।''

कठिन शब्दार्थ–कौन = क्या, बड़ाइं = प्रशंसा, जलधि = समुद्र, मिलि = मिलकर, गंग = गंगा, धीम = धैर्य, केहि = किसको, प्रभुता = शक्ति, नहिं = नहीं, घटी = कम होना, पर घर = दूसरे के घर।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा भक्तिकालीन हिन्दी काव्य संसार में धार्मिक एकता के लिये जीवन भर प्रयास करने वाले दानवीर रहीमकृत दोहे रचना से अवतरित है। रहीम ने बताया कि गंगा के नाम की महिमा सागर में मिल जाने के बाद समाप्त हो जाती है, अर्थात् गंगा का नाम शेष नहीं रहता, इसी प्रकार दूसरों के घर जाने से मानव का सम्मान कम हो जाता है।

विशेष–(1) रहीम का मन लोक आस्थाओं के प्रति जागरूक है।

(7)

''खरच बढ्यो...की मीन।''

कठिन शब्दार्थ–खरच बढ्यो = खर्च बढ़ना, उद्यम घट्यो = व्यापार कमजोर होना, नृपति निठुर = राजा की निष्ठुरता, थोरे = थोड़े, मीन = मछली।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रहीम कृत दोहा संग्रह से अवतरित है। मनुष्य का खर्च बढ़ जावे, व्यापार का सिलसिला कमजोर हो जावे और राजा का मन कठोर या निष्ठुर हो जाये तो उस मनुष्य की स्थिति वैसी ही हो जाती है जैसे थोड़े से जल में मछली व्याकुल हो जाती है, उसी प्रकार खर्च, व्यापार और राजा का संतुलन ठीक न रहने पर आन्तरिक शक्ति कमजोर हो जाती है।

विशेष–(1) उदाहरण अलंकार में नीति प्रधान सत्य का प्रयोग मार्मिक है।

(8)

''खीरा सिर...सजाय।''

कठिन शब्दार्थ–काटिए = काटना, मलियत = मलना, करुए = कड़वे, मुखन = मुख, चहिअत = इच्छा, इहै = इसी प्रकार की, सजाय = सजा या दण्ड।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रहीमकृत दोहा संग्रह से अवतरित है, ऋतुफल खीरा का मुख काटकर नमक लगाकर उसका कड़वापन दूर किया जाता है उसी प्रकार जो लोग असत्य भाषण करते हैं, उनकी दशा खीरे के मुख पर नमक मलने के समान होनी चाहिए।

विशेष–(1) नीति का स्वरूप मानव के व्यवहारिक पहलू को प्रभावित करता है।

(9)

''अधम वचन...जग माँह ।''

कठिन शब्दार्थ–अधम = नीच या गिरा हुआ, वचन = वाणी, काको = किसका, फल्यो = स्वीकार करना, बैठि = बैठकर, ताड़ की छाँह = ताड़ के पेड़ की छाया। नीरस = रसहीन, जग = संसार, माँह = अंदर।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा भक्तिकालीन हिन्दी कविता के इतिहास में श्री कृष्ण भक्त कवि रहीम कृत नीति प्रधान 'दोहा रचना' से अवतरित है।

महान् संत रहीम ने बताया कि नीचता से भरा वचन किसी भी उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल नहीं हो सका, ताड़ के पेड़ की छाया में बैठना असम्भव है उसी प्रकार नीच को सफलता असम्भव है। रहीम ने बताया कि यह संसार रसहीन है, विपत्ति आने पर यह साथ नहीं देता।

(10)

''अनकीन्हीं...न होय ।''

कठिन शब्दार्थ–अनकीन्हीं = कहे बिना, सोवत = सोते हुए, जागै = जगना, ताहि = उसको, सिखाई = सिखाना, जगाइबो = जगाना, उचित न होय = उचित न होना।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रहीम कृत दोहा संग्रह से अवतरित है। अनकही बातों को जो सोते समय, जागते समय करता है, ऐसे मनुष्य को ज्ञानवान बनाना असम्भव है। क्योंकि नीच मनुष्य को शिक्षा की बातें अच्छी नहीं लगतीं।

विशेष–(1) सज्जन और नीच का मनोभाव व्यक्त किया है।

(11)

''अनुचित...चकोर ।''

कठिन शब्दार्थ–अनुचित = उचित न होना, लघु = छोटा, करहिं = करना, बड़ेन = बड़े, जोर = शक्ति, ससि = चन्द्रमा, संजोग = मिलन, पचवत = व्याकुल, आगि = आगे, चकोर = पक्षी।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रहीमकृत दोहा संग्रह से अवतरित है। जो मनुष्य उचित-अनुचित का विचार किए बिना ही शक्तिशालियों से शक्ति का जोर भरता है, वह उसी प्रकार हीनता वाला है जैसे चन्द्रमा के सामने स्वाति नक्षत्र के जल की बूँद पीने के लिये चकोर पिउ-पिउ की रट लगाता है फिर भी सफलता नहीं मिलती।

विशेष–(1) लक्षणा शब्द-शक्ति और वैदर्भी रीति का प्रयोग है।

(2) कर्म प्रधान जीव की एकता का रहस्य उजागर किया है।

(3) लक्षण-लक्षणा शब्द शक्ति से वैदर्भी रीति के प्रयोग लोक आस्थाओं के अनुरूप हैं।

(12)

''कहि रहीम...मीत ।''

कठिन शब्दार्थ–कहि = कहना, सम्पति = धन, सगे = आत्मीय, बनत = बनना, बहुत = अनेक, बहु रीत = अनेक रीति, विपति = समस्या, साँचे = सच्चे, मीत = मित्र।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहे भक्तिकालीन हिन्दी काव्य जगत् में श्रीकृष्ण के परम भक्त, नीतिशास्त्री रहीमकृत दोहा रचना से अवतरित है । रहीम कहते हैं—धन पास में हो तो अनेक लोग, अनेक प्रकार से अपने बन जाते हैं, जीवन में समस्याएँ आने पर जो मनुष्य साथ देता है वही सच्चा मित्र होता है ।

विशेष–(1) सम्पत्ति और विपत्ति में सच्चे मित्र की पहचान का लक्षण बताया है ।

(13)

"कहु रहीम..पछिताय ।"

कठिन शब्दार्थ–कहु = कहना, केतिक = कितनी ही, गई = जाना, बिहाय= छोड़कर, परि = पड़ना, अंत = अंतिम, पछिताय = प्रायश्चित ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रहीम कृत दोहा संग्रह से अवतरित है । कवि ने कहा है कि कितनों का ही प्रभाव रहा और कितनों को ही माया, ममता और मोह ने पराजित कर दिया, मनुष्य इन सबके वशीभूत होकर अंत में पछताता रहता है ।

विशेष–(1) माया-मोह जीवन को सत्य से विमुख करते हैं, सच्चा भाव कर्म के प्रति समर्पित भाव में हैं ।

(14)

"कहु रहीम..फाटत अंग ।"

कठिन शब्दार्थ–निभै = निर्वाह होना, केर = केला, डोलत = घूमना, आपने = अपने, फाटत = फटना, अंग = शरीर का हिस्सा ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रहीम कृत दोहा संग्रह से अवतरित है । बेर और केला का निर्वाह एक साथ नहीं होता, केला तो रस प्रदान करता है और बेर पहले शरीर के अंगों को फाड़ देता है या घायल कर देता है ।

विशेष–(1) लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति के साथ भावात्मक शैली की प्रधानता है ।

(15)

"आदर घटे..जग माहिं ।"

कठिन शब्दार्थ– आदर = सम्मान, घटे = कम होना, नरेस = राजा, ढिंग = पास में, बसे = निवास करना, कोटिन = करोड़ों, धिक = धिक्कार, जग = संसार, माहिं = अन्दर ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता भक्तिकालीन हिन्दी काव्य जगत् में अकबर के नवरत्नों में से एक नीतिज्ञ कृष्ण भक्त रहीम कृत दोहा संग्रह से अवतरित है ।

रहीम कहते हैं कि राजा के पास निवास करने से सम्मान की भावना समाप्त हो जाती है, अपमान से भरा जीवन ही प्राप्त होता रहे तो संसार में ऐसे जीवन को धिक्कार है ।

विशेष–(1) राजा और प्रजा के मूल्यों का विवेचन है ।

(16)

"आप न काहू..बबूल ।"

कठिन शब्दार्थ–डार-पात = डाल-पत्ते, औरन = दूसरों को, रोकत = रोकना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रहीम द्वारा विरचित दोहा संग्रह से अवतरित है। कवि ने कहा है कि डाल-पत्ते, फल-फूल स्वयं में किसी लाभ के नहीं हैं। इनमें परोपकार की भावना है, किन्तु बबूल का काँटेदार पेड़ और उसकी डालें दूसरों का रास्ता रोकती हैं, इसी प्रकार सज्जन मनुष्य परोपकारी और दुर्जन मनुष्य बबूल के पेड़ की तरह रास्ता रोकने वाले ही होते हैं।

विशेष–(1) परोपकाराय संता विभूतय का सत्य व्यावहारिक रूप में है।

(17)

''अब रहीम...न राम।''

कठिन शब्दार्थ–मुश्किल = परेशानी, पड़ी = होना, गाढ़े दोऊ काम = दोनों कार्य कठिन हैं, साँचे = सत्य, जग नहीं= ससार नहीं, झूठे = असत्य।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रहीम द्वारा लिखित दोहा रचना से अवतरित है। रहीम कहते हैं कि अब परेशानी उपस्थित हो गई है कि सत्य बोलते हुए जीवन-यापन किया जावे तो संसार गतिशील नहीं होने देता और असत्य वचन से राम नहीं मिलता, ये दोनों स्थितियाँ कठोर हो गई हैं।

विशेष–(1) सारोपा लक्षणा और भावात्मक शैली का समन्वय है।

(18)

''काज परै...मौर।''

कठिन शब्दार्थ–काज परै = काम पड़ने पर, कछु और = कुछ और, भँवरी = भँवर, सिरावत = सिराना-प्रवाहित करना, मौर = मुकुट।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना भक्तिकालीन हिन्दी काव्य जगत् में श्रीकृष्ण भक्त एवं नीतिज्ञ रहीमकृत दोहा रचना से अवतरित है। रहीम ने बताया कि कार्य पड़ने पर जो लोग मधुर नजर आते हैं और कार्य पूरा हो जाने पर मुख मोड़ लेते हैं, वे तो नदी में पड़े भँवर के समान स्वार्थी होते हैं।

विशेष–(1) लोक जीवन के प्रतीकों से जीवन निर्माण की दिशाएँ दी गई हैं।
(2) भावनात्मक एकता में राष्ट्रीयता का विकास प्रमुख माना है।

(19)

''टूटे सुजन...मुक्ताहार।''

कठिन शब्दार्थ–सुजन = अपने लोग, पोइए = पिरोना, मुक्ताहार = मोतियों का हार।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रहीम कृत दोहा संग्रह से अवतरित है। रहीम कहते हैं कि नाराज परिजन को मना लीजिए क्योंकि सज्जन सौ बार टूटकर भी जुड़ जाते हैं, बार-बार मनाना वैसे ही है जैसे टूटे हुए मोतियों के हार को बार-बार पिरोकर तैयार किया जाता है, अतः सज्जन का स्वभाव जुड़ना ही होता है।

विशेष–(1) विचारात्मक शैली में व्यंजना शब्द-शक्ति की प्रधानता है।

(20)

''तें रहीम...की ओर।''

कठिन शब्दार्थ–आपुनो = अपना, चारु = सुन्दर, चकोर = पक्षी, निसि = रात्रि, वासर = दिन ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रहीमकृत दोहा संग्रह से अवतरित है । जो मनुष्य अपने मन को वश में कर लेता है, वह चकोर की सुन्दरता के समान दिन-रात श्रीकृष्ण के नाम की रट लगाता रहता है ।

विशेष–(1) प्रसिद्ध प्रतीक चकोर की भावना के समान प्रभु भक्ति का रहस्य माना है ।

(21)

"कहि रहीम..जे खात ।"

कठिन शब्दार्थ–घटे = कम होना, धनिन = धनवान, बेंचि = बेचकर ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रहीमकृत दोहा संग्रह से अवतरित है, धन या सम्पत्ति बढ़कर घट जाती है तो धनी मनुष्य निर्धन होने पर पूर्व बातों को दुहराता है, जो लोग घास काटकर और उसे बेचकर जीवन-यापन करते हैं, उनके लिये धन का घटना या बढ़ना महत्त्वहीन होता है ।

विशेष–(1) व्यंजना शब्द-शक्ति का नाद सौन्दर्य है ।

(2) लोक प्रतीकों की सरलता में मानवतावादी सिद्धान्त का सरल रूप प्रस्तुत है ।

सोरठा

(1)

"ओछे..कारो लगे ।"

कठिन शब्दार्थ–ओछे = छोटे या तुच्छ, सतसंग = साथ, तजहु = छोड़ना, अंगार ज्यों = आग के समान, तातो = गर्म, जारै = जलाना, सीरो = ठंडा, कारो = काला ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना हिन्दी काव्य जगत् में भक्तिकालीन साहित्य के अन्तर्गत रहीम कृत सोरठा संग्रह से अवतरित है ।

रहीम कहते हैं कि तुच्छ मनुष्य का साथ जलते हुए अंगारे (धारा) के समान छोड़ देना चाहिए क्योंकि जब तक गर्म रहता है तब तक शरीर के अंगों को जलाता है और ठंडा होने पर काला लगता है, दोनों ही स्थितियों में त्यागने योग्य है ।

विशेष–(1) विश्वास-अविश्वास के अन्तर का सत्य लोक मान्यताओं के साथ अंकित है ।

(2)

"रहिमन..को गनै ।"

कठिन शब्दार्थ–प्रीति = प्रेम, साहब = स्वामी, भावै नहीं = अच्छी नहीं लगती, जिनके अनगिनत मीत = जिनके अनेकानेक मित्र, गनै = गिनना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रहीमकृत सोरठा संग्रह से अवतरित है । प्रेम की सच्चाई स्वामी को अच्छी नहीं लगती, क्योंकि स्वामी के अनेकानेक मित्र और चाहने वाले होते हैं, गरीबों को कोई नहीं गिनता ।

विशेष–(1) जीवन मूल्यों की पहचान में लोक प्रतीक सार्थक हैं ।

(3)

''रहिमन जग...रस नहीं ।''

कठिन शब्दार्थ–जग की रीति = संसार की परम्परा, देख्यो = देखना, ऊख = गन्ना, ताऊ = उस, परतीति = प्रतीति, जहाँ गाँठ तहँ रस नहीं = जहाँ पर गाँठ है वहाँ रस नहीं है ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रहीमकृत सोरठा संग्रह से अवतरित है । संसार का यह नियम है कि मनुष्य गन्ने में रस देखता है, इसी रस से भरे गन्ने में जहाँ-जहाँ गाँठ है वहाँ-वहाँ रस नहीं मिलता, इसी प्रकार सज्जनता का मूल्य भावनात्मक एकता में है, जहाँ विपरीत वातावरण मिलता है वहाँ सच्चा प्रेम नहीं मिलता ।

विशेष–(1) लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति और वैदर्भी रीति का समन्वय है ।

पद

''कमल-दल...की बानि ।''

कठिन शब्दार्थ–कमल-दल = कमल-समूह , नैननि = आँखें, उनमानि = उन्मान, बिसरत नाहिं = भुलाया नहीं जाता, मंद-मंद मुसकानि = धीरे-धीरे मुस्कराना, दसननि दुति = दाँतों की शोभा, चपल = बिजली, वसुधा = पृथ्वी, सुधापगी बतरानि = अमृत के समान मीठी बातें, चित उर बिसाल = हृदय के भावों की विशालता, मुकुतमाल = मोतियों की माला, नृत्य = नाच, मनोहर = सुन्दर, अनुदिन = रात-दिन, चित ते न टरति = हृदय से अलग न होना, सकल = सम्पूर्ण, बानि = आदत ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद रचना भक्तिकालीन हिन्दी साहित्य में अकबर के नवरत्नों में से एक रहीमकृत पद रचना से अवतरित है । कविवर रहीम कहते हैं कि कमलों के समूह के समान आँखों की सुन्दरता का अनुमान नहीं लगाया जा सकता, प्रभु की धीमी-धीमी मुस्कराहट मन से अलग नहीं होती, उनके दाँतों की अपार शोभा बिजली के समान चमकती है, धरती के धैर्य के समान अमृत की तरह मीठी बातें हैं, जो मोतियों की मालासी हृदय पर चढ़ी रहती हैं, नृत्य के समय पीला वस्त्र हवा के झोंकों के साथ फहरावा है, रात-दिन श्रीकृष्ण के गुणों का गुणगान ब्रजभूमि में प्रवाहित रहता है, तब रहीम कहते हैं—भगवान श्रीकृष्ण की श्यामल आकृति एक पल के लिये हृदय से अलग नहीं होती ।

विशेष–(1) भगवान श्रीकृष्ण का सौन्दर्य में भक्ति भावना का गहरा रंग आत्मीयता भरा है ।

(2) श्रृंगार रस, लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति और भावात्मक शैली की प्रधानता है ।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

प्रश्न 1. रहीम की रचनाओं की लोकप्रियता का प्रमुख कारण क्या है ?

(क) उपदेशात्मकता

(ख) अनुभूति की सहजता

(ग) छोटे छंदों का प्रयोग

(घ) भाषा की सरलता ।

उत्तर–(ख)

प्रश्न 2. "रहिमन भँवरी के भये नदी सिरावत मौर ।"
ऐसा क्यों किया जाता है ?

(क) मौर के अनुपयोगी हो जाने के कारण,
(ख) मौर को नदी जल में गलाने के विचार से,
(ग) मौर के साथ मांगलिकता का संबंध होने से,
(घ) मौर को अनिष्ट करने वालों से बचाने के विचार से ।

उत्तर–(ग)

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. "आछो काम बड़े करै, तो न लड़ाई होय
ज्यों रहीम हनुमन्त को, गिरधर कहै न कोय ।"
रहीम के अनुसार हनुमंत ने क्या ओछा काम किया था ?

उत्तर–रहीम के अनुसार हनुमान ने लक्ष्मणजी की मूर्च्छा समाप्त करने के लिये श्रीराम के आदेश का पालन किया था, जो संजीवनी बूटी लाने के समय पूरा पर्वत ही उठा लाए थे ।

प्रश्न 4. 'कदली, सीप, भुजंग मुख स्वाति एक गुण तीन'
एक स्वाति बूँद कौन से तीन गुणों में बदल जाती है ?

उत्तर–स्वाति नक्षत्र के जल की एक बूँद केले के पौधे में पड़े तो कपूर, सीपी में पड़े तो मोती और साँप के मुख में पड़ जावे तो विष बन जाती है ।

प्रश्न 5. 'केहि की प्रभुता नहिं घटी, पर घर गये रहीम ।'
रहीम के इस कथन के समर्थन में कोई दो उदाहरण दीजिये ।

उत्तर–रहीम के इस कथन के समर्थन में निम्नांकित उदाहरण देखे गये हैं—

(1) आदर घटे नरेस ढिंग, बसे रहे कछु नाहिं ।
जो रहीम को तिन मिले, धिक जीवन जग माहिं ।

(2) रहिमन कीन्हीं प्रीति, साहब को भावै नहीं ।
जिनके अगनित मीत, हमें गरीबन को गनै ॥

प्रश्न 6. 'ज्यों ससि के संजोग ते **पचवत आगि चकोर**'
कालांकित कथन को स्पष्ट कीजिये ।

उत्तर–चकोर पक्षी अथाह सागर के जल में निवास करता है, लगातार पिड-पिड की रट लगाता है, क्योंकि वह स्वाति नक्षत्र के जल की बूँद पाकर अमर होना चाहता है ।

प्रश्न 7. 'कहु रहीम कैसे निभै, बेर केर को संग ।'
इस कथन में बेर और केर (केला) किनके प्रतीक हैं ?

उत्तर–रहीम के अनुसार बेर-दुष्टता का प्रतीक माना जाता है, केर (केला) सज्जनता का प्रतीक है ।

प्रश्न 8. 'ओछे को सतसंग, रहिमन तजहुँ अंगार ज्यों ।'
रहीम ने ओछे की संगति से क्या हानियाँ बताई हैं ?

उत्तर–जो मनुष्य संस्कृति और सदाचार के आधार पर जीवन-यापन नहीं करता उस मनुष्य का साथ जलती हुई आग की तरह होता है, ऐसा मनुष्य कहीं भी, किसी भी समय हानि पहुँचा सकता है । अत: ओछे मनुष्य का साथ सार्थक नहीं होता ।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 9. निम्नांकित के आधार पर रहीम के काव्य की समीक्षा कीजिए—

(1) वर्ण्य-विषय

(2) छंद-योजना

(3) भाषा

(4) लोकप्रियता ।

उत्तर–(1) वर्ण्य-विषय–

रहीम की कविता का मुख्य विषय श्रीकृष्ण भक्ति एवं नीतिपरक मूल्य हैं । श्री कृष्ण भक्ति का स्वरूप अष्टछाप के कवियों के आधार पर भगवान की लीलाओं का अनेकता भरा सौन्दर्य प्रस्तुत किया है, सरलता और सरसता का समावेश श्रृंगार के साथ इस प्रकार देखा गया है—

"कमल दल नैननि की उनमानि
बिसरत नाहिं सखी मो मन ते मंद-मंद मुसकानि ।

नीति प्रधान रूप को उद्घाटित करने के लिये लोक जीवन की निकटता से गहरा संबंध स्थापित कर लिया है, लोककल्याण की दिशा में लोक समन्वयवादी सिद्धान्त मानवतावादी बना है—

(1) एके साधे सब सधे, सब साधे सध जाय ।
रहिमन मूलहिं सींचिबो, फलै-फूले अघाय ॥

(2) कहि रहीम संपति सगे, बनत बहुत बहु रीत ।
विपति कसौटी जे कसें, तेही साँचे मीत ॥"

(2) छंद-योजना–

कविवर रहीम का काव्य दोहा, बरवै, सोरठा और कवित्त के रूप में मिलता है, श्रीकृष्ण भक्ति और नीति के साथ श्रृंगारपरक सौन्दर्य प्रमुख विषय रहा है, दोहा और सोरठा के द्वारा जीवन निर्माण की दिशाएँ अंकित की हैं—

(1) "खरच बढ्यो, उद्यम घट्यो, नृपति निठुर मन कीन ।
कहु रहीम कैसे जिए थोरे जल की मीन ।"

सोरठा छंद योजना द्वारा नीतिस्वरूप मान्यताएँ कोमल एवं मार्मिक हैं, जैसे—

(1) "ओछे को सतसंग, रहिमन तजहुँ अंगार ज्यों ।
तातो जारै अंग, सीरो पै कारो लगै ।"

(3) भाषा–

रहीम का मन हमेशा मानवतावाद की ओर झुका रहा, इसलिये लोक-कल्याण की दिशा में परोपकाराय संता-विभूतय का सत्य प्रस्तुत करते हुए ब्रज और अवधी भाषा का प्रयोग भक्ति, नीति और श्रृंगार के क्षेत्र में मनोहारी है । लोक प्रतीकों से सत्य की प्रतीति देखे—

(1) "खीरा सिर तें काटिए मलियत नमक बनाय ।
रहिमन करुए मुखन को चहिअत इहै सजाय ॥

(2) "रहिमन कीन्हों प्रीति साहब को भावै नहीं ।
जिनके अगनित मीत, हमें गरीबन को गनै ।"

(4) लोकप्रियता–

महात्मा रहीम का काव्य जन-साधारण के मन की सच्चाई का बयान करता है। अपनी बात कहने में सरल भाषा का प्रयोग ब्रज और अवधी के निकट होने के कारण विदुर नीति के समान सत्य का अनुसंधान करते हैं, लोक जीवन की परम्पराओं का अनुगमन होने के कारण लोकप्रियता का भाव अधिक प्रबल हो गया है—

"थोथे बादर क्वार के, ज्यों रहीम घहरात।
धनी-पुरुष निर्धन भये, करै पाछिली बात॥"

इसी प्रकार सच्चे मित्र की पहचान बताते हैं—

"कहि रहीम संपति सगे, बनत बहुत बहु रीत।
विपति कसौटी जे कसे, तेही साँचे मीत।"

प्रश्न 10. निम्नांकित अवतरण की सप्रसंग व्याख्या कीजिये—

"चढ़ी रे चित उर बिसाल की मुकुतमाल थहरानि।
नृत्य समय पीताम्बरहू की फहरि-फहरि फहरानि।
अनुदिन श्री वृन्दावन ब्रजते आवन आवन जानि।
अल रहीम चित ते न टरति है सकल स्याम की बानि"

कठिन शब्दार्थ–चित उर विशाल की = हृदय की विशालता, मुकुता माल= मोतियों की माला, नृत्य समय = नाच के समय, पीताम्बर = पीला वस्त्र भी, अनुदिन = रात-दिन, श्री = शोभा, आवन = आना, जानि = जानकर, चित ते न टरति है = हृदय से अलग नहीं होती, सकल = सम्पूर्ण, स्याम = श्रीकृष्ण, बानि = आदत।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद रचना का यह अंश बादशाह अकबर के नवरत्नों में से एक नीतिज्ञ, भक्ति एवं श्रृंगार के उपासक रहीम कृत पद रचना से अवतरित है। भगवान श्रीकृष्ण का सौन्दर्य, उनके हृदय की विशालता मोतियों के हार से सुशोभित है, नृत्य करते समय उनका पीताम्बर लहर-लहर लहराता है, रात-दिन उनकी शोभा का गुणगान ब्रज के सभी लोग खुले हृदय से करते हैं, रहीम कहते हैं कि उनके हृदय से प्रभु की आकृति, श्यामल रूप, एक पल के लिये भी अलग नहीं होता।

विशेष–(1) प्रभु कृष्ण की सौन्दर्य शक्ति का श्रृंगार रस में निरूपण है।

(2) श्रीकृष्ण के रूप-सौन्दर्य का वर्णन लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति के द्वारा हुआ है।

(3) भावों की मार्मिकता भावात्मकता शैली में समन्वित है।

अध्याय 11

रसखान

कवि परिचय–रसखान भक्तिकाल के सुप्रसिद्ध लोकप्रिय कवि हैं, पर उनके जीवन के सम्बन्ध में बहुत कम जानकारी प्राप्त होती है, खोजों के आधार पर केवल इतना

ही पता चलता है कि वह बादशाह वंश के थे, शिवसिंह सरोज में इनका नाम सैय्यद इब्राहीम पिहानी भी मिलता है, दो सौ बावन वैष्णव की वार्ता के अनुसार वह पहले किसी बनिए के लड़के पर आसक्त थे, एक दिन वैष्णव ने उनसे कहा कि तुम अधिक प्रेम वैश्य के लड़के से करते हो उतना यदि ईश्वर से करते तो तुम्हारी मुक्ति हो जाती, रसखान ने पूछा कि ईश्वर कौन है, कहाँ रहते हैं, तब वैष्णव ने उन्हें श्रीनाथजी का एक चित्र दिखाया, चित्र देखते ही लड़के से उनका मन हट गया और गोकुल चले आये, रसखान की सच्ची लगन देखकर विट्ठलनाथ ने भी उन्हें अपना लिया। दूसरी कथा यह है कि रसखान एक स्त्री पर आसक्त थे, वह रूपवती और अभिमानी थी, रसखान का तिरस्कार करती रहती थी, इतने पर भी रसखान उसे प्यार करते थे, एक दिन श्रीमद् भागवत का फारसी अनुवाद पढ़ रहे थे और गोपियों का विरह वर्णन पढ़ते-पढ़ते उन्होंने सोचा कि जिसको हजारों गोपियाँ प्यार करती हैं, उन्हीं से क्यों न प्रेम किया जाय, इसी भावावेश में वह उस स्त्री को छोड़कर वृन्दावन चले आये। 'प्रेम वाटिका' के इस दोहे से कथन की पुष्टि होती है—

"तोरि मानिनी तैंहियो, फेरि मोहिनी मान।
प्रेमदेव की छविहिं लखि, भए भियाँ रसखान।"

अनुमान के आधार पर इनका जन्म संवत् 1590 वि. माना जाता है। मृत्यु सं. 1676 वि. मानी जाती है। रसखान द्वारा लिखित सुजान रसखान और प्रेम वाटिका दो कृतियाँ मिलती हैं, कवित्त, सवैया, दोहा छंद में काव्य-रचनाएँ मिलती हैं।

रसखान का लौकिक प्रेम धीरे-धीरे अलौकिक प्रेम में बदलने लगा, ईश्वर के प्रति प्रेम प्रदर्शित करना ही उनके भक्तिभाव का प्रमुख गुण है, भक्ति और प्रेम को मूल विषय के रूप में प्रस्तुत किया। रसखान का काव्य भावुकता से ओत-प्रोत है, प्रेम वर्णन में किसी प्रकार की अश्लीलता का समावेश नहीं होने दिया है, श्रृंगार की व्यंजना में रूप माधुर्य और मुरली की मनोहर ध्वनि का गोपियों पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसका मनोमुग्धकारी विवेचन है—

"कौन ठगौरी भरी हरि आज, बजाई है बाँसुरिया रस भीनी।
तान सुनी जिनही जिनही तिनही तिन लाज विदाकर दीनी।"

रसखान हिन्दू धर्म के देवी-देवताओं से प्रभावित थे। कृष्ण, राम, शंकर आदि देवताओं के प्रति श्रद्धा व्यक्त की है, किन्तु आराध्य देव के रूप में श्रीकृष्ण को ही स्वीकार किया है। रसखान किसी प्रकार की मुक्ति नहीं चाहते, वे तो कृष्ण के ही सम्पर्क में रहने की अभिलाषा व्यक्त करते हैं—

"बैन वहीं उनको गुन गाइऔ कान वहीं उन बैन सों सानी,
हाथ वहीं उन गात सरै, अरु पांय वही जुवही अनुजानी।"

महाकवि रसखान की काव्यभाषा ब्रज ही है, किसी प्रकार के चमत्कार की आवश्यकता पर बल नहीं दिया है। सरलता, सरसता और भाषा की गंभीरता का लालित्यपूर्ण प्रयोग है। हिन्दी के देशज और साहित्यिक शब्दों का सरलतापूर्वक प्रयोग किया है। उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, श्लेष, अनुप्रास अलंकारों की सफल योजना हुई है। अतः रसखान के काव्य में तन्मयता और उल्लास के साथ मार्मिकता काव्य की प्रमुख पहचान है।

व्याख्या-भाग
सुजान-रसखान
सवैया
(1)

"मानुष हों...की डारन।"

कठिन शब्दार्थ–मानुष = मनुष्य, बसौं = निवास करना, ग्वारन = ग्वाल, बाल, चरौं = चरना, नित = प्रतिदिन, धेनु = गाय, मँझारन = मध्य, पाहन = पत्थर, गिरि = पर्वत, धर्‍यो = धारण किया, कर = हाथ, पुरन्दर = इन्द्र, खग = पक्षी, बसेरो = निवास करना, कालिन्दी = यमुना, कूल = किनारा, कदंब की डारन = कदम्ब के पेड़ों की डालें।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत छंद रचना भक्तिकालीन काव्य में श्रीकृष्ण की वैष्णव उपासना पद्धति के प्रति समर्पित महाकवि रसखान द्वारा लिखित सुजान-रसखान कृति से अवतरित है। रसखान, प्रभु कृष्ण के श्री चरणों में समर्पित होकर निवेदन करते हैं। यदि वे मनुष्य हों तो ब्रज और गोकुल के गाँवों में ग्वाल-बालों के साथ विहार करते रहें, यदि वे पशु हों तो इसमें रसखान का क्या दोष, वे तो नन्द बाबा की गायों के बीच चरते रहें, यदि पत्थर हों तो उसी पर्वत का पत्थर बनें जिसको इन्द्र के क्रोध से गोकुलवासियों के साथ प्रभु ने अपनी उँगली पर उठा लिया था, यदि पक्षी हों, तो यमुना के किनारे कदम्ब के पेड़ों की डालों पर निवास करते रहें जहाँ प्रभु की मुरली की ध्वनि सुनाई दे सकेगी और आनन्द की परम अनुभूति होगी।

विशेष–(1) भक्ति भावना का मार्मिक रूप में निरूपण है।

(2) भावात्मक शैली के साथ व्यंजना शब्द-शक्ति का प्रयोग सार्थक है।

(3) श्रृंगार रस में अनुप्रास अलंकार का योग भाव शक्ति का अगम रूप है।

(2)

"या लकुटी...ऊपर वारौं।"

कठिन शब्दार्थ–लकुटी = लाठी, कामरिया = कम्बल, पुर = तीनों लोक, तजि = छोड़कर, डारौं = न्यौछावर करना, आठहुँ सिद्धि = आठ प्रकार की सिद्धि, नवौनिधि को सुख = नौ प्रकार का सुख, गाइ चराइ बिसारौं = गायों को चराते हुए भुला दूँ, वन, बाग तड़ाग निहारौं = वन, बाग, सरोवरों को देखूँ, केतिक = करोड़ों, कलधौत के धाम = सुन्दरता के भण्डार।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत छंद योजना भक्तिकालीन काव्य जगत् में श्रीकृष्ण भक्ति की रसधारा में तन्मय महाकवि रसखान द्वारा लिखित सुजान रस नामक कृति से अवतरित है। रसखान कवि की मान्यता है कि प्रभु कृष्ण की लाठी और कम्बल पर तीनों लोकों के राज्य को सहज ही न्यौछावर किया जा सकता है। प्रभु मिलन के लिये आठ प्रकार की सिद्धियाँ और नौ प्रकार के रस से उत्पन्न सुख को नंद बाबा की गायों को चराते हुये भुलाया जा सकता है, रसखान का प्रेमी मन कहता है—ब्रजभूमि के वन, बाग, सरोवरों को देखते हुए ही आत्मसंतोष की भावना रखता है, करोड़ों प्रकार के सौन्दर्य के भण्डार को

करील की कुंजों के ऊपर न्यौछावर करके श्रीकृष्ण भक्ति में तन्मय रहूँ, ऐसी अभिलाषा है।

विशेष–(1) भक्त और भगवान के मध्य अलौकिक शोभा का वर्णन मनोहारी है।

(2) सानुप्रासिक शब्दावाली में सवैया छंद का प्रयोग है।

(3) श्रृंगार रस की सुन्दर योजना में लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति का भावात्मक प्रयोग हृदयग्राह्य है।

(3)

"मोरपखा..धरौंगी।"

कठिन शब्दार्थ–मोरपखा सिर ऊपर = मोरपंख जिनके सिर या मस्तक पर हैं, राखिहौं = रखना, माल = माला, गरै = गला, पहिरौंगी = पहनना, ओढ़ि = ओढ़कर, पीताम्बर = पीला वस्त्र, लकुटी = लाठी, ग्वालिन = ग्वालबालाओं, संग = साथ, भावतो = अच्छा लगना, स्वांग = नाटक, मुरलीधर = कृष्ण, अधरान = होठों पर, धरी = रखी।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत छंद रचना भक्तिकालीन हिन्दी काव्य जगत् में कृष्ण भक्ति मार्ग में श्रेष्ठ कवि रसखान द्वारा लिखित सुजान रस कृति से अवतरित है। भगवान श्री कृष्ण के मस्तक के ऊपर मोरपंख सुशोभित हो रहा है, घुँघराले बाल भैंरों की माला के समान प्रतीत हो रहे हैं, पीला वस्त्र ओढ़कर, लाठी हाथ में लेकर ग्वाल बालाओं के साथ विहार करता है, रसखान कहते हैं—श्री कृष्ण इन आकृति-प्रकृतियों में सुन्दर लगता है, उसी की लीलाओं में जीवन की परम अनुभूति करना ही प्रमुख पाथेय (आधार) बन गया है। श्रीकृष्ण की यह मुरली उन के होठों पर ही विराजमान रहती है, जिसका सौन्दर्य प्रभु के होठों के कारण बढ़ गया है।

विशेष–(1) प्रभु श्रीकृष्ण के सौन्दर्य की मनोरम झाँकी हृदयग्राह्य रूप में लोक साधना का विषय बनी है।

(2) लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति द्वारा प्रभु लीला और मुरली की महिमा का सत्य प्रस्तुत किया है।

(3) श्रृंगार रस, भावात्मक शैली और वैदर्भी रीति का समन्वय है।

(4)

"गावैं गुनी..नाच नचावत।"

कठिन शब्दार्थ–गावैं = गाना, गुनी = ज्ञानवान, सारद = शारदा या सरस्वती, सेस = ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गुन-गावत = गुणों को गाते हैं, नाम अनंत = ईश्वर अन्तहीन है, गनेस = गणेश, ब्रह्मा त्रिलोचन = ब्रह्मा और शंकर, पार न पावत = अंत नहीं मिलता, जोगी = योगी, जती = जप, तपसी = तपस्वी, अरु = और, निरन्तर = लगातार, जाहि = जिसको, समाधि लगावत = समाधि लगाना, ताहि = उसी को (श्रीकृष्ण को) अहीर की छोहरियाँ = यादवों की कन्याएँ, छछिया भरि छाछ पै = थोड़ी छाछ पर, नाच नचावत = नाच करवाती हैं।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद्य भक्तिकालीन हिन्दी काव्य क्षेत्र में वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित सुजान रस से अवतरित है। महान् कवि रसखान कहते हैं—जिस प्रभु कृष्ण के गुणों का गनिका, गंधर्व, सरस्वती, विष्णु आदि गुणगान करते हैं, गणेश उस अन्तहीन रूप का गुणगान करते हैं, ब्रह्मा और शंकर जिसका किनारा पाने में सफल

नहीं होते, योगी-तपी और सिद्ध लगातार जिसको पाने के लिये समाधि लगाते हैं, उसी प्रभु कृष्ण को यादवों की कन्याएँ थोड़ी सी छाछ के लिये अनेक प्रकार से नाच नचाती हैं या नाच करवाती हैं या लीला करती हैं।

विशेष–(1) श्रीकृष्ण के लीलावतार रूप को गोपियों के अलावा कोई देव तथा तपस्वी जानने में सफल नहीं हो सका है।

(2) श्रृंगार की भावना में भावात्मक शैली की व्यापकता लक्षणा शब्द-शक्ति से युक्त है।

(3) अनुप्रास अलंकार द्वारा सवैया छंद का सौन्दर्य मनोरम हो गया है।

(5)

"कान्ह भए...बँसुरी रहिहै।"

कठिन शब्दार्थ–कान्ह भये बस बाँसुरी के = श्रीकृष्ण बाँसुरी के अधीन हो गये, चहिहै = अभिलाषा, निस, द्यौस = रात-दिन, संग = साथ, सौतिन तापन क्यों सहिहै = इस सौत मुरली के ताप को क्यों सहन करें, जिन मोहि लियो मनमोहन = जिसने श्रीकृष्ण को मोह लिया है, सदा हमकों दहिहै = हमेशा हमको जलाती है, मिलि आओ सबै सखी भाग चलैं = सब सुखी मिलकर भाग चलें, ब्रज में बाँसुरी रहिहै = ब्रज में बाँसुरी ही रहेगी।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद रचना हिन्दी काव्य संसार में भक्ति कालीन काव्य परम्परा के अन्तर्गत वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित सुजान रस से अवतरित है। ब्रज की सभी सखियाँ मिलकर कहती हैं कि श्रीकृष्ण तो बाँसुरी के अधीन होकर रह गये हैं, अब हमकों क्यों चाहेंगे ? यह बाँसुरी दिन-रात श्रीकृष्ण के साथ ही लगी रहती है, हम इस सौत के द्वारा दिए गये ताप को भला कैसे सहन कर सकती हैं ? इस मुरली ने तो मनमोहन को भली प्रकार आकर्षित कर लिया है, हम सभी को यह जलाती रहती है, इसलिये सभी सखियाँ मिलकर इस ब्रजभूमि से भाग चलें, क्योंकि ब्रज भूमि में बाँसुरी का ही राज हो गया है।

विशेष–(1) गोपियों की प्रेम भावना का सत्य अलौकिक अनुभूति के साथ समन्वित है।

(2) श्रृंगार भावना में गोपियों की बाँसुरी सौत के समान प्रतीत होती है।

(3) लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति और वैदर्भी रीति द्वारा अर्थ की व्यापकता मिलती है।

(6)

"धूर भरे अति...माखन रोटी।"

कठिन शब्दार्थ–धूर भरे अति शोभित स्याम जू = श्रीकृष्ण धूल में भरे हुए सुशोभित हो रहे हैं, सिर सुन्दर चोटी = सिर पर चोटी सुन्दर प्रतीत होती है, खेलत खात फिरैं अँगाना = आँगन में खेलते-खाते घूम रहे हैं, पग पैंजनी बाजती = पैरों में पैंजनी बज रही है, पीरी कछोटी = पीली लँगोट है, या छवि को = इस सौन्दर्य को, बिलोकत = देखना, बारत = न्यौछावर करना, काम-कला निधि कोटी = कामदेव की करोड़ों कलाएँ, काग के भाग = कौए के भाग्य, सजनी = सखि, हरिहाथ सों = श्रीकृष्ण के हाथ से।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्तिकालीन परम्परा के अन्तर्गत वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित सुजान रस से अवतरित है।

भगवान श्रीकृष्ण धूल से भरे हुए अत्यन्त सौन्दर्यशाली प्रतीत हो रहे हैं, वैसी ही सुन्दर चोटी सिर पर विराजमान है, पीली कछनी बाँधकर, पैरों में पैंजनी पहने हुए आँगन में खेलते-खाते घूम रहे हैं, इस अलौकिक सौन्दर्य को देखकर कामदेव की करोड़ों कलाओं को न्यौछावर किया जा सकता है। एक सखी दूसरी सखी से कहती है कि कौए के भाग्य सराहनीय हैं जो प्रभु के हाथ से माखन रोटी ले गया।

विशेष–(1) श्रीकृष्ण की सौन्दर्य लीला और बाह्य प्रकृति के साथ आन्तरिक सत्यता का मूल्यांकन सजीव है।

(2) श्रृंगार रस की छाया में उभरते हुए भावात्मक सौन्दर्य में अनुप्रास अलंकार की योजना है।

(3) भाव प्रधान शैली में नाद सौन्दर्य की व्यापकता आत्मपरिचय का वास्तविक मूल्य है।

(7)

"बंसी बजावत..नन्द के द्वारे।"

कठिन शब्दार्थ–बंसी बजावत आनि कढ़ो = बंसी बजाता हुआ निकला, अली = भौंरा, श्रीकृष्ण, कछु टोना सो डारैं = जादू सा कर गया, हेरि चिते = चारों ओर देखकर, तिरछी करि दृष्टि = नजर को टेढ़ी करके, मोहन मूठि सी मारैं = श्रीकृष्ण आकर्षण का सत्य दे गया, ताही घरी सों = उसी समय से, परी धरी सेज पै = धरती रूपी चारपाई पर पड़ी है, प्यारी न बोलति = राधाजी बोलती नहीं हैं, प्रानहुँ वारै = प्राणों को न्यौछावर करती है, राधिका जीहै = राधाजी जीवित रहें, हलाहल = विष, नंद के द्वारे = नंद बाबा के घर के सामने।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना भक्तिकालीन हिन्दी साहित्य के इतिहास में वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित सुजान रस से अवतरित है। एक सखी दूसरी सखी से कहती है—जब से श्रीकृष्ण वंशी बजाते हुए इन गलियों से निकले हैं, तब से सभी के मन पर जादू सा हो गया है, चारों ओर देखकर तिरछी चितवन से सभी गोपियों को अपनी ओर आकर्षित कर गया है। उसी समय से राधाजी प्रेम के वशीभूत होकर धरती रूपी चारपाई पर लेटी हैं और अपने प्राणों को श्रीकृष्ण पर न्यौछावर करती हैं, तब सखियाँ कहती हैं—राधाजी जीवन धारण करती हैं तो सब कुछ ठीक हो जावेगा, नहीं तो सभी गोपियाँ नंद के द्वारे विष पीकर प्राण त्याग देंगी।

विशेष–(1) श्रीकृष्ण के प्रेमालाप का गोपियों के मन पर मार्मिक प्रभाव है।

(2) श्रृंगार रस की योजना में सवैया छंद से नाद सौन्दर्य अनुप्रास अलंकार में संगठित है।

(3) भावात्मक शैली में लक्षणा शब्द-शक्ति द्वारा गोपियों के हृदय की प्रेम व्यंजना श्रेष्ठ है।

(8)

"प्रान वही..मनभायो।

कठिन शब्दार्थ–रिझि जापर = उस पर प्रसन्न हों, रूप वही जिहि वाहि रिझायो = सौन्दर्य वही सार्थक है, जिस पर कृष्ण प्रसन्न हों, सीस = सिर, परसे = स्पर्श किए, पद = पैर, अंग = शरीर, परसायो = स्पर्श किया, मन भायो = मन को अच्छा लगने वाला।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना भक्तिकालीन साहित्य के इतिहास में वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित सुजान रस से अवतरित है । महाकवि रसखान कहते हैं कि प्राण वही श्रेष्ठ हैं जो श्रीकृष्ण पर न्यौछावर होते रहें, सौन्दर्य वही उत्तम है जिस ओर श्रीकृष्ण आकर्षित हों, सिर वही सार्थक है जो श्रीकृष्ण के चरणों में झुकता रहे, शरीर वही सफल है जो प्रभु के शरीर का स्पर्श पाता रहे, दूध वही श्रेष्ठ है जिसको श्रीकृष्ण ने गायों से दुहा हो, भाव वही मनोरम है जो प्रभु स्मरण में लीन रहे, प्रभु की लीला लगातार कहने के बाद भी शब्दों में प्रस्तुत नहीं की जा सकती है ।

विशेष–(1) भावनात्मक एकता का स्वर भक्ति भावना में लीलावतार के प्रति समर्पित है ।

(2) शान्त रस में नाद-सौन्दर्य की प्रधानता से लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति की व्यापकता है ।

(3) विचारात्मक शैली से भक्ति भावना का मर्यादा प्रधान रूप मिलता है ।

प्रेम-वाटिका

दोहा

(1)

"प्रेम-प्रेम सोउ..रोय ।"

कठिन शब्दार्थ–सोउ कहत = सब कहते हैं, प्रेम न जानत कोय = प्रेम को कोई नहीं जानता, जन = प्राणी, जगत = संसार ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा भक्तिकाल के वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित प्रेम-वाटिका से अवतरित है । प्रेम का नाम तो सभी लेते और कहते हैं किन्तु प्रेम की वास्तविकता से कोई भी परिचित नहीं है, जो मनुष्य हृदय की सरसता के आधार पर प्रेम को पहचान लेता है वह अमर हो जाता है ।

विशेष–(1) कवि ने प्रेम की पावन महिमा का वर्णन ब्रज भाषा में नाद-सौन्दर्य के साथ किया है ।

(2)

"प्रेम अगम..रसखान ।"

कठिन शब्दार्थ–प्रेम अगम अनुपम अमित = प्रेम का स्वरूप अगम, मनोरम और अमृत के समान है, सागर = समुद्र, सरित = रसयुक्त, बखान = वर्णन करना; जो आवत एहि ढिंग बहुरि = जो फिर से पास आता है ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित प्रेम-वाटिका से अवतरित है, प्रेम का पथ अगम (जहाँ पहुँचना कठिन है) अत्यन्त मनोरम सौन्दर्य से युक्त, अमृत के समान अलौकिक सुख देने वाला है, सागर के समान विशाल और गहरा है, जो मनुष्य पावन प्रेम के निकट आ जाते हैं, वे रस के भण्डार में लीन रहते हैं ।

विशेष–श्रृंगार रस में भक्ति भावना का सौन्दर्य प्रेम में परिभाषित है ।

(3)

"प्रेम रूप..अनमेल ।"

कठिन शब्दार्थ–प्रेम रूप दर्पन = प्रेम का सौन्दर्य दर्पण के समान पावन, रुचे = अच्छा लगना, अजूबो = अनोखा, यामें = इसमें, लखि = दिखाई देना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित प्रेम-वाटिका से अवतरित है। प्रेम का पावन रूप दर्पण के समान निर्मल और पवित्र है, यह आश्चर्ययुक्त प्रेम का खेल जिसको अच्छा लगने लगता है, उसी में अपना रूप दिखाई देता है, बार-बार यह प्रेम अनमेल रूप में दिखाई देता है।

विशेष–लक्षणा, व्यंजना और वैदर्भी रीति है।

(4)

''कमलतंतु...अनिवार।''

कठिन शब्दार्थ–कमलतन्तु सौं छीन = कमलनाल, खड्ग की धार = तलवार की धार, अति सूधो = अत्यन्त सीधा, बहुरि = फिर से, प्रेमपंथ = प्रेम का रास्ता, अनिवार = कठिन।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा भक्तिकालीन हिन्दी काव्य जगत में वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित प्रेम-वाटिका से अवतरित है। प्रेम का पथ अत्यन्त कठिन है, अत्यन्त सीधा है, अत्यन्त टेढ़ा है. कमल नाल के समान कोमल है, तलवार की धार के समान प्रखर है।

विशेष–प्रेम की महिमा अपरम्पार है, समर्पण से सत्य का साक्षात्कार होता है।

(5)

''शास्त्रन...रसखान।''

कठिन शब्दार्थ–शास्त्रन पढ़ि = शास्त्रों को पढ़कर, जान्यौ = जानना।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा वैष्णव कवि रसखान द्वारा लिखित प्रेम-वाटिका से अवतरित है, ज्ञानी लोग शास्त्रों को पढ़कर ज्ञानवान हो गये, मौलवी कुरान पढ़कर अल्लाह के ज्ञानी हो गये, किन्तु प्रभु कृष्ण के प्रति जिसने समर्पित भाव नहीं अपनाया, वह प्रेम की वास्तविकता से अपरिचित ही रहा है।

विशेष–श्रृंगार रस की पूर्णता प्रभु दर्शन से ही सम्भव है।

(6)

''काम, क्रोध...मुनिवर्य।''

कठिन शब्दार्थ–मात्सर्य = ईर्ष्या, मुनिवर्य = श्रेष्ठ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा वैष्णव भक्ति भावना में श्रेष्ठ कवि रसखान द्वारा लिखित प्रेम-वाटिका से अवतरित है। मुनि, ज्ञानियों में श्रेष्ठ यह कहते हैं—काम, क्रोध, अहंकार, मोह, भय, लोभ, द्रोह, ईर्ष्या आदि से जिसको प्रेम है, वह प्रभु प्रेम को जानने में सफल नहीं हो सकता।

विशेष–(1) लक्षणा और वैदर्भी रीति में नाद-सौन्दर्य है।

(7)

''अति सूषम...इकरस भरपूर।''

कठिन शब्दार्थ–अति सूषम = अत्यन्त सूक्ष्म, कोमल अतिहि = अत्यन्त कोमल, अति पतरो = अत्यन्त पतला, अति दूर = अत्यन्त दूर, नित इकरस भरपूर = प्रतिपल एक ही रस से भरपूर है।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा भक्तिकालीन साहित्य के इतिहास में वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित प्रेम वाटिका से अवतरित है । प्रेम का पथ अत्यन्त सूक्ष्म, अत्यन्त कोमल, अत्यन्त पतला, अत्यन्त दूर है, यह तो नित्य-प्रति एक ही रस में भरपूर रहता है ।

विशेष–प्रेम का स्वरूप चराचर संसार से परे का सत्य है ।

(8)

''प्रेम–प्रेम..उसांस ।''

कठिन शब्दार्थ–कठिन प्रेम की फाँस = प्रेम का पथ पीड़ादायक, प्रान तरफि निकरै नहीं = प्राण तड़पकर भी नहीं निकलते, केवल चलत उसांस = केवल साँस चलती है ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा वैष्ण भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित प्रेम वाटिका से अवतरित है । प्रेम का नाम सभी लेते हैं और कहते हैं, प्रेम की पीड़ा अत्यन्त कष्टदायक है, प्राण तड़पकर भी निकलते नहीं हैं, केवल साँस ही चलती है ।

विशेष–(1) श्रृंगार भावना में जीवन मूल्यों को प्रेममय बनाने का संकेत है ।

(9)

''ज्ञान, ध्यान..एक अनेक ।''

कठिन शब्दार्थ–मतौ = बुद्धि, विवेक = ज्ञान, बिना प्रेम सब धूर हैं = बिना प्रेम के सब बेकार है, अग-जग = चराचर में एक ही है ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित प्रेम वाटिका से अवतरित है । ज्ञान, विद्या, ध्यान, बुद्धि, मत, विश्वास और विवेक आदि प्रेम की पवित्रता के अभाव में धूल के समान हैं, चराचर जगत में प्रेम ही सत्य है ।

विशेष–(1) भाव प्रधान शैली में नाद-सौन्दर्य के साथ व्यंजना शब्द-शक्ति का प्रयोग है ।

(10)

''जेहि पाए..कहाहि ।''

कठिन शब्दार्थ–जेहि पाये बैकुण्ठ = जिसने स्वर्ग पा लिया, सरस = रसयुक्त, सुप्रेम कहाहि = पावन प्रेम कहलाता है ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना वैष्णव भक्त कवि रसखान द्वारा लिखित प्रेम वाटिका से अवतरित है । जिन्होंने बैकुण्ठ पा लिया उन्हें परमात्मा की चाह नहीं है, वह प्रभु तो अलौकिक है, शुद्ध, शुभ, रसयुक्त और प्रेम की पावन भावभूमि कहलाता है ।

विशेष–(1) प्रेम की पवित्रता का निरूपण लक्षणा शब्द-शक्ति में है ।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

प्रश्न 1. 'आठहुँ सिद्धि नवौ निधि को सुख नंद की गाइ चराइ बिसारौं ।'' निम्नलिखित में से कौनसी निधि है ?

(क) ईशत्व (ख) नील

(ग) प्रकाम्य (घ) प्राप्ति ।

उत्तर–(क) ईशत्व ।

प्रश्न 2. 'या मुरली मुरलीधर की अधरान धरी अधरान न धरौगी ।'
गोपी ने यह क्यों कहा ?

(क) गोपी व मुरली दोनों स्त्रीलिंग हैं ।
(ख) मुरली कृष्ण के होठों का रस लेती है ।
(ग) मुरली के प्रति गोपी में सौत का भाव है ।
(घ) मुरली कृष्ण को गोपियों पर कुपित करती है ।

उत्तर–(क) गोपी व मुरली दोनों स्त्रीलिंग हैं ।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. 'नवौं निधि को सुख' में उल्लिखित निधियों में से किन्हीं चार के नाम लिखिए ।

उत्तर–श्रृंगार, हास्य, करुण, वात्सल्य ।

प्रश्न 4. ब्रज प्रदेश से रसखान के प्रेम को बताने वाले दो उदाहरण लिखिए ।

उत्तर–(1) मानुष हों तो वहीं रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गाँव के ग्वारन, जो पशु हौं तो कहाँ बस मेरो चरौ नित नंद की धेनु मझारन ।

(2) या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं, आठहुँ सिद्धि नवौं निधि को सुख नन्द की गाइ चराइ बिसारौं ॥

प्रश्न 5. 'ताहि अहीर की छोहरियाँ छछिया भरि छाछ पै नाच नचावें ।'
इस कथन से कृष्ण के स्वभाव की कौनसी विशेषता प्रकट की गई है ?

उत्तर–कृष्ण का हृदय प्रेम का सागर है जो इस सागर को पाने के लिये ज्ञान, ध्यान, तप-जप करना है उसको प्राप्त नहीं होते, प्रभु तो प्रेम के उपासक हैं, इसलिये गोपियों के प्रेम के सामने बिना दाम के बिक गये हैं ।

प्रश्न 6. 'मिलि आओ सबै सखी भाग चलैं अब तो ब्रज में बांसुरी रहि है ।'
गोपी के इस प्रस्ताव पर उसकी अन्य सखियों ने क्या उत्तर दिया होगा ? कल्पना के आधार पर उत्तर दीजिए ।

उत्तर–गोपियों का हृदय श्रीकृष्ण का अनन्य भक्त है । परिहास के कारण ही गोपी के प्रस्ताव का सखियों ने अनुमोदन किया है । प्रेम किसी प्रकार का अलगाव नहीं चाहता, उसमें भावनात्मक एकता का स्वर प्रमुख होता है, इसलिये गोपियों से कृष्ण अलग नहीं हैं, तब गोपियाँ ब्रज से कहीं भाग कर नहीं जा सकतीं ।

प्रश्न 7. ''ज्ञान, ध्यान, विद्या, मतों, मत, विश्वास विवेक,
बिना प्रेम सब धूर हैं, आग जग एक अनेक ।''

कृष्ण भक्ति के संदर्भ में रसखान का यह मत क्यों महत्त्वपूर्ण है ?

उत्तर–असार संसार में श्रीकृष्ण भक्ति की महिमा अपार है, क्योंकि सभी प्रकार का ज्ञान, जप, तप, विद्या, मत-मतान्तर, विश्वास, चराचर जगत आदि प्रेम की पवित्रता के सामने धूल के समान हैं । रसखान का मन कृष्ण भक्ति में एकाकार होने के कारण केवल प्रेम भाव ही सर्वोपरि है ।

निबन्धात्मक प्रश्न–

प्रश्न 8. कृष्ण के प्रति रसखान के अनन्य प्रेम को सोदाहरण स्पष्ट कीजिये ।

उत्तर–रसखान लौकिक प्रेम से विरक्त होकर वृन्दावन आ गये थे। वहाँ कृष्ण प्रेम में जीवन की पावनता अनुभव करने लगे थे। गोकुल, वृन्दावन, मथुरा में कृष्ण की लीलाएँ अनेकानेक रूपों में प्रचलित हैं। रसखान का हृदय समर्पित भाव में केन्द्रित होकर प्रभु चरणों में यही निवेदन करता है—

"पाहन हौं तो वहीं गिरि को जो धर्यो कर छत्र पुरन्दर धारन।
जो खग हों तो बसेरो करौं मिलि कालिन्दी कूल कदम्ब की डारन॥"

कृष्ण का बालरूप कवि की आँखों में प्रेम की धारा बहाता रहता है। उनके इस सौन्दर्य पर करोड़ों कामदेव की कला को न्यौछावर कर देता है, क्योंकि कौए के भाग्य धन्य हैं जो कृष्ण के हाथों से माखन रोटी लेकर चला गया। यह प्रेम की अनन्यता इस प्रकार है—

"वा छवि को रसखानि विलोकत वारत कामकला निधि कोटी।
काग के भाग बड़े सजनी हरि हाथ सौं लै गयो माखन रोटी।"

रसखान का हृदय कृष्ण के चरवाहे रूप पर न्यौछावर होता है।
संसार के समस्त सुख को छोड़कर कृष्ण प्रेम में लीन होकर कहते हैं—

"या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारौं।
आठहुँ सिद्धि नवौं निधि को सुख नन्द की गाइ चराइ बिसारौं।"

अतः प्रेम की नवीनता में एकाकार रूप मानव मात्र की कसौटी बनना आवश्यक है—

"प्रेम-प्रेम सब कोउ कहै, कठिन प्रेम की फाँस।
प्रान तरफि निकरै नहीं, केवल चलत उसाँस।"

प्रश्न 9. 'रसखान का काव्य रस की खान है।' इस कथन की समालोचना निम्नांकित के आधार पर कीजिए—

(1) भाव पक्ष
(2) कला पक्ष।

उत्तर–(1) भाव पक्ष–प्रश्न संख्या 8 का उत्तर देखें।

(2) कला पक्ष–

रसखान के काव्य में आरम्भ से अंत तक ब्रज भाषा का सानुप्रासिक प्रयोग मिलता है, भाव और भाषा का संतुलन लोक जीवन की आस्था-विश्वासों के निकट है—सुजान रस कृति में श्रीकृष्ण के प्रति अनन्य भाव की अनुभूति प्रबल है—

"प्रान वही जु रहैं रिझि वापर रूप वही लिहिं बाहि रिझायो।
सीस वही जिन वे परसे पद अंग वही जिन वा परसायो।"

छंद योजना के आधार पर देखा जाये तो पता चलता है कवि के काव्य में सवैया और दोहा छंद का व्यापक प्रयोग मिलता है। इन छन्दों के प्रयोग से कृष्ण प्रेम की महिमा का मनोरम चित्र इस प्रकार है—

सवैया–

"धूर भरे अति शोभित स्याम जू तैसी बनी सिर सुन्दर चोटी।
खेलत खात फिरैं अँगना, पग पैंजनी बाजती, पीरी कछोटी।
वा छवि को रसखानि बिलोकत बारत काम कला निधि कोटी।
काग के भाग बड़े सजनी हरि हाथ सौं ले गयो माखन रोटी।"

दोहा में आत्मपरिचय की व्यापकता—

"प्रेम रूप दर्पन अहो, रचै अजूबो खेल ।
यामें अपनो रूप कछु लखि परिहै अनमेल ।"

प्रेम के मूल्य लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति से नाद-सौन्दर्य पाते हैं । श्रृंगार रस के प्रयोग में भक्त और भगवान के मध्य सत्य का साक्षात्कार हुआ है । अतः कला परख दृष्टि से रसखान का काव्य श्रेष्ठ है ।

प्रश्न 10. निम्नलिखित अवतरण की व्याख्या कीजिए—

"या लकुटी..ऊपर वारौं ।"

उत्तर—कठिन शब्दार्थ—लकुटी = लाठी, कामरिया = कम्बल, पुर = तीनों लोक, तजि = छोड़कर, डारौं = न्यौछावर करना, आठहुँ सिद्धि = आठ प्रकार की सिद्धि, नवौं निधि को सुख = नौ प्रकार का सुख, गाइ चराइ बिसारौं = गायों को चराते हुए भुला दूँ, वन, बाग, तड़ाग निहारौं = वन, बाग, सरोवर को देखूँ, केतिक = करोड़ों, कलधौत के धाम = सुन्दरता के भण्डार ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद योजना भक्तिकालीन काव्य जगत में श्री कृष्ण भक्ति की रसधारा में तन्मय महाकवि रसखान द्वारा लिखित सुजान रस नामक कृति से अवतरित है । रसखान कवि की मान्यता है कि भगवान कृष्ण की लाठी और कम्बल पर तीनों लोकों के राज्य को सहज ही न्यौछावर किया जा सकता है, प्रभु मिलन के लिये आठ प्रकार की सिद्धियों और नौ प्रकार के सुख को नंद बाबा की गायों को चराते हुए भुलाया जा सकता है, रसखान का प्रेमी मन कहता है—ब्रज भूमि के वन, बाग, सरोवरों को देखते हुए आत्म-संतोष की भावना रखता है, करोड़ों प्रकार के सौन्दर्य के भण्डार को करील की कुंजों के ऊपर न्यौछावर करके कृष्ण भक्ति में तन्मय रहूँ, ऐसी अभिलाषा है ।

विशेष—(1) भक्त और भगवान के मध्य अलौकिक शोभा का वर्णन मनोहारी है ।

(2) सानुप्रासिक शब्दावली में सवैया छंद का प्रयोग है ।

(3) श्रृंगार रस की सुन्दर योजना में लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति का भावात्मक प्रयोग हृदयग्राह्य है ।

अध्याय 12

केशवदास

कवि परिचय—केशवदास का जन्म बुन्देलखण्ड के ओरछा नगर के एक सनाढ्य ब्राह्मण कुल में सं. 1612 वि. में हुआ और पं. बलभद्र मिश्र उनके पिता थे । उनका वंश पंड़ितों का वंश था और ओरछा राजवंश में उनका अत्यन्त सम्मान था । केशवदास के कुल में सभी लोग संस्कृत साहित्य के पूर्ण विद्वान थे और उनके किसी पूर्वज ने प्रसिद्ध आयुर्वेद ग्रन्थ 'भावप्रकाश' की रचना की थी तथा पिता 'शीघ्र बोध' नामक ज्योतिष ग्रन्थ के रचयिता

थे। इस प्रकार केशव पर भी अपने कुल के पांडित्य का प्रभाव पड़ा और वह स्वयं ही संस्कृत साहित्य के अद्वितीय विद्वान थे, पर समयकालीन वातावारण संस्कृत साहित्य के लिये अनुपयुक्त था, अत: उन्होंने हिन्दी में काव्य रचना की पर उनसे उन्हें मानसिक परेशानी भी हुई—

"भाषा बोलि न जानहीं, जिन के कुल के दास।
भाषा कवि के मंद मति तेही कुल केशवदास॥

केशव ओरछा नरेश महाराज रामसिंह के छोटे भाई इन्द्रजीत सिंह की सभा में रहा करते थे और इन्द्रजीत सिंह केशव का बहुत सम्मान करते थे तथा उन्हें गुरु सदृश मानते थे। उन्होंने केशव को इक्कीस आम दान में दिये थे और इन्द्रजीत सिंह के कारण रामसिंह भी केशव को मंत्री तथा मित्र सदृश मानते थे।

केशव का वृद्ध अवस्था में 1674 के आस-पास निधन हुआ था, पर वृद्धावस्था में भी उनके हृदय में रसिकता मौजूद थी, क्योंकि एक दिन जब वह किसी कुएँ के पास बैठे तब वहाँ स्त्रियों द्वारा बाबा कहकर सम्बोधित किए जाने पर दोहा कहा—

"केशव के सनि असिकरी, बैरिहु जस न कराहि।
चन्द्रबदनि मृग लोचनी बाबा कहि, कहि जाहि॥

केशव ने अनेक ग्रंथों का सृजन किया, पर अब तक उनके लिखे हुए— रामचन्द्रिका, रसिकप्रिया, कविप्रिया, विज्ञानगीता, रतनबावनी, वीरसिंह, देवचरित, जहाँगीर जसचन्द्रिका नामक सात ग्रंथ मिलते हैं, जिनमें प्रथम चार ग्रंथ अधिक महत्त्व रखते हैं। लाला भगवानदीन ने छंद माला, राम अलंकृत मंजरी तथा नरवाशीख नामक तीन ग्रंथ और बताएँ हैं, ये ग्रन्थ अभी तक उपलब्ध नहीं हैं।

केशव का प्रादुर्भाव हिन्दी साहित्य के लिये विशेष महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि हिन्दी में रीतिग्रंथों का सृजन करने का सर्वप्रथम श्रेय केशव को ही है, रीतिकाल की आत्मा का साहित्यिक दृष्टिकोण से निरूपण करने और सिद्धान्तों की विवेचना करने तथा उदाहरणों के लिये काव्य सृजन करने का प्रयास सबसे पहले केशव ने ही किया। केशव ही रीतिकाल का प्रवर्तक माना जाता है।

आलोचकों की मान्यता है कि केशव को कवि हृदय नहीं मिला, उनमें सहृदयता और भावुकता नहीं थी, जो कि एक कवि में होनी चाहिए अत: केशव परहृदयहीनता का दोषारोपण कर उन्हें उपेक्षित, तिरस्कृत एवं लांछित कवियों के वर्ग में खड़े कर देने का प्रयास किया जाता है। पर केशव की उक्तियों में काव्य का कला पक्ष श्रेष्ठ है, संस्कृत साहित्य का पर्याप्त ज्ञान था, कविता के सम्बन्ध में उनकी चिन्तन शक्ति उत्तम थी, इसलिये कला पक्ष की समृद्धि पर विशेष ध्यान दिया, केशव ने भाव उत्कर्ष के स्थान पर चमत्कार प्रदर्शन को विशेष महत्त्व दिया, यह प्रवृत्ति स्वाभाविक थी।

केशव एक प्रभावशाली आचार्य थे, भक्ति भावना का उदय नहीं था, शास्त्र ज्ञान और बौद्धिकता में सूक्ष्म दृष्टि थी, अत: पांडित्य प्रदर्शन में बौद्धिकता और कल्पना तत्व काव्य का प्राण है। भले ही भावना की अभिव्यक्ति, मार्मिक भाव चित्रण, आत्मानुभूति प्रकाशन और भक्ति भावना की उच्चता की दृष्टि से केशव सूर, तुलसी से पीछे रह जाते हैं पर अलंकार विधान, छंद विधान, भाषा कौशल की दृष्टि से सभी कवियों में श्रेष्ठ हैं।

आचार्य के.ाव के अभिव्यंजना पक्ष में प्रमुखत: तीन रूप दिखाई देते हैं—

(1) वर्णनात्मक भाग में भाषा का उन्नत, समूर्त शब्दों से युक्त रूप दिखाई देता है।

(2) संवाद प्रसंग में ओजयुक्त प्रवाह है।

(3) कथात्मक स्थलों में क्रियात्मक शब्दों की अधिकता, सरलता और सरसता है।

आचार्य ने श्लेष, विरोधाभास और परिसंख्या अलंकारों का प्रयोग अधिक किया है, कहीं-कहीं श्लेषोक्तियों में तीन से लेकर पाँच अर्थ निकलते हैं, कविप्रिया का एक कवित्त ब्रह्मा, कृष्ण, शिव राम और अमरसिंह नामक पाँच व्यक्तियों के विषय में कहा जा सकता है। अलंकार व्यंजना में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा अलंकार प्रयोग से चमत्कार का भाव व्यापक हुआ है। केशव की काव्य शैली के मुक्तक और प्रबंध नामक दो रूप दिखाई देते हैं। रसिकप्रिया मुक्तक काव्य है, रामचन्द्रिका प्रबंध काव्य है। हरिलीला, चंचलता, कमल, ताटंक के अलावा दोहा, सोरठा, कवित्त, गीतिका, छप्पय, रोला आदि छंदों का काव्य में सफल प्रयोग है।

व्याख्या भाग
रामचन्द्रिका
परशुराम संवाद
(1)

''विश्वामित्र बिदा...सज्जहीं।''

कठिन शब्दार्थ–आगिली = आगे चलने वाली, फौज = सेना, अकुलाय = व्याकुल होकर, मत्त = मतवाला, अमत्त = मदहीन, न गज्जहीं = नहीं गरजना, ठौर-ठौर = स्थान-स्थान, दुंदभी = ध्वनि, बज्जहीं = बजना, डारि-डारि = रख-रखकर, हथ्यार = हथियार, सूरज जीव लै लै भज्जहीं = शूरवीरों के समूह प्राण ले-लेकर भागते हैं, काटि = काटकर, तन त्राण = कवच, एक = एक, नारिभेषन = नारी वेश में।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत अवतरण हिन्दी काव्य जगत में रीतिकाल के अन्तर्गत रीतिबद्ध परम्परा के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका प्रबंध काव्य से अवतरित है। राजा जनक सभी लोगों को विंदा करके लौट रहे हैं और परशुराम बारात की अगली पंक्ति में सेना की टुकड़ी से क्रुद्ध होकर मिलते हैं—विश्वामित्र विदा हो गये, राजा जनक सभी को विदा कर वापिस लौटे, इसी समय क्रोधित परशुराम बारात की आगे वाली सेना की टुकड़ी से मिले हैं, तब परशुराम के आते ही सभी हाथियों का मद उतर गया, वे एक-दूसरे को देखकर गर्जना नहीं करते हैं, स्थान-स्थान पर मन को आकर्षित करने वाली ध्वनियाँ सुनी जा रही थीं, वे अब बंद हो गई हैं। शूरवीर परशुराम को देखकर अपने हथियारों को फेंककर अपने-अपने प्राणों को लेकर भागते हैं, कुछ वीर तो इतने भयभीत हो गये कि अपने शरीर पर धारण किया हुआ कवच काटकर फैंक दिया और नारी वेष धारण कर लिया, जिससे कि उन पर वार न हो सके।

विशेष–(1) श्री परशुराम की वीरता का आतंकित वर्णन अत्युक्ति अलंकार प्रधान है।

(2) ओज गुण में व्याख्यात्मक शैली का समन्वय है।

(2)

"वामदेव...बलवीर ।"

कठिन शब्दार्थ–वामदेव = दशरथ का महामंत्री, महादेव = शंकर, तोरेउ = तोड़ना, बलवीर = शक्तिशाली ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा हिन्दी काव्य क्षेत्र में रीतिकालीन काव्य के अन्तर्गत रीतिबद्ध परम्परा के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका के प्रबन्ध काव्य से अवतरित है । युद्ध क्षेत्र में कुशल परशुरामजी ने दशरथ के मंत्री वामदेव से प्रश्न किया कि ऐसा कौन शक्तिशाली है जिसने शिव धनुष तोड़ा है ?

विशेष–(1) दोहा छंद रचना में परशुराम का क्रोध व्यक्त हो रहा है ।

(2) ओज गुण की प्रधानता है ।

(3)

"परशुराम : यह...मारियो ।"

कठिन शब्दार्थ–कौन को = किसकी, दल = सेना, देखिए = है, कहि = बताओ, राम न जानियो = राम को नहीं जानता, शर = बाण, ताड़का = राक्षसी, जिन मारियो = जिनको मारा या वध किया ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत संवाद योजना रीतिकालीन काव्य धारा के रीतिबद्ध परम्परा के प्रवर्तक कवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका प्रबन्ध काव्य से अवतरित है । परशुराम राम की सेना को देखकर वामदेव से पूछते हैं तथा वामदेव श्रीरामचन्द्र का परिचय देते हैं, परशुराम कहते हैं—यह सेना किसकी है, वामदेव उत्तर देते हैं—यह सेना श्रीराम चन्द्रजी की है । परशुरामजी अपरिचित होने के कारण पुनः प्रश्न करते हैं कि यह राम कौन है ? मैं नहीं जानता, वामदेव कहते हैं कि जिन्होंने एक ही बाण से ताड़का जैसी राक्षसी को मार डाला, ये वे ही रामचन्द्रजी हैं ।

विशेष–(1) संवाद योजना में व्याख्यात्मक शैली की व्यापकता है ।

(2) ओजगुण की प्रधानता है ।

(4)

"परशुराम : ताड़का...माँझ बरी ।"

कठिन शब्दार्थ–संहारी = संहार किया या मारा, तिय = स्त्री, न विचारी = विचार नहीं किया, कौन बड़ाई = कौनसा बड़प्पन, ताहि = उसको, हने = पाना, हुते = था, संग = साथ में, प्रबल = मजबूत, सकल = सभी, खल = दुष्ट, अरु = और, काहू न गने = किसे नहीं गिना, करि = करना, क्रतु = आगमन, गौतम को तिय = गौतम की पत्नी अहल्या, सुद्ध करी = उद्धार किया, मंड्यो = बनाया, खंड्यो = तोड़ा, सीय = सीताजी, स्वयंवर = विवाह-स्थल, माँझ = मध्य, बरी = अपनाया ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता हिन्दी काव्य के इतिहास में रीतिकालीन काव्य के अन्तर्गत रीतिबद्ध काव्यधारा के प्रवर्तक महाकवि केशव द्वारा लिखित रामचन्द्रिका के प्रबंध काव्य से अवतरित है । परशुराम वामदेव से कहते हैं कि रामचन्द्र ने ताड़का राक्षसी का वध करते हुए भी नहीं विचारा कि वह नारी है, नारी का वध करने से उन्होंने कौन सी बड़ाई की बात की, दूसरे शब्दों में नारी के ऊपर वार करना वीरता का द्योतक नहीं माना जा सकता, पुनः वामदेव परशुराम से कहते हैं कि ताड़का राक्षसी केवल अकेली ही नहीं थी,

उसके साथ मारीच सुबुहु तथा अन्य दुष्ट राक्षस भी थे, रामचन्द्रजी ने यज्ञ की रक्षा की तथा गुरु विश्वामित्र को अपनी सेवा से सुख प्रदान किया, गौतम नारी अहल्या का उद्धार किया, जिन्होंने सूर्य कुल को सुशोभित किया और शिवाजी के धनुष को तोड़कर सीता के हाथों से वरमाला पहनी।

विशेष–(1) संवाद शैली और व्याख्यात्मक शैली का प्रयोग है।

(2) श्रीराम के कर्म-कौशल का चित्रण अवतार लीला का प्रमुख अंग है।

(5)

"परशुराम : हरहू .... नष्ट।"

कठिन शब्दार्थ–हरहू = शिव को भी, कष्ट = परेशानी या दु:ख, महिमा काल की = महिमा समय की, नरसिसु = सामान्य मानव, नष्ट = समाप्त।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता हिन्दी काव्य जगत में रीतिकालीन परम्परा के प्रवर्तक आचार्य केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य से अवतरित है। वामदेव द्वारा धनुष भंग की बात सुनकर परशुराम को बड़ा आश्चर्य हुआ, वे अपने मन में विचार करने लगे कि काल की महिमा बड़ी विचित्र है, जिस धनुष को चढ़ाने में शिवजी को भी दो घड़ी का कष्ट होता था, उसी धनुष को साधारण मनुष्य की संतान ने ही तोड़ दिया। यह परिवर्तन का प्रभाव एवं उसकी अलौकिकता से युक्त विचित्र महिमा है।

विशेष–(1) श्लेष और अर्थान्तरन्यास अलंकार के साथ संवाद-शैली में वैदर्भी रीति का सार्थक प्रयोग है।

(6)

"राम : भृगु .... अंस।"

कठिन शब्दार्थ–अवतंस = भूषण, मन-वृत्ति = मन की स्थिति, केहि = किस प्रकार, अंस = इच्छा।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता हिन्दी काव्य जगत में रीतिकालीन काव्य परम्परा के प्रवर्तक कवि आचार्य केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका प्रबन्ध काव्य से अवतरित है। रामचन्द्र परशुराम से कहते हैं कि भृगु वंश के भूषणस्वरूप श्री परशुराम आप क्या कहना चाहते हैं, बताइए, आपके मन की स्थिति किस ओर है, मूलत: आपकी क्या इच्छा है।

विशेष–(1) माधुर्य गुण, विचारात्मक शैली, दोहा छंद, और लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति का समन्वय है।

(7)

"परशुराम : तोरि .... गहौ।"

कठिन शब्दार्थ–तोरि = तोड़कर, सरासन = धनुष, सुभ सीय = शुभ सीता, स्वयंवर माँझ = स्वयंवर के मध्य, बरी = प्राप्त की, ताते = उससे, बढ़्यो = बढ़ा, मेरीयो = मेरी भी, नेकु = थोड़ी-सी, संक = भय, करी = किया, हमसों = हम से, तुमहूँ धौं कहौ = तुम ही कहो, बाहु दै दोउ = दोनों भुजाएँ, कुठारहिं = फरसा, अपने धाम = अपने स्थान, पंथ = रास्ता, गहौ = स्वीकार करो या जाओ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना हिन्दी काव्य क्षेत्र में रीतिकालीन काव्य के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका प्रबन्ध काव्य से अवतरित है । राम तुमने शंकर का धनुष तोड़कर स्वयंवर में सीता का वरण किया है, इसी कारण से तुम्हें अधिक अभिमान हो गया है । इसीलिये तो धनुष तोड़ते समय तुमने मेरा तनिक भी भय नहीं माना, तब राम ने उत्तर दिया कि हे परशुरामजी ! यह अपराध तो मुझसे हुआ है, अब आप ही बताइए इसका क्या प्रायश्चित हो सकता है, परशुराम ने कहा कि इसके प्रायश्चितस्वरूप यह है कि तुम अपनी दोनों भुजाओं को कुठार से कटवाकर अपने घर के रास्ते की ओर जाओ ।

विशेष–(1) राम-परशु वाद-विवाद संवाद शैली में है, ओजगुण की प्रधानता है, वैदर्भी रीति का प्रयोग व्यंजना शब्द-शक्ति और माधुर्य एवं ओज गुण के निकट है ।

(8)

"राम : टूटै टूटनहार..है टूटे ।"

कठिन शब्दार्थ–टूटै = टूटना, टूटनहार तरु = टूटने वाला वृक्ष, वायुहि = पवन, दीजत = देना, हर के = शिव के, कीजत = करना, रोस = क्रोध, काल-गति = समय की गति, मेटी = मिटाना या समाप्त करना, तिनुका = तिनका ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता हिन्दी काव्य क्षेत्र में रीतिकालीन काव्य में रीतिबद्ध काव्यधारा के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका प्रबंध काव्य से अवतरित है । श्रीराम परशुराम से कहते हैं कि जिस प्रकार कोई पेड़ टूटने वाला होता है, जब वह टूट जाता है तो इसका दोष पवन को दिया जाता है उसी प्रकार शिव धनुष टूटने पर इसका दोष मुझको दे रहे हैं, वह तो टूटने वाला था, काफी पुराना हो गया था, आप बेकार ही गुस्सा कर रहे हैं, क्योंकि समय की महिमा कोई नहीं जान सकता है, जो होना है वह होता ही है, इसको कभी मिटाया नहीं जा सकता, होनहार होकर ही रहती है और इसमें सबका मोह, अहंकार नष्ट हो जाता है । इसी के परिणामस्वरूप तिनका वज्र के समान कठोर तथा पत्थर तिनके के समान टूट जाता है ।

विशेष–(1) होनी होकर रहे की भावना में माधुर्य गुण, विचारात्मक शैली, अनुप्रास अलंकार, लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति का प्रयोग है ।

(9)

"लक्ष्मण : जिनकोहि..कौन करै ।"

कठिन शब्दार्थ–जिनकोहि = जिनको ही, अनुग्रह = कृपा, वृद्धि = बढ़ना, करै = करना, तिनको = उनको, किमि = किस प्रकार, निग्रह = दण्ड, चित्त = हृदय, परै = पड़ना, अच्छत = अक्षय, सीख = शिक्षा, धरै = धारण करना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना हिन्दी काव्य क्षेत्र में रीतिकालीन काव्य में रीतिबद्ध काव्यधारा के प्रवर्तक कवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य से अवतरित है । जिनकी श्रेष्ठ कृपा से मंगल कार्यों में वृद्धि होती है ऐसे अवध्य और अदण्डनीय ब्राह्मण को दण्ड देने की कौन सोच सकता है, संसार जिनके माथे पर अक्षत रखता है, पूजा करता है, उन ब्राह्मणों को कोई भी जख्मी नहीं कर सकता, अर्थात् तुम ब्राह्मण हो, पूजनीय हो, सभी तुम्हारी पूजा करते हैं, अतः तुम वध के पात्र नहीं हो, अन्यथा मैं अभी आपको देवलोक पहुँचा देता ।

विशेष–(1) संवाद शैली में आवेशयुक्त भाव लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति से युक्त हैं।

(2) ओज गुण और वैदर्भी रीति की प्रधानता है।

(10)

"परशुराम : हाथ धरे...मीचु बचौ।"

कठिन शब्दार्थ–हाथ धरे = हाथ में रखे, सोभत = शोभा, मारन = मारना, छोभत = डरते हो, किमि = किस प्रकार, बैनन = बातें, कोटि = करोड़ों, करो = करना, उपचार = बहाने, कैसेहु = किसी प्रकार, मीचु = मृत्यु।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिकालीन काव्य में रीतिबद्ध काव्यधारा के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य से अवतरित है। श्री परशुराम कहते हैं कि तुम सब हाथों में हथियार लेकर शोभित हो रहे हो, मारने वाले को अपने सामने देखकर तुमको अपने मन में डरना शोभा नहीं देता। क्षत्रिय वंश में उत्पन्न होकर तुम्हें ऐसे दीनताभरे वचन कभी नहीं कहने चाहिए, अब चाहे करोड़ों प्रकार के बहाने बनाओ, किन्तु मैं तुम्हारा वध निश्चित करूँगा, तुम्हें मृत्यु से कोई नहीं बचा सकता।

विशेष–ओज गुण, लक्षणा शब्द-शक्ति के साथ व्याख्यात्मक शैली का संगठन है।

(11)

"राम : भृगु...जसभार।"

कठिन शब्दार्थ–भृगु-कुल कमल =भृगुकुल के श्रेष्ठ पात्र, दिनेश = सूर्य, ज्योति = प्रकाश, सकल = सम्पूर्ण, सिसुन = बच्चों पर, डारत = डालना, जसभार = भयानक दायित्व।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता हिन्दी साहित्य के इतिहास में रीतिकालीन धारा में रीतिबद्ध काव्य के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य से अवतरित है। श्रीराम परशुराम से कहते हैं—हे भृगुवंश के कमल सूर्य ! आपने सम्पूर्ण संसार को विजयी कर जो यश प्राप्त किया है उसे आप इन बच्चों पर क्यों डालना चाहते हैं, अर्थात् आपका यश इन बालकों द्वारा नष्ट हो जायेगा, अत: आप युद्ध की बातें नहीं करें।

विशेष–(1) राम की मधुरता में जीवन की एकरूपता का परिचय है, लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति के साथ वैदर्भी रीति का समन्वय है।

(12)

"परशुराम : राम...बेगि दै।"

कठिन शब्दार्थ–सुबन्धु = अपने भाई, सँभारि = संभालना, सर = बाण, प्रानहर = प्राणों का हरण करने वाला, देहु हथ्यारन डारि = हथियारों को डाल दो, समेतनि = सहित, बेगि = शीघ्रतापूर्वक।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना हिन्दी काव्य क्षेत्र में रीतिकालीन काव्य परम्परा में रीतिबद्ध काव्य धारा के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य से अवतरित है। परशुराम राम को सावचेत करते हुए कहते हैं कि हे राम ! अपने भाई को संभालो, अन्यथा मैं इसके प्राणों को हरण करने वाला बाण छोड़ने वाला हूँ, अत: यह अपने हाथों से हथियार फेंक दे और अपने हाथ काटकर मुझको दे दे।

विशेष–(1) ओज गुण, संवाद शैली, लक्षणा शब्द-शक्ति का समन्वय दोहा छंद में है।

(13)

''**महादेव : भृगुनंदन**..**सुख पायौ ।**''

कठिन शब्दार्थ–मन महँ = मन के अन्दर, गुनिए = जानिए, निर्दोषी = दोष रहित, निजु = अपने, अविकारी = विकार रहित, सबही विधि = सब प्रकार से, आयुर्बल खूट्यो = विष्णु के अंशावतार होने के समय बीत चुका, टूट्यो = टूटना, तन = शरीर, पायौ = प्राप्त करना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता हिन्दी काव्यक्षेत्र में रीतिकालीन काव्य के अन्तर्गत रीतिबद्ध परम्परा के प्रवर्तक महाकवि केशव द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य से अवतरित है । महादेव, परशुराम को राम का परिचय देते हैं—हे परशुराम, मेरी बात सुनो, भली प्रकार चिन्तन करो, राम पूरी तरह दोष रहित हैं, ये सभी प्रकार के माया सम्बन्धी विकारों से मुक्त हैं, सभी को सुख प्रदान करने वाले हैं, सभी प्रकार से संतोष करने वाले हैं, तुम दोनों एक हो, कोई अन्तर नहीं है । तुम्हारे नाम समान ही हैं, अब तुम्हारा विष्णु अवतार होने का समय व्यतीत हो गया है । राम ने मेरे धनुष को भंग किया है, मुझको शरीर और मन से प्रसन्नता हुई है ।

विशेष–(1) महादेव के कथन में भविष्य का संकेत होने के कारण लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति, शान्त रस और कवित्त छंद का प्रयोग है ।

अशोक वाटिका में सीता

(14)

''**धरे एक**..**दुःखदानी ।**''

कठिन शब्दार्थ–धरे एक बेनी = बाल उलझकर एक जटा बनाना, मैली सारी = मैली या गन्दी साड़ी, मृणाली = कमल नाल, मनो = मानो, पंक = कीचड़, काढ़ि = निकाली हुई, रामनामै = राम का नाम, चहूँ ओर = चारों ओर, राकसी = राक्षसी, दुःखदानी = दुःख देने वाली ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत छंद रचना रीतिकालीन काव्य में रीतिबद्ध काव्य धारा के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य के 'अशोक वाटिका में सीता' वर्णन से अवतरित है । हनुमान ने देखा कि सीताजी के बाल उलझने से चोटी एक जटा के रूप में हो गई है, उनकी साड़ी मैली या गन्दी हो रही है, ऐसा प्रतीत होता है मानो कीचड़ से निकाला गया कमलनाल हो, वह व्याकुल भाव में श्रीराम के नाम की रट लगाती रहती है, सीताजी को चारों ओर से दुःख देने वाली राक्षसी घेरे हुए हैं ।

विशेष–(1) वीर हनुमान सीताजी की पीड़ा का गंभीरतापूर्वक मनन कर रहे हैं, माधुर्य गुण की सरलता झलकती है ।

(2) भाव की मार्मिकता के स्थान पर बाह्य आकृति का वर्णन करना प्रमुख रहा है ।

(15)

''**ग्रसी बुद्धि**..**पीयूष भीनी ।**''

कठिन शब्दार्थ–ग्रसी बुद्धिसी = समाप्त बुद्धि के समान, चित्त = हृदय, चिन्तानि = चिन्ता, किधौ = अथवा, दंतावली = दांतों की पंक्ति, बखानौ = स्पष्ट करना, घेरिकै = घेर कर, चारु = सुन्दर, पीयूष = अमृत ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिकालीन काव्य धारा में रीतिबद्ध काव्य के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य के 'अशोक वाटिका में सीता' प्रसंग से अवतरित है । सीताजी राक्षसियों से घिरी हुई ऐसी लग रही हैं, मानो हृदय चिन्ताओं से बुद्धि समाप्त हो गई हो, अथवा दाँतों के बीच जीभ हो, अथवा राहू की स्त्रियों ने अमृत युक्त चन्द्रमा की कलाओं को घेर लिया हो ।

विशेष–(1) उपमा, उत्प्रेक्षा और सन्देह अलंकार के साथ लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति और विचारात्मक शैली में चमत्कारिक प्रभाव दिखाई देता है ।

अंगद-रावण संवाद

(16)

''राम कौ काम .... दीन महा ।''

कठिन शब्दार्थ–रिपु = दुश्मन या शत्रु, जीतहि = जीतना, जीत्यो = जीता, बली = शक्तिशाली, भृगुनन्दन = परशुराम, हर्‍यो = समाप्त किया, द्विज = ब्राह्मण ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता हिन्दी काव्य जगत में रीतिकालीन परम्परा के प्रवर्तक कवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य के अंगद-रावण संवाद से अवतरित है । रावण अंगद से पूछता है कि तुम्हारा राम क्या कार्य कर सकता है ? अंगद ने कहा—श्रीराम शत्रुओं को जीतते हैं, रावण पुनः पूछता है—श्रीराम ने शक्तिशाली बालि को मारा, रावण ने कहा—बालि को तो छल से मारा, जो किसी शूरवीर को शोभा नहीं देता, अंगद ने कहा—श्रीराम ने शूरवीरता से परशुराम का घमण्ड नष्ट कर दिया था ।

विशेष–(1) संवाद शैली उच्चकोटि की है, ओज गुण की प्रधानता है ।

(17)

''दीन ही क्यों .... बाँधि लियो ।''

कठिन शब्दार्थ–छिति = पृथ्वी, छत्र हत्यो = सभी क्षत्रियों का वध, हैहय राज = सहस्रार्जुन, बिसर्‍यो = भुला दिया, बाँधि = बाँधना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिकालीन परम्परा में रीतिबद्ध काव्यधारा के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य के अंगद-रावण संवाद से अवतरित है । रावण कहता है कि परशुराम दीन-हीन प्राणी है, अंगद, रावण से परशुराम की दीनता के बारे में पूछता है—वह दीन कैसे है ? उसने पृथ्वी के समस्त राजाओं का वध किया और हैहयराज का भी वध कर दिया था, रावण पूछता है कि यह हैहयराज कौन है ? अंगद व्यंग्यपूर्ण शैली में कहता है—वही हैहयराज जिसने खेल-खेल में तुम्हें बंदी बना लिया था । उस हैहयराज को भी तुम कैसे भूल गये ?

विशेष–(1) संवाद योजना में कलात्मकता, ओज गुण से युक्त है ।

(18)

''अंगद : सिन्धु तर्‍यों .... जराइ जरी ।''

कठिन शब्दार्थ–सिन्धु त्र्यौ = सागर को पार किया, बनरा = वानर, धुनरेख = धनुष से खींची रेखा (लक्ष्मण द्वारा), न तरी = पार नहीं हुई, बाँधत = बाँधना, वारिधि = समुद्र, बाट करी = रास्ता बना लिया, अजहूँ = इतने पर भी, तूलनि = वस्त्र या रूई सहित।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिकालीन काव्य परम्परा में रीतिबद्ध काव्य धारा के प्रमुख आचार्य कवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य के अंगद-रावण संवाद से अवतरित है। अंगद रावण को राम की महिमा बताते हुए कहता है कि हे रावण, राम का छोटा सा वानर समुद्र को पार कर गया और तुम लक्ष्मण द्वारा खींची रेखा को भी पार नहीं कर सके अर्थात् समुद्र के आकार के सामने धनुरेखा तो छोटी ही थी, फिर भी तुम उसको लांघ नहीं सके, इससे तुम्हारी शक्ति का पता चल जाता है, अब बेकार रास्ते में अड़े हो, हट जाओ, भला होगा, हे रावण, तुम्हारी शक्ति का अनुमान इससे हो जाता है कि तुमने छोटे से वानर को बांधने का प्रयास किया, उसमें भी सफल नहीं हो सके, उधर देखो राम ने सागर के विशाल पाट को भी बांध दिया और उस पर आने-जाने का रास्ता बना दिया, इतने पर भी राम की महिमा नहीं जान सके तो तुम्हारा अहंकारयुक्त भ्रम है, तेल और रूई से युक्त पूँछ को लगातार प्रयास करने के बाद भी नहीं जला सके, उसी पूँछ ने तुम्हारी सोने और रत्नजटित लंका को पलभर में ही भस्म कर दिया।

विशेष–(1) श्रीराम महिमा का मनोहारी वर्णन सर्वेवर छंद द्वारा हुआ है।

(19)

"रावण : उरसि अंगद...तुम्हें करौं।"

कठिन शब्दार्थ–उरसि = हृदय में, लाज = लज्जा, गहौ = ग्रहण करो, जनक = पिता, घातक = हत्यारे, वृथा = बेकार = संहरौ = मार डालो, सकल = सम्पूर्ण।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिकालीन काव्य में रीतिबंद्ध काव्य के प्रवर्तक महाकविं आचार्य केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य के अंगद-रावण संवाद से अवतरित है। रावण अंगद की निष्ठावान स्थिति को देखकर समझता है कि अंगद बहकावे में आने वाला नहीं है, फिर भी अपनी बातों के शस्त्रों का प्रयोग करके कहता है—हे अंगद! हृदय में कुछ लज्जा ग्रहण करो, तुम लगातार उसी की प्रशंसा किये जा रहे हो जो तुम्हारे पिता का हत्यारा है, तुम तो अतिशीघ्र राम-लक्ष्मण के साथ अन्य योद्धाओं का वध कर दो, मैं तुम्हें वानर सेना का राजा बना दूँगा, कुछ विचार करो और जल्दी ही निर्णय करो।

विशेष–(1) अवसरवादी मूल्यों की तलाश में स्वार्थपरता का भाव दिखाई देता है।

(20)

"अंगद : सत्रु सम...राखहू।"

कठिन शब्दार्थ–सत्रु सम = शत्रु से उदासीन, चित्त = हृदय, पहिचानहीं = पहचानना, दूतविधि = भेदनीति, नूत = नवीन, उर = हृदय, आनहीं = आना, आप मुख = स्वयं का मुख।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिकालीन काव्य में रीतिबद्ध काव्यधारा के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा विरचित रामचन्द्रिका महाकाव्य के अंगद-रावण संवाद

से अवतरित है । अंगद रावण की कूटनीतिपूर्ण बातों का उत्तर देता हुआ कहता है—हे रावण! तुम अपने मन में भली प्रकार चित्त में चिन्तन करके पहचान लो कि कौन शत्रु है ? कौन उदासीन और कौन मित्र है । मैं तुम्हारी नवीन तोड़-फोड़ युक्त नीति को कभी ध्यान से नहीं देख सकता हूँ, अच्छा हो कि तुम अपने सिर और अपनी भुजाओं की रक्षा कर लो, फिर दूसरों की रक्षा की बातें कहना ।

विशेष—ओज गुण के साथ संवाद शैली का चमत्कारिक सौन्दर्य है ।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

प्रश्न 1. 'मिले आगिली फौज को परसुराम अकुलाय ।' परशुराम की आकुलता का क्या कारण था ?

(क) फौज की मुठभेड़ का भय ।
(ख) अपनी हार की आशंका ।
(ग) धनुभंजक को दंडित करने की आतुरता ।
(घ) धनुष की रक्षा न कर सकने का दुःख ।
उत्तर—(ग) ।

प्रश्न 2. किधौं जीभ दंतावली में बखानौ ।
किधौं घेरि कै राहु-नारीन लीनी ।''
इन पंक्तियों में कौनसा अलंकार है—
उत्तर—(घ) सन्देह ।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. 'गौतम की तिय सुद्ध करी ।' गौतम की पत्नी को कैसे शुद्ध किया गया ?

उत्तर—श्रीराम वनवास के समय पत्थर बनी अहल्या के निकट जाकर चरण स्पर्श मात्र से पूर्व स्थिति में ला दिया था अर्थात् श्रीराम द्वारा अहल्या को पुनः नारी के रूप में बना दिया था ।

प्रश्न 4. 'सो अपराध हमसों अब क्यों सुधरै तुमहूँ धौ कहौ ।' राम के इस प्रश्न का परशुराम ने क्या उत्तर दिया ?

उत्तर—परशुराम ने राम के प्रश्न का उत्तर दिया कि अपनी दोनों भुजाएँ कुठार (फरसे) को देकर अपना रास्ता पकड़ लो अर्थात् अपने गन्तव्य की ओर चले जाओ ।

प्रश्न 5. ''राम सुबंधु संभारि, छोड़त हौं सर प्रानहर ।
देहु हथ्यारन डारि, हाथ समेतन बेगि दै ।'' इन पंक्तियों में ओज गुण क्यों है ?

उत्तर—लक्ष्मण ने परशुराम की बातों का विरोध किया था इसलिये परशुराम ने ओजस्वी वाणी में राम को कहा कि लक्ष्मण को समझाओ, नहीं तो कुठार के हाथों इसका वध निश्चित है ।

प्रश्न 6. 'तेलनि तूलनि पूँछ जरी न जरी, जरी लंक जराय जरी ।' इस पंक्ति में कौनसा अलंकार है ? उसके लक्षण भी लिखिए ।

उत्तर—इस पंक्ति में अनुप्रास अलंकार है । एक अक्षर की बार-बार आवृत्ति होने के [illegible] अनुप्रास कहलाता है ।

प्रश्न 7. 'उरसि अंगद लाज कछू गहौ ।' रावण ने ये शब्द अंगद को किस कारण कहे ?

उत्तर–रावण ने अंगद को बताया कि राम तुम्हारे पिता का हत्यारा है, तुम उससे अपने पिता की हत्या का बदला ले लो, तुम्हें वानर सेना का प्रमुख बना दूँगा, रावण की बातों में अवसरवादिता और स्वार्थ भावना स्पष्ट दिखाई देती है ।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. अंगद-रावण संवाद को अपने शब्दों में लिखिए ।

उत्तर–अंगद-रावण संवाद में जीवन्तता, संक्षिप्तता और नाटकीयता का गुण सहज ही मिलता है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में—"केशव को रामचन्द्रिका में सर्वाधिक सफलता संवादों में मिली है, संवादों में न केवल पात्रानुकूल, क्रोध और उत्साह आदि मनोविकारों या भावों की सुन्दर व्यंजना हुई है बल्कि वाक्पटुता तथा राजनीति से भरे दाव-पेचों की सफल अभिव्यक्ति हुई है ।" इस प्रकार संवाद योजना कथानक को गतिशील बनाती है, घटनाओं को पूर्वापर सम्बन्ध के आधार पर क्रमबद्ध रूप्र में प्रस्तुत करते हैं । चरित्र, निष्ठा, कर्त्तव्यपरायणता की दृष्टि से अंगद-रावण संवाद महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि अंगद श्रीराम का दूत बनकर रावण की राजसभा में उपस्थित होता है, अंगद की निष्ठावान कर्मशैली में प्रभु की कार्यशैली का परिचय-बालिवध और परशुराम का गर्व नष्ट करने की महानता का परिचय दिया जाता है, पर अहंकारी रावण सत्य से विमुख रहकर अन्याय का पथ स्वीकार करता है ।

अंगद ने परशुराम की वीरता बताई तब भी रावण परशुराम के वीरत्व को स्वीकारने के लिये तत्पर दिखाई नहीं देता । हाँ, इतना अवश्य है कि अवसरवादी दृ्ष्टकोण अपनाने में कुशल है, संवादों में तुरन्त उत्तर देने की कला का विशेष गुण दिखाई देता है । अंगद-रावण संवाद में रावण के कहने का तरीका श्रेष्ठ है—

"राम को कहा है ? रिपु जीतहिं, कौन कबै रिपु जीत्यो कहाँ ।
बलि बली, छल सौं, भृगुनन्दन गर्व हर्‌यो द्विजदीन महा ॥"

चरित्र का उद्‌घाटन और व्यंग्यात्मक संवाद का कौशल इस प्रकार है—

"सिन्धु तर्‌यो उनको बनरा, तुम पै धनुरेख गई न तरी ।
बांध्योइ बांधत सो न बंध्यो उन वारिधि बांधि कै बाट करी ।"

केशव के संवादों में संस्कृत के नाटकों का पर्याप्त प्रभाव है लेकिन अभिव्यक्तिकरण, मौलिकता और विशिष्टता का परिचायक है, कथानक में रोचकता और प्रवाह बना रहता है, पात्रों का चरित्र अपने आप स्पष्ट हो जाता है, जिसमें कूटनीति का परिचय है, राजसी शिष्टाचार का परिचय प्रभावशाली है, अतः अंगद-रावण संवाद, रामचन्द्रिका के अनेकानेक संवादों में श्रेष्ठ है ।

प्रश्न 9. केशव के संवादों की विशेषताएँ सोदाहरण स्पष्ट कीजिये ।

उत्तर–आचार्य केशव पाण्डित्य प्रदर्शन और चमत्कारवाद में श्रेष्ठ है । नाटकीयता के साथ चरित्र की विशेषताएँ उद्‌घाटित होती हैं, केशव का सम्पूर्ण जीवन राजदरबारों में व्यतीत हुआ था, राजनीति के उतार-चढ़ाव समझते थे, रामचन्द्रिका में राम-परशुराम, राम-लक्ष्मण, सीता-रावण, सीता-हनुमान, अंगद-रावण, कैकेयी-भरत आदि संवादों में से अंगद-रावण संवाद प्रत्युत्पन्नमति, नाटकीयता और चरित्र की दृष्टि से श्रेष्ठ है । रावण अंगद को अवसर के अनुकूल अपनी ओर आकर्षित करने का इस प्रकार प्रयास करता है—

"उरसि अंगद लाज कछू गहौ, जनक घातक बात वृथा कहौ।
सहित लक्ष्मण रामहिं संहरौ, सकल बानरराज तुम्हें करौं॥"

शिव धनुष भंग होने पर परशुराम का क्रोध परवान चढ़ता है, दशरथ के मंत्री वामदेव के साथ परशुराम का संवाद कलात्मकता की दृष्टि से चमत्कारिक है—

"परशुराम—यह कौन को दल देखिए ?
वामदेव—यह राम को प्रभु लेखिए।
परशुराम—कहि कौन राम न जानियो ?
वामदेव—शर ताड़का जिन मारियो।"

व्यंग्यपूर्ण शैली में अंगद रावण को रोचक ढंग से कहता है—

"अजहूँ रघुनाथ प्रताप की बात तुम्हें दस कण्ठ न जानि परी।
तेलनि तूलनि पूँछ जरी न जरी लंक जराइ जरी।"

चरित्र की महानता और निम्नता का परिचय अंगद के कथन से स्पष्ट है—

"हैहय कौन ? वहै बिसाइयो ? जिन
खेलत ही तुम्हें बाँधि लियो।"

शालीनता का प्रभाव राम-परशुराम संवाद में लगातार अपनाया गया है। राम, शिव धनुष भंग होने के बाद सरलतापूर्वक परशुराम को प्राकृतिक प्रतीकों में अपने मन की बात समझाते हैं—

"टूटै टूटनहार तरु वायुहि दीजत दोस।
त्यों अब हरके धनुख को हम पर कीजत रोस।"

केशव का जीवन दरबारी संस्कृति के अधिक निकट रहने के कारण कला पक्ष की प्रबलता पाण्डित्य प्रदर्शन का रूप धारण करती है, जीवन और जगत के व्यापार में वार्तालाप से पूरे व्यक्तित्व की पहचान हो जाती है इसलिये संवाद का कौशल केशव के काव्य का प्राण तत्व बन गया है, ब्रजभाषा का प्रयोग करते हुए संस्कृत का गुरु गंभीर समन्वय करते हैं, जैसे—

"जिनको जब अक्षत सीख धरै।
तिनको तन सच्छत कौन करे।"

प्रस्तुत विवेचन से स्पष्ट हो जाता है कि केशव के काव्य में संवाद योजना समूचे हिन्दी काव्य संसार में श्रेष्ठ है। नाटकीयता, चरित्रगत प्रधानता, व्यंग्य शैली, पूर्वापर घटनाओं का क्रम कथानक को गतिशील बनाता है अतः संवाद की दृष्टि से केशव का काव्य अनुकरणीय है।

प्रश्न 10. केशव के काव्य की समालोचना निम्नांकित के आधार पर कीजिए—

(1) संवाद-योजना
(2) अलंकार-योजना
(3) छंद-योजना
(4) भाषा।

उत्तर–(1) संवाद-योजना–

आचार्य केशव पाण्डित्य प्रदर्शन और चमत्कारवाद में श्रेष्ठ हैं। नाटकीयता के साथ चरित्र की विशेषताएँ उद्घाटित होती हैं, केशव का सम्पूर्ण जीवन राजदरबारों में व्यतीत हुआ था, राजनीति के उतार-चढ़ाव समझते थे, रामचन्द्रिका में राम-परशुराम, राम-

लक्ष्मण, सीता-रावण, सीता-हनुमान, अंगद-रावण, कैकेयी-भरत आदि संवादों में से अंगद-रावण संवाद, प्रत्युत्पन्नमति, नाटकीयता और चरित्र की दृष्टि से श्रेष्ठ है । रावण अंगद को अवसर के अनुकूल अपनी ओर आकर्षित करने का इस प्रकार प्रयास करता है—

"उरसि अंगद लाज कछु गहौ, जनकघातक बात वृथा कहौ,
सहित लक्ष्मण रामहिं संहरौ, सकल बानरराज तुम्हें करौं ।

शिवधनुष भंग होने पर परशुराम का क्रोध बढ़ जाता है, दशरथ के मंत्री वामदेव के साथ परशुराम का संवाद कलात्मकता की दृष्टि से चमत्कारिक है—

"परशुराम—यह कौन को दल देखिए ?
वामदेव—यह राम को प्रभु लेखिए ,
परशुराम—कहि कौन राम न जानियो,
वामदेव—शर ताड़का जिन मारियो ।"

व्यंग्यपूर्ण शैली में अंगद रावण को रोचक ढंग से कहता है—"अजहूँ रघुनाथ प्रताप की बात, तुम्हें दस कण्ठ न जानि परी, तेलनि तूलनि पूँछ जरी न जरी लंक जराइ जरी ।"

शालीनता का प्रभाव राम-परशुराम संवाद में लगातार अपनाया गया है । राम शिव धनुष भंग होने के बाद सरलतापूर्वक परशुराम को प्राकृतिक प्रतीकों में अपने मन की बात समझाते हैं—

"टूटै टूटन हार तरु वायुहि दीजत दोस ।
त्यों अब हरके धनुख को हम पर कीजत रोस ।"

(2) अलंकार-योजना–

आचार्य केशव को संस्कृत का प्रखर ज्ञान होने के कारण अलंकार योजना के प्रति विशेष मोह था, अलंकार महत्त्व के सम्बन्ध में स्वयं ही कहा है—भूषण बिनु न विराजहीं, कविता बनितामित्त, अपने काव्य ग्रंथों में अलंकारों का खुलकर प्रयोग किया है, भाव का समन्वय, मार्मिकता की दृष्टि से श्रेष्ठ है—अशोक वाटिका में सीता की मन:स्थिति का वर्णन करने के लिये संदेह और उपमा के प्रयोग सार्थक हैं—

"ग्रसी बुद्धिसी चित्त चिन्तानि मानो,
किधौं, जीभ दन्तावली में बखानो,
किधौ घेरिकै राहु नारीन लीनी"

इस प्रकार केशव के काव्य में रूपक, श्लेष, अनुप्रास, यमक, उत्प्रेक्षा, विभावना, दृष्टान्त, अन्योक्ति आदि अनेक अलंकारों का सफल प्रयोग मिलता है । अनुप्रास का मार्मिक प्रयोग इस प्रकार है—

"अजहूँ रघुनाथ प्रताप की बात तुम्हें दस कंठ न जानि परी ।
तेलनि तूलनि पूँछ जरी न जरी जरी लंक जराइ जरी ।"

(3) छंद-योजना–

आचार्य केशव मूलत: संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे । वे यह भली-भाँति जानते थे कि किस बात को कौन से छंद में उपयुक्तता दी जा सकती है, कथानक के अनुसार छंद योजना का सार्थक प्रयोग प्रस्तुत किया है, राम-परशुराम संवाद में कुण्डलियाँ छंद का प्रयोग मधुरता और मार्मिकता की दृष्टि से श्रेष्ठ है—

"टूटै टूटन हार तरु वायुहि दीजत दोस,
त्यों अब हरके धनुख को हम पर कीजत रोस
× × ×
होइ तिनूका वज्र, वज्र तिनुका हैय टूटे ।"

इस प्रकार केशव के काव्य में दोहा, सोरठा, गीतिका, हरिगीतिका, धनाक्षरी, वसन्ततिलका, मन्दाक्रांता आदि अनेक छंदों का सफल प्रयोग किया है ।

(4) भाषा–

यह तो विदित है कि आचार्य केशव संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे, इसलिये काव्य रचनाओं में संस्कृतनिष्ठ ब्रजभाषा का प्रयोग मार्मिक है, भावों के अनुकूल चित्रात्मकता का प्रभाव रोचक है—

"भृगुनंदन सुनिए मन महँ गुनिए रघुनन्दन निर्दोषी ।
निजु ये अविकारी सब सुखकारी सब ही विधि संतोषी,
एकै तुम दोऊ और न कोऊ एकै नाम कहायो,
आयुर्बल खूट्यो, धनुष जो टूट्यो में तन-मन सुख पायो,

इस प्रकार केशवदास की भाषा में कोमलकान्त पदावली का पाण्डित्य रूप निरन्तर प्रभावित करता है ।

प्रश्न 11. निम्नांकित पद्यावतरण की सप्रसंग व्याख्या कीजिये—

धरे एक..**पीयूष भीनी ।"**

उत्तर–कठिन शब्दार्थ–धरे एक बैनी = बाल उलझकर एक जटा बनना, मैली साड़ी = गंदी साड़ी, मृणाली = कमलनाल, मनो = मानो, पंक = कीचड़, काढ़ि = निकाली हुई, रामनामै = राम का नाम, चहुँ ओर = चारों ओर, राकसी = राक्षसी, दु:खदानी = दु:ख देने वाली, ग्रसी बुद्धि सी = समाप्त बुद्धि के समान, चित्त = हृदय, चिन्तानि = चिन्ता, किधौ = अथवा, दंतावली = दाँतों की पंक्ति, बखानौ = स्पष्ट करना, घेरिकै = घेरकर, चारु = सुन्दर, पीयूष = अमृत ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिकालीन काव्यधारा में रीतिबद्ध काव्य के प्रवर्तक महाकवि केशवदास द्वारा लिखित रामचन्द्रिका महाकाव्य के अशोक वाटिका में सीता प्रसंग से अवतरित है । हनुमान ने देखा कि सीताजी के बाल उलझने से चोटी एक जटा के रूप में हो गई है, उनकी साड़ी मैली हो रही है, ऐसा प्रतीत होता है मानो कीचड़ से निकाला गया कमलनाल हो, वह व्याकुल भाव से श्रीराम के नाम की रट लगाती रहती है, सीताजी को चारों ओर से दु:ख देने वाली राक्षसी घेरे हुए हैं । इससे ऐसा लगता है मानो हृदय में चिन्ताओं से बुद्धि समाप्त हो गई हो अथवा दांतों के बीच में जीभ हो अथवा राहू की स्त्रियों ने अमृतयुक्त चन्द्रमा की कलाओं को घेर लिया हो ।

विशेष–(1) वीर हनुमान सीताजी की पीड़ा का गंभीरतापूर्वक मनन कर रहे हैं, जिसमें माधुर्य गुण की सरलता झलकती है ।

(2) उपमा, उत्प्रेक्षा और संदेह अलंकार के साथ लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति का प्रयोग है ।

अध्याय 13

बिहारी

कवि परिचय–महाकवि बिहारी के जन्म को लेकर आलोचकों में अनेकानेक मतभेद हैं। अभी तक यह विषय निर्णीत नहीं है फिर भी बिहारी का जन्म विक्रम संवत् 1620 और मृत्युकाल 1721 माना जाता है। इनकी पत्नी कुशल कवयित्री थीं, इनको काव्य परम्परा का ज्ञान बुन्देलखण्ड में प्राप्त हुआ था। मथुरा, आगरा रहने के बाद जयपुर आ गये थे। जयपुर नरेश जयसिंह के सम्बन्ध में यह प्रचलित था कि वे नवोढ़ा रानी के मोहपाश में आबद्ध हो गये थे। प्रजा के कार्य से विमुख महाराज जयसिंह को यह दोहा अन्योक्ति परख रूप में सुनाया—

"नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास इहि काल।
अली कली ही सों बंध्यो आगे कौन हवाल॥"

बिहारी प्रतिभाशाली कवि थे, दरबारी कवि होने के साथ वात्स्यायन के कामसूत्र से नायिका भेद के आधार पर शृंगार रसपूर्ण दोहों की रचना की है। नारी सौन्दर्य का नख-शिख चित्रण अद्वितीय है, अंग-प्रत्यंगों की सुन्दरता दोहा जैसे छोटे से छंद में प्रस्तुत की है, बिहारी काव्य के प्रमुख आलोचक लाला भगवान दीन के शब्दों में—"बिहारी के दोहे शक्कर की तरह मीठे और चसकदार हैं।" इनके दोहों में शृंगार, भक्ति, नीति, ज्योतिष, आयुर्वेद आदि का विविध-विषयक ज्ञान है, इसीलिए आलोचकों ने लिखा है—

"सतसैया के दोहरे ज्यों नाविक के तीर।
देखन में छोटे लगैं, घाव करैं गंभीर।"

'बिहारी सतसई' एक मात्र रचना है जिसमें भावुकता, कोमलता, सरलता, सरसता, उक्ति वैचित्र्य, बहुलता और गागर में सागर की विशालता का परिचय मिलता है। संयोग शृंगार के दोहे मार्मिकता के चरमबिन्दु पर पहुँच गये हैं जबकि वियोग शृंगार अतिशयोक्तिपूर्ण या अत्युक्तिपूर्ण हो गया है, इस सम्बन्ध में लाला भगवान दीन लिखते हैं—"बिहारी को संयोग पक्ष का जितना सूक्ष्म ज्ञान था उतना वियोग पक्ष का नहीं था। उनकी नायिका घड़ी के पैण्डुलम की भाँति स्वास के साथ छः-सात हाथ आगे-पीछे आती-जाती है—

"इत आवत चलिजात उत चली छः-सात हाथ।
चढ़ी हिंडोले पै रहै लगी उसासनु साथ।"

अतः वियोग पक्ष हास्यास्पद हो गया है।

बिहारी की काव्य भाषा ब्रज है किन्तु बुन्देलखण्डी और फारसी शब्दों का सार्थक प्रयोग मिलता है, अलंकार योजना में यमक, श्लेष, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अर्थान्तरन्यास आदि अलंकार विशेष रूप से प्रयुक्त हुए हैं। समाज, धर्म, संस्कृति की मर्यादा का पालन करते हुए शृंगार रस की मार्मिकता मिलती है, इनकी आराध्या श्री राधाजी हैं इसलिए सतसई का आरम्भ राधाजी के प्रति समर्पण से होता है—

"मेरी भव बाधा हरौ, राधा नागरि सोइ ।
जा तन की झाँई परत स्याम हरित दुति होइ ।"

इस प्रकार बिहारी के काव्य में भाव और कलापक्ष की अलौकिकता में लोक-कल्याण की भावना निहित है ।

व्याख्या-भाग

बिहारी सतसई

(1)

"जप माला..रांचै राम ।"

कठिन शब्दार्थ–जप = जाप करना, सरै न एको काम = एक भी कार्य पूरा नहीं होता, काँचे = काँच, नाचै = नाचना, वृथा = बेकार ही, सांचे = सच्चा ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत रचना रीतिकालीन काव्य में रीतिसिद्ध परम्परा के कवियों में श्रेष्ठ रससिद्ध कवि बिहारीलाल द्वारा लिखित बिहारी सतसई से अवतरित है । माला हाथ में लेकर जप करने, तिलक-छापे लगाने से एक भी कार्य पूरा नहीं होता, यह मन तो कच्चे काँच के समान है जो माया की आहट पाते ही फूट जाता है, यदि सच्चा नाम है तो श्रीराम का स्मरण ही श्रेष्ठ है ।

विशेष—(1) कविवर श्रीराम और श्रीकृष्ण की भक्ति भावना में किसी प्रकार का अन्तर स्वीकार नहीं करते हैं ।

(2) अनुप्रास अलंकार और नाद सौन्दर्य प्रमुख है ।

(2)

"जम-करि..गनु गाउ ।"

कठिन शब्दार्थ—जम = यमराज, करि मुँह = हाथी का मुख, धरहरि = नीचे, पर्‌यो = पड़ा है, चित = हृदय, लाउ = लाना, तृष्णा = इच्छा, परिहरि = छोड़कर, अजौं = अभी से, नरहरि = मनुष्यों में श्रेष्ठ श्रीकृष्ण, गुना गाउ = गुणों को गाओ ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत दोहा रीतिकालीन काव्य में रीतिसिद्ध परम्परा के कवियों में श्रेष्ठ रससिद्ध कवि बिहारीलाल द्वारा लिखित बिहारी सतसई से अवतरित है । हे मानव ! तू यमराज रूपी हाथी के मुख के नीचे पड़ा हुआ है, अपने हृदय को केन्द्रित करके माया-मोह, लोभ की भावना को अभी से छोड़कर मानव रूप में भगवान श्रीकृष्ण की भक्ति भावना में समर्पित होना ही श्रेष्ठ है ।

विशेष—(1) रूपक अलंकार से आत्मा का साक्षात्कार कराया है ।

(3)

"तो पर वारौं..उरबसी समान ।"

कठिन शब्दार्थ—वारौं = न्यौछावर कर दूँ, उरबसी = इन्द्र के दरबार की अनुपम सुन्दरी अप्सरा, सुजान = चतुर, उर बसी = हृदय में बैठी हुई है, उरबसी = हृदय पर पहना जाने वाला एक विशेष प्रकार का आभूषण ।

सप्रसंग व्याख्या—रीतिसिद्ध कवि बिहारीलाल कृत बिहारी सतसई के इस दोहे में नायिका राधा को उसकी सखी नायक के प्रति मान छोड़ देने का निवेदन करती है । हे चतुर राधाजी ! ध्यानपूर्वक मेरी बातों को सुनो, तू तो इन्द्र के दरबार की अनुपम सुन्दरी अप्सरा से भी बढ़कर सुन्दर है अतः तुम पर उर्वशी अप्सरा को न्यौछावर करती हूँ ! तू मोहन के

हृदय में उरवसी नामक आभूषण के समान होकर बसी हुई है, अर्थात् नायक अपनी राधा को छोड़कर अन्य से प्रेम नहीं कर सकता।

विशेष—(1) उरवसी शब्द में यमक अलंकार है।

(2) सौन्दर्य का अलौकिक सत्य व्यंजित हो रहा है।

(4)

"तो लगि..कपाट।"

कठिन शब्दार्थ—तो लगि = तब तक, मन सदन = मन रूपी घर, किहिं बाट = किस प्रकार, विकट = भयानक, जुटे = जुड़े हुए, निपट = पूर्ण रूप से, कपट-कपाट = कपट रूपी किवाड़।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत दोहा रससिद्ध कवि बिहारीलाल कृत बिहारी सतसई से अवतरित है, जब तक इस मन रूपी घर में माया, मोह, लोभ, तृष्णा के भयानक कपट के किवाड़ लगे हैं तब तक प्रभु हृदय में विराजमान नहीं हो सकते, अतः माया से परे होकर प्रभु स्मरण सम्भव है।

विशेष—(1) भक्ति भावना के पावन रूप स्मरण का संकेत है।

(5)

"तंत्री नाद..सब अंग।"

कठिन शब्दार्थ—तंत्री नाद = वीणा का मधु स्वर, कवित्त रस = कविता का रस, सरस राग = रसपूर्ण गाना, रति रंग = प्रेम का आनन्द, अनबूड़े = न डूबने वाले, बूड़े = डूब गये, तरे = पार हो गये अर्थात् सिद्धि प्राप्त कर गये, बूड़े = निमग्न हो गये, सब अंग = पूरी तरह से।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत दोहा रीतिसिद्ध एवं रससिद्ध कवि बिहारी कृत बिहारी सतसई से अवतरित है। कवि सांसारिक भोग-विलास एवं ललित कला के महत्त्व का प्रतिपादन करते हुए कहता है—वीणा आदि वाद्य यंत्रों के मधुर स्वर, काव्य रस, रसपूर्ण गीत एवं भोग-विलासों के आनन्द में जो मनुष्य पूरी तरह नहीं डूबे, वे नाश को प्राप्त हो गये, परन्तु जो मनुष्य ललित कलाओं में निमग्न हो गये वही वास्तविक आनन्द का अनुभव कर सके हैं।

विशेष—(1) कवि की बहुज्ञता का परिचय है।

(6)

"तजि तीरथ..प्रयाग।"

कठिन शब्दार्थ–तजि = छोड़कर, तीरथ = तीर्थ, हरि = श्रीकृष्ण, तन दुति = शरीर की कांति, करि = करना, अनुराग = प्रेम, जिहिं = जिससे, केलि = क्रीड़ा, मग = मार्ग, पग-पग = कदम-कदम, प्रयाग = तीर्थराज प्रयाग।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रससिद्ध कवि बिहारी कृत बिहारी सतसई से अवतरित है। हे मन, तू तीर्थ-स्थलों का मोह छोड़ दे, राधा-कृष्ण के शरीर से निकलने वाली कांति से प्रेम कर जिससे अर्थात् प्रेम करने से ब्रज के क्रीड़ा निकुंजों में प्रत्येक पग पर तीर्थराज प्रयाग के दर्शन हो जाते हैं।

विशेष–(1) भक्ति भावना का परिचायक है, अनुप्रास, पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार का सौन्दर्य है।

(7)

"बड़े न हूजै .... न जाय ।"

कठिन शब्दार्थ–हूजै = हो सकना, गुननि बिनु = गुणों के बिना, विरद = यश, पाय = पाना, कनक = (1) धतूरा (2) सोना, गहनो = आभूषण, गढ़यो = बनाना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रससिद्ध कवि बिहारीकृत बिहारी सतसई से अवतरित है । बिना गुणों को धारण किये केवल पद से यश पाकर कोई महान् नहीं हो सकता, यद्यपि लोग धतूरे को सोना कहते हैं, परन्तु उससे सोने के आभूषण नहीं बनाए जा सकते, अर्थात् सच्ची महानता गुणों से ही आती है ।

विशेष–(1) मनुष्य को महान् बनाने के लिये गुणों का संचय आवश्यक है ।

(2) अनुप्रास और अर्थान्तरन्यास अलंकारों का सौन्दर्य है ।

(8)

"दृग उरझत .... यह रीति ।"

कठिन शब्दार्थ–दृग = आँखें, उरझत = उलझना, टूटत = टूटना, कुटुम = कुटुम्ब, जुरत = जुड़ना, चित = हृदय, प्रीति = प्रेम, परति = पड़ना, हियै = हृदय, रीति = परम्परा ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रससिद्ध कवि बिहारीलाल कृत बिहारी सतसई से अवतरित है । आँखें उलझती हैं तो पावन प्रेम के कारण प्रेम का चतुर बंधन जुड़ता है, एक परिवार टूटकर दूसरा परिवार बसता है, किन्तु दुष्टों के हृदय में ईर्ष्या की गाँठ पड़ जाती है, यह नवीन परम्परा है ।

विशेष–(1) सामाजिक परम्परा का सत्य अनुप्रास अलंकार से युक्त है ।

(9)

"रनित भृंग .... समीर ।"

कठिन शब्दार्थ–रनित भृंग घंटावली = भौंरे के समान ध्वनि करने वाली नायिका की कमर में बंधी घण्टी, झरित = झड़ना, मधुनीर = मकरंद, मंद मंद = धीरे-धीरे, चल्यौ = चलना, कुंजर = हाथी, समीर = वायु ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रससिद्ध कवि बिहारीकृत बिहारी सतसई से अवतरित है । नायिका का शारीरिक सौन्दर्य विकास की ओर है, युवावस्था में कमर में बंधी करधनी में घण्टी की ध्वनि और गति ऐसी लगती है जैसे मदमस्त हाथी कुंजों से वायु के धीमे-धीमे झौंके समान आ रहा हो । कवि नायिका की वय: संधि का वर्णन करता है ।

विशेष–(1) श्रृंगार रस, अनुप्रास अलंकार, लक्षणा शब्द-शक्ति की प्रधानता है ।

(10)

"या अनुरागी .... होय ।"

कठिन शब्दार्थ–या = इस, अनुरागी = प्रेम करने वाले, चित्त = हृदय, गति = स्थिति, बूड़े = डूबना, त्यों-त्यों = वैसे-वैसे, उज्ज्वल = पवित्र ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रससिद्ध कवि बिहारीकृत बिहारी सतसई से अवतरित है । इस प्रेम करने वाले हृदय की स्थिति को कोई नहीं समझ सकता, यह हृदय जैसे-जैसे श्रीकृष्ण की भक्ति में डूबता जाता है वैसे ही पावन होता जाता है ।

विशेष–(1) भक्ति भावना की पवित्रता का स्वरूप व्यंजित है ।

(11)

''सोहत..प्रभात ।''

कठिन शब्दार्थ–सोहत = सौन्दर्ययुक्त, पीत = पीला, पट = वस्त्र, सलौने = सौन्दर्य, गात = शरीर, मनौ = मानो, नीलमनि सैल = नीलमणि पर्वत, आतप = आलोक, पर्‌यो = पड़ना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रससिद्ध कवि बिहारीलाल कृत बिहारी सतसई से अवतरित है । नायिका श्रीकृष्ण को देखकर सखी से कहती है—प्रिय श्रीकृष्ण अपने शरीर पर पीताम्बर धारण किये हुए इस प्रकार सुशोभित हो रहे हैं मानो नीलमणि पर्वत पर प्रभातकालीन सूरज की लालिमा युक्त किरणें विकसित हो रही हों ।

विशेष–(1) प्रकृति सौन्दर्य का श्रीकृष्ण के वस्त्रों के साथ वर्णन मार्मिक है ।

(12)

''स्वारथ..न मारि ।''

कठिन शब्दार्थ–स्वारथ = स्वार्थ, सुकृत = पुण्य, श्रम-वृथा = परिश्रम बेकार, विहंग = पक्षी, पराये = दूसरे ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा बिहारी सतसई से अवतरित है । कवि बिहारी महाराज जयसिंह को बाज के माध्यम से समझाते हैं—हे राजन, भली प्रकार विचार करके देख लो कि इस कार्य को करने में न तो स्वार्थ-सिद्धि होती है और न ही किसी पुण्य की प्राप्ति होती है, तब, हे बाज, तू दूसरों के हाथों में पड़कर अपने पक्ष का अहित मत कर ।

विशेष–(1) नीति प्रधान सत्य की अनुभूति समन्वयवादी दृष्टिकोण की ओर है ।

(13)

''कैसे छोटे..चूहे के चाम ।''

कठिन शब्दार्थ–नरन = मनुष्य, सरत = पूरा होना , बड़ेनु = बड़े, दमामो = नगाड़ा, चाम = खाल ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रससिद्ध कवि बिहारीलाल द्वारा लिखित बिहारी सतसई से अवतरित है । छोटे व्यक्तियों से बड़े कार्यों को कैसे पूरा किया जा सकता है ? जैसे चूहे की खाल से नगाड़ा नहीं मढ़ा जा सकता ।

विशेष–(1) उदाहरण अलंकार का सार्थक प्रयोग है ।

(14)

''अति अगाधु..बुझाइ ।''

कठिन शब्दार्थ–अति = अत्यन्त, अगाधु = गहरा, औथरौ = उथला, कूपु = कुआँ, सरु = सरोवर, बाइ = बावड़ी, सो ताकौ = सो उसका, सागरु = सागर, बुझाइ = शान्त हो जाए ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा महाकवि बिहारीलाल कृत बिहारी सतसई से अवतरित है । नदी, कुआँ, सरोवर और बावड़ी का जल अत्यन्त गहरा और अत्यन्त उथला होता है, प्यासे व्यक्ति की प्यास जहाँ शान्त हो जाये उसके लिये वही सागर के समान है ।

विशेष–(1) अनुप्रास अलंकार का प्रभावी प्रयोग है ।

(15)

"को कहि .... वे फूल ।"

कठिन शब्दार्थ–बड़ेनु = बड़े, लखै = दिखाई देना, दई = दैव, डारनु = डाल ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना हिन्दी काव्य संसार में रीतिकाल के अन्तर्गत रीतिसिद्ध धारा के कवियों में श्रेष्ठ रससिद्ध कवि बिहारीलाल द्वारा लिखित बिहारी सतसई से अवतरित है । बड़े व्यक्ति के द्वारा भूल किए जाने पर भी उसकी भूल को न देखकर के भी कोई कुछ नहीं कहता, क्योंकि देव ने गुलाब जैसे सौन्दर्यशाली फूल की डालों पर भी काँटे लगा दिये हैं ।

विशेष–(1) नीति प्रधान मूल्यों की खोज प्रतीकात्मक रूप में है ।

(2) अन्योक्ति अलंकार की छटा दर्शनीय है ।

(16)

"मोहन मूरति .... जग होय ।"

कठिन शब्दार्थ–अति = अत्यन्त, अद्‌भुत = आश्चर्ययुक्त, बसति = निवास, सुचित = श्रेष्ठ हृदय, जग = संसार ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा हिन्दी काव्य क्षेत्र में रीतिकाल या श्रृंगार काल के अन्तर्गत रीतिसिद्ध काव्य धारा के प्रतिनिधि कवियों में श्रेष्ठ महाकवि बिहारीलाल द्वारा लिखित बिहारी सतसई से अवतरित है । भगवान श्रीकृष्ण के अलौकिक सौन्दर्य में जिसका हृदय निवास करता है वह उन्हीं की छाया में सारे संसार को देख लेता है ।

विशेष–(1) भक्ति और जीवन की सार्थकता अनुप्रास अलंकार से युक्त है ।

(17)

"सखि .... ज्वाल ।"

कठिन शब्दार्थ–सोहति = सुन्दर लगना, गोपाल = श्रीकृष्ण, उर = हृदय, गुंजनु = भौंरे, माल = माला, बाहिर = बाहर, लसति = युक्त होना, पिये = प्रिय, दावानल = दावाग्नि (जंगल में लगती है) ज्वाल = आग ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा हिन्दी काव्य जगत में शृंगारकाल के अन्तर्गत रससिद्ध कवि बिहारीलाल द्वारा लिखित बिहारी सतसई से अवतरित है । नायिका अपनी सखी से कहती है—हे सखी! कृष्ण के गले में माला भौंरों के समान गुंजार करती सुशोभित हो रही है, बाहर से ऐसी लगती है जैसे दावाग्नि के समान सबको जलाकर भस्म कर देगी ।

विशेष–(1) लुप्तोपमा अलंकार, लक्षणा शब्द-शक्ति और चित्रोपमता की प्रधानता है ।

(18)

"जात जात .... मोष ।"

कठिन शब्दार्थ–जिय = हृदय, घरी = घड़ी भर में, मोष = मोक्ष ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रचना हिन्दी काव्य क्षेत्र में श्रृंगार काल के अन्तर्गत रीतिसिद्ध काव्य धारा के कवियों में श्रेष्ठ महाकवि बिहारीलाल द्वारा लिखित बिहारी सतसई, मुक्तक काव्य से अवतरित है । मानव के मन से माया का प्रभाव धीरे-धीरे समाप्त

होकर हृदय में संतोष का अनुभव होता है, भक्ति भावना की गहराई बढ़ने से घड़ी भर में दैव की कृपा से मोक्ष मिल जाता है।

विशेष–(1) जगत की असारता का परिचय देकर श्रीकृष्ण भक्ति की ओर आकर्षण है।

(19)

"कीनें हूँ .... लौनु।"

कठिन शब्दार्थ–कोटिक = करोड़ों, जतन = प्रयास, काढ़े = निकालना, मो = मेरे, लौनु = नमक।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना श्रृंगारकाल में रीतिसिद्ध काव्य धारा के कवियों में श्रेष्ठ बिहारीलाल कृत बिहारी सतसई से अवतरित है। मैंने करोड़ों प्रकार के प्रयास करके देख लिए, अब श्रीकृष्ण के सौन्दर्य को हृदय से कोई भी अलग नहीं कर सकता, भक्त और भगवान का सम्बन्ध पानी में मिले हुए नमक के समान हो गया है।

विशेष–(1) भक्ति भावना की मार्मिकता का समन्वय है।

(20)

"कहत, नटत .... सौं बात।"

कठिन शब्दार्थ–कहत = कहना, नटत = मना करना, रीझत = प्रसन्न होना, खिझत = गुस्सा करना, लजियात = लज्जा अनुभव करना, मौन = शान्त, नैननु = आँखों।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रचना श्रृंगार काल में रीतिसिद्ध काव्यधारा के प्रतिनिधि कवियों में श्रेष्ठ महाकवि बिहारीलाल द्वारा लिखित बिहारी सतसई से अवतरित है। भरे हुए सभा भवन में राधा-कृष्ण आँखों से मौन रूप में कहतें, मना करते, प्रसन्न होते, गुस्सा करते, मिलते, हर्षित होते और सभासदों को देखकर लज्जा के वशीभूत हो जाते हैं, ऐसे दोनों पात्र आँखों से ही अपनी पूरी बातें कर लेते हैं।

विशेष–(1) अनुप्रास अलंकार, श्रृंगार रस और वैदर्भी रीति का प्रयोग है।

(21)

"सोहतु .... जोगु।"

कठिन शब्दार्थ–सोहतु = सुन्दर, संग = साथ, ओठनु = होंठ, नैनन = आँखें।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रीतिकाल में रससिद्ध कवि बिहारी द्वारा लिखित बिहारी सतसई से अवतरित है। सभी लोग यह कहते हैं कि साथ, समानता वालों के साथ ही सुन्दर लगता है, जिस प्रकार पान की पीक होठों को लाल करती है और काजल आँखों की रोशनी बढ़ाता है, उसी प्रकार मित्रता समानता से ही श्रेष्ठ होती है।

विशेष–(1) उदारहरण अलंकार है।

(22)

"नीच हिए .... होत।"

कठिन शब्दार्थ–हिए = हृदय, हुलसे = प्रसन्नता, गहें = प्राप्त करना, माथे = सिर, मारियत = मारना।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना श्रृंगार काल के इतिहास में रीतिसिद्ध काव्यधारा के प्रतिनिधि कवियों में श्रेष्ठ महाकवि बिहारीलाल द्वारा लिखित बिहारी सतसई से अवतरित है। नीच मनुष्य गेंद के समान हृदय में प्रसन्नता अनुभव करता रहता है। उसको

जैसे-जैसे सज्जन बनाने का प्रयास किया जाता है, वैसे-वैसे अज्ञानता से ज्ञान की ओर उन्मुख किया जाता है।

विशेष–(1) वैदर्भी रीति और नाद सौन्दर्य का चमत्कार है।

(23)

"तच्यौ आँच..पसीजि।"

कठिन शब्दार्थ–तच्यौ = तृप्त होकर, आँच = आग, रह्यौ = रहना, प्रेम-रस = प्रेम रूपी रस, नैननु = आँखें, मग = मार्ग, हियौ = हृदय, पसीजि = पिघलकर।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रससिद्ध कवि बिहारी लाल द्वारा लिखित है। नायिका की सखी नायक से जाकर कहती है कि अब विरह की आग में तृप्त होकर, प्रेम रूपी रस से शीतल होकर आँखों के मार्ग से उसका हृदय जल बनकर पिघल रहा है।

विशेष–(1) नायिका की विरह वेदना को रूपक अलंकार द्वारा प्रतिपादित किया गया है।

(24)

"मानहु बिधि..पायंदाज।"

कठिन शब्दार्थ–मानहु = मानो, बिधि = विधाता, तन = शरीर, छवि = सौन्दर्य, दृग-पग-पोंछन = आँखों रूपी पैरों को पोंछने हेतु, भूषण = आभूषण।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत दोहा रससिद्ध कवि बिहारीकृत बिहारी सतसई से अवतरित है। नायिका के सौन्दर्य का वर्णन करती हुई दूती नायक से कहती है कि उसके तन पर आभूषण ऐसे सुशोभित हो रहे हैं मानो दर्शकों के नेत्र रूपी चरणों की चरण रज को, अंगों पर चलने से पूर्व, पोंछने के लिये विधाता ने सोने के पायदान बना दिए हों।

विशेष–(1) शृंगार रस के साथ भावात्मक शैली की प्रधानता है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न–

प्रश्न 1. 'तौ पर वारौं उरबसी, सुन राधिके सुजान।
तू मोहन के उर बसी है उरबसी समान।"

इन पंक्तियों में कौन-सा अलंकार है ?

(क) दृष्टान्त (ख) वक्रोक्ति
(ग) यमक (घ) श्लेष।

उत्तर–(ग)।

प्रश्न 2. 'अनबूड़े बूड़े तरे जे बूड़े सब अंग' पंक्ति में कौनसा अलंकार है ?

(क) प्रतीप (ख) भ्रान्तिमान
(ग) विरोधाभास (घ) अन्योक्ति

उत्तर–(क)।

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

प्रश्न 3. 'स्वारथ सुकृत न श्रम वृथा, देखि विहंग विचारि।
बाज पराये पानि पर तू पच्छीनु न मारि।'

यह अन्योक्ति किसके प्रति है ?

उत्तर–महाकवि बिहारीलाल जयपुर के महाराजा सवाई जयसिंह के दरबारी कवि थे, कवि ने अपने महाराज को बाज पक्षी का उदाहरण देकर कर्त्तव्यबोध कराया है।

प्रश्न 4. 'अति अगाधु अति ओथरो नदी, कूप, सरु, बाइ।
सौ ताकौ सागरु जहाँ, जाकी प्यास बुझाइ॥

इस कथन में क्या नीतिगत बात कही गई है ?

उत्तर–जो मनुष्य अपने जीवन में संतोषी होता है उसके लिये असमानता या असंतोष का कोई महत्त्व नहीं होता है।

प्रश्न 5. 'ज्यो-ज्यों बूड़े स्याम रंग त्यों-त्यों उज्ज्वल होय'
अनुरागी चित्त की इस गति का रहस्य क्या है ?

उत्तर–माया, मोह, मद, लोभ को छोड़कर मनुष्य श्रीकृष्ण भक्ति में एकाकार हो जाता है।

प्रश्न 6. 'कैसे छोटे नरन सों सरत बड़ेन के काम।
मढ़यो दमामो जात क्यों कहि चूहे के चाम।'

इस कथन में बड़ों के लिये किस परामर्श की व्यंजना है ?

उत्तर–बड़े-बड़े कार्य करने वाले बड़े लोगों को छोटे-छोटे कार्य करने वालों के प्रति उदासीनता का भाव नहीं रखना चाहिए।

प्रश्न 7. दृग उरझत टूटत कुटुम जुरत चतुर चित प्रीति।
परति गाँठि दुरजन हिए दई नई यह रीति॥

इन पंक्तियों में प्रयुक्त अलंकार का नाम और लक्षण लिखिए।

उत्तर–किसी काव्य या ग्रंथ में वर्ण की आवृत्ति होती है तो वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है, इस पद में अनुप्रास अलंकार का मार्मिक प्रयोग है।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. बिहारी के काव्य की समालोचना निम्नांकित के आधार पर कीजिये—

(i) काव्य-विषय (ii) अलंकार
(iii) काव्यगुण (iv) भाषा।

उत्तर–(i) **काव्य-विषय**–महाकवि बिहारी रीतिकाल के श्रेष्ठ कवि हैं, बिहारी सतसई में राधाकृष्ण को आधार रूप में स्वीकार करते हुए भाव और कला पक्ष का श्रेष्ठ समन्वय किया है। रस-कल्पना तत्व, प्रकृति चित्रण के साथ भाषा, छंद, अलंकार और शैली का समन्वय उत्तम है। बिहारी की अद्भुत कल्पना शक्ति एवं कवि प्रतिभा का सहज परिचय मुक्तक काव्य में मिलता है। इन्होंने काव्य को रस की आत्मा के रूप में स्वीकार किया है, श्रृंगार रस को संयोग और वियोग पक्ष का नायिका भेद के आधार पर वर्णन किया है, भाव शक्ति का सूक्ष्म एवं मनमोहक चित्रण देख सकते हैं—

''बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाय,
सौंह करे मौहनि हंसे दैन कहैं नटि जाय॥

नायिका भेद में कवि ने मुग्धा, मध्या, प्रौढ़ा, मनिनी, खण्डिता, कनिष्ठा, ज्येष्ठा आदि का मनोहारी वर्णन किया है। कल्पना की समाहार शक्ति और बहुज्ञता बेजोड़ है।

(ii) अलंकार–बिहारी ने काव्य में चमत्कार का सृजन करने के लिये अलंकारों का प्रयोग किया है । डॉ. रामसागर त्रिपाठी ने लिखा है—"इनका एक भी दोहा ऐसा नहीं है जिसमें चमत्कार, उक्ति-वैचित्र्य या किसी अलंकार का प्रयोग न पाया जाता हो ।" बिहारी ने शब्दालंकार और अर्थालंकारों का प्रयोग मर्यादा की रक्षा और विकास के लिये सार्थक रूप में किया है । जैसे—

अनुप्रास — रस सिंगार मंजनु किए कंजनु मंजनु दैन ।
अंजन रंजन हू बिना, खंजनु गंजनु नैन ।
श्लेष — चिर जीवों जोरी जुरे, क्यों न सनेह गंभीर ।
को घटि ये वृषभानुजा वे हलधर के वीर ॥
यमक — कनक-कनक ते सौगुनी मादकता अधिकाय
उत्प्रेक्षा — सोहत ओड़े पीत पत स्याम सलौने गात ।
मनो नीलमणि शैल पर आतप पर्‌यो प्रभात ॥

इसके अलावा, उपमा, रूपक, काव्यलिंग, संदेह, भ्रांतिमान, अन्योक्ति, दृष्टान्त आदि अनेकानेक अलंकारों का सार्थक प्रयोग मिलता है ।

(iii) काव्य-गुण–बिहारी कें काव्य में सामासिक कथन और कल्पना की समाहार शक्ति होने के कारण माधुर्य और प्रसाद गुण की प्रधानता है । भक्ति भावना के वातावरण में प्रसाद गुण की मार्मिकता देखी जा सकती है—

"या अनुरागी चित्त की गति समुझै नहिं कोय ।
ज्यों-ज्यों बूड़े स्याम रंग त्यों-त्यों उज्ज्वल होय ।

नायिका भेद वर्णन में माधुर्य गुण की सरलता मिलती है—

"बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाइ ।
सोंह करै मोहन हँसै दैन कहैं नटि जाइ ॥

(iv) भाषा–बिहारी सतसई में ब्रजभाषा का प्रयोग है, आचार्य शुक्ल ने लिखा है—"बिहारी की भाषा चलती होने पर भी साहित्यिक है, वाक्य रचना व्यवस्थित है और शब्दों के रूपों का व्यवहार एक निश्चित प्रणाली पर है ।" कहीं-कहीं पूर्वी और अवधी भाषा के शब्दों का सार्थक प्रयोग मिल जाता है । अरबी-फारसी शब्द भी मिलते हैं, समास और मुहावरों का प्रयोग सटीक है—

"जब-जब वे सुधि कीजिए, तब-तब सब सुधि जांहि ।
आँखिन आँखि लगी रहे, आँखें लागति नांहि ।"

इस रचना में आँख लगना मुहावरे का कलात्मक प्रयोग है ।

प्रश्न 9. बिहारी के काव्य की लोकप्रियता के कारण बताइए ।

उत्तर–हिन्दी साहित्य में बिहारी सतसई का महत्त्वपूर्ण स्थान है । भाव विशालता, गंभीरता और अर्थ गाम्भीर्य की दृष्टि से सतसई का विशेष महत्त्व है । मानव जीवन की सूक्ष्म से सूक्ष्म झाँकियाँ कुशलता का परिचय देती हैं, नायिका भेद, नखशिख वर्णन, प्रकृति चित्रण, षड्ऋतु वर्णन, श्रृंगार वर्णन सजीव रूप में है । बिहारी सतसई श्रृंगार, भक्ति, नीति का अद्‌भुत समन्वय है । भक्ति भाव आडम्बरहीन रूप में मिलता है—

"जप माला छापा तिलक सरै न एको काम ।
मन काँचे नाचे वृथा, सांचे रांचे राम ।"

सांसारिक भोग-विलास में निरत रहने वाले लोगों के लिये कवि ने कहा है—

"जमकरि मुँह तरहरि पर्‌यो, इहिं धरहरि चित लाउ ।
विषय तृषा परिहर अजौ नरहरि के गुण गाउ ।"

प्रेमी-प्रेमिका के हृदय में प्रेम का अंकुरण होते ही दुष्टों की ईर्ष्या किस प्रकार बढ़ती है, देखें—

"दृग उरझत टूटत कुटुम जुरत चतुर चित प्रीति ।
परति गांठि दुरजन हिए, दई नई यह रीति ।"

महाकवि नायिका के नेत्रों की विशालता का परिचय कराते हुए उसकी तुलना ब्रह्म प्राप्ति में रत योगी से करते हुए कहते हैं—

"जोग जुगति सिखए सबै, मनो महामुनि मैन ।
चाहत पिय अद्वैतता कानन सेवत नैन ।"

विहारी ने दरबारी संस्कृति को स्वीकार करने के बाद भी भारतीय मर्यादा के प्रति जागरूकता रखी है । महाराज जयसिंह नवविवाहिता के आसक्तिपूर्ण प्रेम में आबद्ध हो गये । प्रजा की ओर से ध्यान भंग हुआ तब अन्योक्ति द्वारा कवि संदेश देता है—

"नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास इहि काल ।
अली कली ही सों बंध्यौ आगे कौन हवाल ।"

बिहारी सतसई की लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण है कि इस ग्रंथ का अनुवाद गुजराती-फारसी, संस्कृत, अंग्रेजी आदि अनेक भाषाओं में हो चुका है, डॉ. हरवंशलाल शर्मा का कथन समीचीन है—"जिस कवि की कला ने जन-साधारण से लेकर राजा-महाराजा तक, सामान्य हिन्दी का ज्ञान रखने वालों से लेकर संस्कृत के प्रकाण्ड पंडितों तक, ब्रज क्षेत्र से लेकर गुजराती-मराठी आदि प्रान्तीय भाषाओं के क्षेत्र तक, देश से लेकर विदेश तक के आलोचकों को रस से आप्लावित किया हो, वह कोई सामान्य सृष्टा नहीं हो सकता, निः सन्देह बिहारी हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ मुक्तककार हैं तथा भाषा के यशस्वी महाकवि और विश्व के आदरणीय कलाकार के रूप में सदैव याद किये जायेंगे ।"

प्रश्न 10. 'बिहारी ने अपने काव्य में गागर में सागर भर दिया है ।' इस कथन को बिहारी की काव्यगत विशेषताओं के आधार पर प्रमाणित कीजिए ।

उत्तर—बिहारी सतसई के दोहे अति लघु आकार वाले होते हुए भी शिकारी के उन बाणों के समान हैं जो देखने में तो छोटे लगते हैं किन्तु सागर के समान अर्थ की गहराई का बोध कराते हैं । कवि ने अपने दोहों में बड़े-बड़े भाव कूट-कूट कर भर दिये हैं । प्रत्येक दोहा कसा हुआ है, शब्दों का चुनाव करने में कवि ने अपनी प्रतिभा का सुन्दर प्रयोग किया है, प्रत्येक शब्द गंभीर भावों को संगठित किए रहता है, इसीलिये लाला भगवान दीन ने कहा कि—'बिहारी के दोहे शक्कर की तरह मीठे और चसकदार हैं ।'

बिहारी सतसई में कविता के भावपक्ष और कलापक्ष दोनों का समन्वय मिलता है, उनके दोहों में जहाँ काव्य की आत्मा की अनुभूति होती है वहीं उनकी प्रभाव शक्ति दर्शनीय हो जाती है, इसी गुण के आधार पर नवोढ़ा नायिका के प्रेमपाश में जकड़े हुए तथा

राजकाज से विमुख राजा जयसिंह को चुनी हुई शब्दावली का प्रयोग करके उचित रास्ते पर ला दिया था—

"नहिं पराग नहिं मधुर मधु, नहिं विकास इहि काल।
अली कली ही सों बंध्यौ आगे कौन हवाल॥"

इसी प्रकार अन्योक्ति के द्वारा निर्दोष हिन्दू राजाओं को सताने वाले राजा जयसिंह को बाज के माध्यम से समझाया—

"स्वारथ सुकृत श्रम वृथा देख विहंग विचारि।
बाज पराये पानि पर तू पंछिहि न मारि॥"

अन्योक्ति के द्वारा मानव प्रकृति का मनोहारी वर्णन किया है। उन्होंने गागर में सागर भरने का सफल प्रयास किया है—प्रेम की पावन अनुभूति में प्रेमी युगल के प्रेम को देखकर दुष्टों के हृदय की वेदना का सामाजिक भावना में सजीव चित्र प्रस्तुत किया है—

"दृग उरझत टूटत कुटम, जुरत चतुर चित्त प्रीति।
परत गाँठि दुरजन हिए दई नई यह रीति॥

बिहारी ने अपने दोहों को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिये सामासिक प्रयोग किया है। आराध्यदेव कृष्ण के प्रति भक्त हृदय की चेतना का सरस परिचय दिया, जिसके कारण भक्त और भगवान के बीच एकमेव सत्य की अनुभूति करते हैं—

"कीनेहू कोरिक जतन, अब कहि काढ़ै कौन।
मो मन मोहन रूप मिलि पानी मैं कौ लौनु।"

वाणी की गहराई और चमत्कार के लिए सम्पूर्ण प्रकृति को सजीव रूप में उभारते हैं, नायिका ने धवल बारीक वस्त्र धारण कर रखे हैं, जिनसे अंग-प्रत्यंगों का सौन्दर्य, सागर और देव वृक्ष की डालों के समान सुन्दर दिखाई दे रहा है—

"झीने पट में झुलमुली झलकत ओप अपार।
सुरतरु की मनो सिन्धु में लसत सपल्लव डार॥"

श्रीकृष्ण के प्रति अनन्य भक्ति भाव सभी प्रकार के वाद-विवाद से अलग हटकर स्वीकार किया है। अपने प्रभु की रूप छवि को सदैव अपने हृदय में धारण करने की ललक बराबर बनी रहती है—

"सीस मुकुट कटि काछनी, कर मुरली उरमाल।
यदि बानक मो मनबसौ, सदा बिहारीलाल।"

प्रस्तुत विवेचन से स्पष्ट है कि बिहारी के दोहों में शृंगार, शांत रस के साथ शब्दालंकार और अर्थालंकारों का सार्थक प्रयोग मिलता है, अत: बिहारी का काव्य गागर में सागर के समान भावों की सूक्ष्मता की ओर ले जाता है।

प्रश्न 11. मुक्तक काव्य की परिभाषा लिखकर बिहारी के मुक्तकों की विशेषताएँ प्रकट कीजिए।

उत्तर–बिहारी एक सफल मुक्तककार थे, अनेकानेक आलोचकों ने उनके इस गुण की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है, इन आलोचकों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के शब्दों में—"मुक्तक कविता में जो गुण होना चाहिए वह बिहारी में अपने चरमोत्कर्ष तक पहुँचा है इसमें कोई संदेह नहीं।" आचार्य शुक्ल पुनः लिखते हैं—

"मुक्तक में प्रबंध के समान रस की धारा नहीं बहती, जिसमें कथा प्रसंग में अपने को भूला हुआ पाठक मग्न हो जाता है, इसमें तो रस के जैसे छींटे पड़ते हैं, जिनसे हृदय की कलिका थोड़ी देर के लिए जैसे खिल उठती है, यदि प्रबंध काव्य एक विस्तृत वनस्थली है तो मुक्तक एक चुना हुआ गुलदस्ता है।"

डॉ. गणपति चन्द गुप्त ने मुक्तक काव्य में निम्नांकित विशेषताएँ आवश्यक मानी हैं—

(1) कवि ने ऐसे विषयों, प्रसंगों एवं भावनाओं का चुनाव किया हो जो रस निष्पत्ति की क्षमता रखते हों।

(2) कवि की शैली में ऐसी सजीवता एवं मार्मिकता हो कि वह छोटी से छोटी बात को भी धार्मिक बना सके।

(3) मुक्तककार में कल्पना की समाहार शक्ति होनी चाहिए।

(4) भाषा-शैली में समास का गुण होना चाहिए।

(5) कवि को व्यंग्य प्रयोग में दक्षता प्राप्त होनी चाहिए।

(6) भाषा में कोमलता, सरसता और प्रवाह का गुण होना चाहिए।

(7) शब्द योजना में नाद सौन्दर्य को भी प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

बिहारी सतसई में उक्त सभी विशेषताएँ सहज ही मिल जाती हैं, आलम्बन की चेष्टाओं में नायिका की चतुरता का दृश्य मनोहारी है—

"बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाइ।
सोंह करैं मोहन हँसें, दैन कहै नट जाइ॥"

शैली की सजीवता के आधार पर कवि ने नायिका की सामान्य चेष्टा को भी प्रभावोत्पादक तरीके से प्रस्तुत किया है, उसकी टेढ़ी चितवन के विषय में सौन्दर्य का सरस और मार्मिक तथ्य देखा जा सकता है—

"अनियारे दीरघ दृगन कितीन तरुन समान।
वह चितवनि औरै कछू, जिहिं बस होत सुजान।"

कल्पना की समाहार शक्ति में अनुभूतियाँ प्रबल रहती हैं, नायिका अपने नायक की अनुपस्थिति में वियोग का तीव्र अनुभव कर रही है, उस समय अंतरंग सखी नायिका को समझाती है—

तो पर वारौं उरबसी, सुनि राधिके सुजान।
तू मोहन के उर बसी, है है उरवसी समान।"

महाकवि बिहारी ने भाषा-शैली में समास शक्ति का प्रयोग गागर में सागर भरने जैसा किया है—

कहत नटत रीझत खिझत मिलत खिलत लजियात।
भरे मौन में करत हैं नैनन ही सों बात।"

व्यंग्य प्रयोग की दक्षता में बिहारी कुशल हैं, व्यंजना पद्धति का आधार लेकर नवोढ़ा नायिका के प्रेमपाश में जकड़े हुए और राजकार्य से विमुख राजा जयसिंह को जाग्रत कर दिया था—

"नहिं पराग नहिं मधुर मधु
नहिं विकास इहि काल।

अली कली ही सों बंध्यो,
आगे कौन हवाल।"

भाषा की सरलता और कोमलता कवि की प्रमुख चेतना है । इस प्रयोग की सत्यता कतिपय दोहों से प्रमाणित है—

(1) या अनुरागी चित्त की गति समुझै नहिं कोइ।
ज्यों-ज्यों बूड़े स्याम रंग, त्यों त्यों उज्जवल होइ।"

मुक्तक काव्य की सफलता में नाद सौन्दर्य के मूल्य बिहारी के काव्य का प्राण तत्व हैं, उच्चकोटि की ध्वन्यात्मकता विद्यमान है—

"रनित भृंग घंटावली, झरतदान मधु नीर।
मंद-मंद आवत चल्यौ, कुंजर कुंज समीर।"

अत: स्पष्ट हो जाता है कि बिहारी काव्य के कतिपय दोष भाव को छोड़ दिया जावे तो नि:संदेह मुक्तक काव्य की बारीक़ियों का जितना ज्ञान बिहारी को था, उतना हिन्दी काव्य में अन्य कवि में नहीं मिलता है।

प्रश्न 12. निम्नलिखित दोहों की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

उत्तर–(1) सखि ! .... की ज्वाला ॥
(2) मानहु .... पायंदाज ॥

उत्तर–व्याख्या भाग में देखिए।

अध्याय 14
गिरधर कविराय

कवि परिचय–मानव जीवन के आस-पास बिखरे हुए जीवन मूल्यों के यथार्थ को अपनाने वाले गिरधर कवि का मन नीति प्रधान सत्य का अनुसंधान करता है, इनका जन्म सं. 1770 में हुआ था, आलोचकों की खोजों के आधार पर देहावसान का समय सं. 1840 के आस-पास माना है, इनका काव्य श्रृंगारकाल या रीतिकाल के अंतिम चरण का काव्य है। अवध में जन्म लेने के बाद लम्बे समय तक पंजाब प्रांत में लम्बे समय तक रहे, जिसके कारण अवधी भाषा में पंजाबी भाषा के शब्द मिल गये हैं, इन्होंने अपने जीवन काल में 'गिरधर की कुण्डलियाँ' नामक ग्रंथ की रचना की है। आरम्भ से अंत तक काव्य का विषय नीति ही अपनाया है। सामाजिक अनुभव की विशालता होने के कारण गिरधर की भाषा में सरलता और सरसता का समावेश है, जिनके द्वारा मानव जीवन में नवीन उत्साह का संचार होने लगता है, नीति, सदाचार और ज्ञान का स्वरूप मानव के व्यवहार पक्ष को सीधे-सीधे प्रभावित करता है, इसलिए गिरधर की कुण्डलियाँ मन को अपनी ओर आकर्षित करके व्यवहारिक ज्ञान में श्रीवृद्धि करती हैं।

कवि ने काव्य रचना में कुण्डलियाँ छंद का प्रयोग किया है, इस छंद को उचित स्थान और प्रसार का श्रेय कवि के पक्ष में है। इस महाकवि की काव्य प्रतिभा के सम्बन्ध में

डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने ठीक ही लिखा है—''वस्तुतः साधारण हिन्दीभाषी जनता के सलाहकार प्रधानतः तीन ही रहे—तुलसीदास, गिरधर और घाघ, तुलसी धर्म और अध्यात्म के क्षेत्र में और घाघ खेती-बाड़ी के मामले में प्रसिद्ध रहे। इस प्रकार गिरधर ने सीधी और सरल भाषा में अभिधा शब्द-शक्ति का प्रयोग करते हुए व्यवहार पक्ष पर ध्यान केन्द्रित रखा है इसलिए अलंकारों का चमत्कार दिखाई नहीं देता, कवि का एक मात्र उद्देश्य यह है कि जनसाधारण तक व्यवहार के सत्य को लोकप्रिय कैसे बनाया जाय, सो काव्य रचना से इस सत्य का प्रतिपादन करके गिरधर जनसाधारण के अधिक निकट हैं।

व्याख्या भाग

कुण्डलियाँ

(1)

''गुन के गाहक..गुन के।''

कठिन शब्दार्थ—गुन = गुण, गाहक = ग्राहक या खरीददार, सहस = हजारों, नर = मनुष्य, बिनु = बिना, लहै = पाना, कोय = कोई, कागा = कौआ, कोकिला = कोयल, सुहावन = अच्छा लगना, दोऊ = दोनों, अपावन = अपवित्र, ठाकुर = स्वामी।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद रीतिकालीन कविता के अंतिम चरण में प्रसिद्ध नीति प्रधान कवि गिरधर द्वारा लिखित 'गिरधर की कुण्डलियाँ' संग्रह से अवतरित है। कवि ने कहा है कि इस असार संसार में हजारों-हजारों लोग गुणों का सम्मान करने वाले हैं, बिना गुण मनुष्य को कोई भी स्वीकार नहीं करता, जिस प्रकार कौआ और कोयल के शब्द सभी सुनते हैं, इसमें कोयल का रसभरा शब्द सबको अच्छा लगता है किन्तु कौआ अपनी कर्कश वाणी से किसी के मन को अपनी ओर आकर्षित नहीं कर पाता, फिर दोनों का एक ही रंग है, फिर भी कौआ पवित्र नहीं होता, गिरधर कवि कहते हैं कि मन के स्वामी लोगों सुनो—गुणहीन को कोई स्वीकार नहीं करता और हजारों लोग गुणों के खरीददार बन जाते हैं।

विशेष—(1) कवि ने लोकमान्यता के आधार पर कोयल के समान वाणी अपनाने पर बल दिया है।

(2) उदाहरण अलंकार का प्रयोग है।

(2)

''जा की धन-धरती..धरती जाकी।''

कठिन शब्दार्थ—हरी = अहंकारयुक्त, ताहि = उसको, लीजै = लेना, संग = साथ, जाहै = जिसको, डारु अपंग = अपंग कर डालता है, परतीत = प्रेम, सौहैं = सौगन्ध, खटक = अविश्वास या धोखा, ताकी = उसकी, अरि समान = दुश्मन के समान, परिहरिय = छोड़कर।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद रचना रीतिकालीन काव्य के अंतिम चरण में लोक-आस्था के प्रसिद्ध कवि गिरधरकृत 'गिरधर की कुण्डलियाँ' से अवतरित है। जिस मनुष्य की धरती और धन अहंकार से भरी है उसके साथ नहीं रहना चाहिए, ऐसा मनुष्य अपने अहंकार से दूसरों को अपंग बना देता है, अतः अवसरवादी पात्र से प्रेम करना जीवन की सबसे बड़ी भूल है, वह सौ-सौ सौगन्ध लेकर अपने हृदय में एक भी बात या सौगन्ध का स्मरण नहीं रखता, गिरधर कवि कहते हैं कि ऐसे मनुष्य के मन से स्वार्थ भावना

समाप्त नहीं होती, अतः इस प्रकार के लोगों को दुश्मन के समान छोड़ देना ही हितकारक होता है ।

विशेष—दुर्जन मनुष्य की पहचान का पथ समझाया गया है, पुनरुक्ति प्रकाश अलंकार और अभिधा शब्द-शक्ति का सार्थक प्रयोग है ।

(3)

"दौलत पाय..ही के दौलत ।"

कठिन शब्दार्थ–दौलत = धन, पाय = प्राप्त करके, सपने = स्वप्न, अभिमान = अहंकार, चारि = चार, ठाउँ = स्थान, जियत = जीवन, जग = संसार, जस = यश, लीजै = प्राप्त करना, घट = हृदय में, तौलत = तौलना, पाहुन = घर में, निसि = रात ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद रचना श्रृंगार काल के अंतिम चरण में चमत्कारवाद से हटकर जीवन के व्यावहारिक सत्य को उजागर करने में समर्थ कवि गिरधर द्वारा लिखित गिरधर की कुंडलियाँ काव्य संग्रह से अवतरित है, मनुष्य को धन पाकर स्वप्न में भी अभिमान नहीं करना चाहिए, क्योंकि लक्ष्मी चंचल है, एक स्थान पर स्थिर नहीं रहती इसलिए संसार में जन्म लेकर यश प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए । मीठी वाणी और विनय भावना सबके प्रति रखते हुए आनन्द की अनुभूति होनी आवश्यक है, प्रत्येक हृदय में इस दौलत का प्रभाव होना चाहिए, क्योंकि लक्ष्मी या धन तो चार दिन की चाँदनी के समान है ।

विशेष—(1) कवि ने धन से अधिक वाणी और व्यवहार की प्रधानता पर बल दिया है ।

(2) अभिधा शक्ति के प्रयोग में लोक-मान्यताएँ मार्मिक हैं ।

(4)

"साईं या संसार..कोई साईं ।"

कठिन शब्दार्थ–साईं = प्रभु, मतलब = स्वार्थ, ब्यौहार = व्यवहार, पैसा गाँठि = धन पास में, ताको = उसका, यार = मित्र, जगत = संसार, लेखा = परम्परा, करत = करना, बेगरजी = अनावश्यक, प्रीति = प्रेम, बिरला = हजारों या लाखों में एक ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद रीतिकालीन काव्य में कवि गिरधर द्वारा लिखित 'गिरधर की कुण्डलियाँ' काव्य संग्रह से अवतरित है, इस असार संसार में सभी मतलब या स्वार्थ के व्यवहार हैं, जब तक धन पास में होता है तब तक अनेक मित्र बन जाते हैं, पैसे के प्रिय मित्र साथ-साथ घूमते रहते हैं, जब पैसा पास नहीं होता तो मित्र लोग भी मुख से नहीं बोलते, गिरधर कवि कहते हैं कि यह संसार का नियम है कि निःस्वार्थ प्रेम की भावना किसी बिरले में ही होती है अर्थात् हजारों में कोई एक होता है जो स्वार्थ रहित प्रेम की भावना लेकर मित्रता करता है ।

विशेष—(1) धन और जीवन का महत्त्व समझाया है ।

(5)

"बिना विचारे..जो बिना विचारे ।"

कठिन शब्दार्थ–बिना विचारे = बिना चिन्तन के, पाछै = पीछे, पाछिताय = प्रायश्चित करना, काज = कार्य, बिगारै = बिगाड़ना, आपुनो = अपना, जग = संसार, होत = होना, चित्त = हृदय, चैन = शान्ति, सनमान = सम्मान, मनहिं = मन को, न भावै = अच्छा

नहीं लगता, टरत न टारे = अलग करने के बाद भी अलग नहीं होता, खटकत = परेशान होना, (किसी बात का हृदय में चुभना), माहिं = अन्दर।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद गिरधर कवि द्वारा लिखित "गिरधर की कुण्डलियाँ" काव्य संग्रह से अवतरित है, जो मनुष्य बिना चिन्तन के ही कार्य करने के लिए तत्पर होता है, वह बाद में प्रायश्चित करता रह जाता है, क्योंकि वह स्वयं ही अपने कार्य को बिगाड़ता है और संसार में हँसी का पात्र बनना पड़ता है, उसको हृदय में शान्ति का अनुभव नहीं होता, खाना-पीना, सम्मान, हर्ष, प्रसन्नता मन को अच्छी नहीं लगती। कवि गिरधर कहते हैं कि मन का दु:ख टालने पर भी नहीं टलता। अत: जो मनुष्य बिना विचारे कार्य करने की ओर अग्रसर होता है उसके हृदय में अनेकानेक परेशानियाँ उत्पन्न होती रहती हैं।

विशेष—भली प्रकार चिन्तन-मनन के उपरान्त कार्य की प्रेरणा का भाव है।

(6)

"रहिये लटपट..छाया में रहिए।"

कठिन शब्दार्थ–रहिए = रहना, काटि दिन = समय व्यतीत करना, बरु = और, घामे माँ = धूप में, छाँह = छाया, तरु = वृक्ष, पतरो होय = पतला होता है, दैहै = देता है, मोटे = शक्तिशाली, बयारि = हवा, जर = जड़, जैहै = जाती है, पाता = पत्ते, झरि जाय = झड़ या गिर जाते हैं, तऊ = उसी की।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद रीतिकालीन काव्य के अंतिम चरण में उद्गीत कविवर गिरधर द्वारा लिखित 'गिरधर की कुण्डलियाँ' काव्य संग्रह से अवतरित है। जीवन के कठोर समय को धूप में बैठकर व्यतीत कर दीजिए किन्तु उस छाया में मत बैठो जो पेड़ पतला हो अर्थात् पतले पेड़ की छाया में नहीं बैठना चाहिए, पतला पेड़ कभी भी धोखा दे सकता है, क्योंकि जिस दिन तेज हवा प्रवाहित होती है तब पतला वृक्ष जड़ से ही उखड़ जाता है, गिरधर कवि कहते हैं, शक्तिशाली मोटे पेड़ की छाया में बैठना ही उपयुक्त है, उसके पत्ते गिर जायें तब भी छाया बनी रहती है, इसी प्रकार सत्पात्र की छाया सुखदायक होती है।

विशेष—(1) प्रकृति और जीवन का समन्वय दृष्टव्य है।

(7)

"बीती ताहि..सो बीती।"

कठिन शब्दार्थ–बीती = बीता हुआ, ताहि = उसको, बिसारि = भुला दे, आगे = भविष्य, सुधि = स्मृति, ताही = उसी, चित = हृदय, दुर्जन = दुष्ट, खता = दु:ख, परतीती = प्रतीति (दिखना), समुझि = जानकर।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद रीतिकालीन काव्य के अंतिम चरण में नीति प्रधान सत्य की उद्भावना करने वाले महाकवि गिरधर कृत गिरधर की कुण्डलियाँ ग्रंथ से अवतरित है। जो कुछ बीत गया, वह अच्छा था या बुरा, इस बात को भुलाकर भविष्य के प्रति योजना बनाकर कर्म की कठोरता अपनाना आवश्यक है। जिस सत्य को सहज ही पाया जा सकता है उसी को स्थिर रखने में हृदय लगाना ही श्रेष्ठ है, प्रत्येक मनुष्य को उसी बात में हृदय लगाना चाहिए जिसमें सच्चाई की भावना हो, क्योंकि कोई शत्रु न हँसे, अपने दिल में वेदना की भावना न हो, कवि गिरधर कहते हैं कि मन में इसी भाव की प्रतीति बनी रहे। भविष्य का सुख देखकर बीते हुए कष्टों को भुलाना ही श्रेष्ठ है।

विशेष—(1) लोकास्थावादी स्वरूप का नीतिप्रधान सत्य व्यावहारिक रूप में है।

(8)

"साईं समय..चूकौ साईं।"

कठिन शब्दार्थ–समय न चूकिए = उचित समय नहीं छोड़ना चाहिए, यथाशक्ति सन्मान = शक्ति और श्रद्धा के अनुसार भाव, पौरि = घर, प्रमान = प्रमाण, आवै = आना, ताको = उसका, अंक = गोद।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद योजना शृंगार काल के इतिहास में उत्तरार्द्ध भाग के अन्तर्गत लोक आस्था और नीति प्रधान मूल्यों के प्रति सावचेत महान् कवि गिरधर द्वारा लिखित गिरधर की कुण्डलियाँ से अवतरित है। अपनी शक्ति के अनुसार समय का सही उपयोग करना ही मानव की श्रेष्ठता है, समय-असमय के सत्य को समय रहते जान लेना विवेक का परिचय है, मानव मन की पवित्रता के आधार पर अपने हृदय के द्वार को सत्य के लिए खोलकर स्वीकार कर लें, गिरधर कवि कहते हैं, सच्चाई को अपनाने से सब कुछ व्यवस्थित हो जाता है, शीतल जल, फल-फूल के समान समय की उपयुक्तता का लाभ आवश्यक रूप से उठाना ही मानव की श्रेष्ठता का परिचायक है।

विशेष—अभिधा शब्द-शक्ति में भावात्मक शैली की प्रधानता है।

(9)

"चिन्ता ज्वाल..व्यापै चिन्ता।"

कठिन शब्दार्थ–चिन्ता ज्वाल = चिन्ता की आग, बनि = बनना, दावा = दावाग्नि, संचरै = एकत्रित, उर = हृदय, धुंधुआय = धुंधला होना या परेशानी अनुभव करना, जरै = जलना, जरि जाय = जल जाना, हड्डिन = हड्डी, मिन्ता = मित्र, नर = मनुष्य, घट = शरीर, व्यापै = व्यापना।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत छंद योजना लोक आस्था के कवि गिरधर द्वारा लिखित गिरधर की कुण्डलियाँ नामक संग्रह से अवतरित है। चिन्ता की आग शरीर में दावाग्नि के समान लगती है अर्थात् जंगल में दावाग्नि लगने से सब कुछ नष्ट हो जाता है उसी प्रकार चिन्ता से शरीर नष्ट हो जाता है, इस आग का धुआँ प्रकट नहीं होता वह तो हृदय के अन्दर ही घुमड़ता रहता है, यह काँच की भट्टी के समान हृदय को जलाता है, जिसमें खून और माँस जलकर राख हो जाते हैं केवल हड्डियों का कंकाल ही शेष रह जाता है, कवि कहता है कि हे मित्रों, सुनो ! वह मनुष्य कैसे जी सकता है जिसके हृदय में चिन्ता का भार अविचल भाव लेकर लगातार बना रहता है।

विशेष—(1) चिन्ता को चिता के समान घातक बताया है।

(10)

"नैया मेरी..आवै नैया।"

कठिन शब्दार्थ–नैया = जीवन रूपी नाव, तनिकसी = थोड़ीसी, बोझी = वजनयुक्त, पाथर = पत्थर, चहुँ दिसि = चारों दिशाएँ, भौंरे = भँवर, उठत = उठती हैं, मँझधारहिं = मध्य में, उदंड = भयानक, तेहुँपर = उस पर, नाथ = स्वामी, खेवैया = चलाने वाले, घाट = किनारे, आवै = आना।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद गिरधर कविराय द्वारा लिखित गिरधर की कुण्डलियाँ ग्रंथ से अवतरित है, हे प्रभु मेरी जीवनरूपी नाव माया, मोह के पत्थरों से भारी

हो गई है, चारों दिशाओं में लोभ की भँवर उठ रही है, भक्त केवट इस नाव को चलाने वाला है, तब भी यह जीवन रूपी नाव मध्य में आकर उलझ गयी है, अज्ञान की भयानक आँधी चल रही है, ऊपर से मोह का जल बरस रहा है। कवि कहते हैं कि हे प्रभु, इस भक्त की जीवन रूपी नाव के आप ही चलाने वाले हैं, हे दयानिधान, कृपा करके इस जीवन रूपी नाव को मोक्ष तक पहुँचाने का श्रम करें, इस भक्त की भावना के सत्य की रक्षा हो जावेगी।

विशेष—भक्त और भगवान के मध्य अनुनय-विनय का भाव प्रधान है।

(11)

''भौंरा ये दिन...अरु भौंरा।''

कठिन शब्दार्थ–सहौ = सहन करना, बिरम = विश्राम, हर्ष = उल्लास या प्रसन्नता, बहै = प्रवाहित होना, बयार = हवा, बौरा = पागल, अरु = और, इक = एक।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद कवि गिरधर द्वारा लिखित गिरधर की कुण्डलियाँ संग्रह से अवतरित है, हे जीवन रूपी भौंरा संघर्ष के दिन कठिन हैं, दुःख-सुख समान रूप में स्वीकार करना ही श्रेष्ठ है, जब तक केतकी के फूल में काँटे विश्राम करते रहेंगे तब तक मन में उल्लास की उमंग जन्म नहीं ले सकती, जहाँ जैसा वातावरण रूपी हवा का प्रवाह हो वहाँ वैसा ही कार्य श्रेयस्कर होता है, कवि ने कहा है कि मानव का मन जिसमें एकाग्र हो जाता है वहाँ दुःख-सुख को सज्जन मनुष्य भौंरे के समान सहज ही स्वीकार करता है।

विशेष—मन की एकाग्रता और उमंग में ही आनंद की अनुभूति है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

प्रश्न 1. 'पाहुन निसि दिन चारि रहत संबही के दौलत'।
इस कथन से कवि ने क्या व्यंजित किया है ?

(क) दौलत की सुरक्षा करनी चाहिए।
(ख) दौलत अस्थायी होती है।
(ग) दौलत आती-जाती रहती है।
(घ) दौलत पर अभिमान अनुचित है।

उत्तर–(घ)।

प्रश्न 2. कुण्डलिया छंद के संबंध में निम्नलिखित में से कौनसा कथन असंगत है?

(क) इसमें दोहा और रोला का मेल होता है।
(ख) इसमें प्रारंभिक और अंतिम दोनों शब्द एक होते हैं।
(ग) यह मात्रिक अर्धसम छंद होता है।
(घ) इसके प्रत्येक चरण में 24-24 मात्राएँ होती हैं।

उत्तर–(क)।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. गिरधर की कुण्डलियों की लोकप्रियता का क्या कारण है ?

उत्तर—कवि ने जीवन में अपने आस-पास बिखरे हुए मूल्यों को संगठित करके सत्य प्रधान रूप का विवेचन किया है जो कि जीवन के निर्माण में महत्त्वपूर्ण है ।

प्रश्न 4. कुण्डलियों की रचना में गिरधर कविराय का मुख्य प्रयोजन क्या रहा है?

उत्तर—कवि का यह दृष्टिकोण रहा है कि समाज में संस्कृति, धर्म, मर्यादा और जीवन मूल्यों का निरन्तर पतन हो रहा था, इन्हीं मूल्यों को जीवन की प्रथम आवश्यकता के रूप में स्वीकार करते हुए लोक मान्यताओं के आधार पर संस्कृति और जीवन का व्यावहारिक अर्थ प्रस्तुत करना प्रमुख है ।

प्रश्न 5. गिरधर की कुण्डलियों में किस शब्द-शक्ति की प्रधानता है ?

उत्तर—कवि की रचना लोक जीवन के निकट होने के कारण अभिधा शब्द-शक्ति की प्रधानता में साधारण अर्थ से असाधारण अर्थ का संकेत करती है ।

प्रश्न 6. भौंरा, ये दिन कठिन हैं, दु:ख-सुख सहौ संरीर ।
जब लगि फूलै केतकी तब लगि बिरम करीर ॥
इस कुण्डलिया में कवि क्या कहना चाहता है ?

उत्तर—कवि यह कहना चाहता है कि जब तक शरीर है तब तक सुख के पीछे दु:ख काँटे की तरह आता रहेगा, अत: दु:ख का धैर्य और विश्वास के साथ कर्मशीलता से सामना किया जा सकता है ।

निबंधात्मक प्रश्न—

प्रश्न 7. गिरधर की कुण्डलियों की विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए ।

उत्तर—कवि गिरधर के समय में श्रृंगारकाल का पराभव होने लगा था, दूसरे यह भी था कि दरबारी संस्कृति का प्रभाव जन-साधारण तक पहुँच रहा था, जिसके कारण सामाजिक, धार्मिक और नैतिक मान्यताएँ कमजोर हो रही थीं । ऐसे संक्रांतिकाल के अंतिम चरण में कवि गिरधर का उदय हुआ, इन्होंने अपने काव्य में आरम्भ से अंत तक कुण्डलिया छंद को अपनाया, यह समय और काव्य की माँग भी थी, सामाजिक विकास की दृष्टि को सही आकार-प्रकार देने के लिए कवि ने अपने आस-पास का वातावरण, भाषा, काव्य का प्रमुख विषय हैं, लोक जीवन की छोटी-छोटी क्रियाओं और घटनाआं को लेकर नीति प्रधान संत्य को प्रस्तुत किया है—"दौलत पाय न कीजिए सपने में अभिमान ।
चंचल जल दिन चारि को ठाउँ न रहत निदान ।
ठाउँ न रहत निदान, जियत जग में जस लीजै,
मीठे बचन सुनाय विनय सब ही की कीजै ।"

आपसी संबंधों के लिए कवि ने बताया कि जब तक धन पास में है तब तक अनेकानेक मित्र बन जायेंगे, जब धन पास नहीं होता तो एक भी मित्र साथ नहीं देता, समाज में स्वार्थभावना से युक्त सम्बन्धों की तह में सत्य की अनुभूति कराई है—

"पैसा रहै न पास यार मुख से नहिं बोलै ।
कह गिरधर कविराय जगत यह लेखा भाई ।"

इन्होंने अवधी भाषा को प्रमुख भाषा के रूप में काव्य का विषय बनाया, किन्तु पंजाब प्रान्त में लम्बे समय तक निवास करने के कारण इनके काव्य में पंजाबी शब्दों का प्रचुर प्रयोग मिलता है, जिसके कारण काव्य का मार्मिक पक्ष प्रभावशाली हो गया है—

'बिना विचारे जो करै सो पाछे पछिताय,
काज बिगारै आपुनो जग में होत हँसाय ।'

कवि का मन जननी व जन्मभूमि के प्रति समर्पित रहा है इसीलिए साधारण भाव में असाधारण अनुभूति कराई है, लोक आस्था और लोकोक्ति व मुहावरों का प्रयोग होने से कविता का स्वर जन-साधारण के निकट पहुँच गया है, भक्ति भावना में रसमर्मज्ञता की आन्तरिक शक्ति का सहज रूप इस प्रकार है—

''कह गिरधर कविराय, नाथ जो तुम्हीं खेवैया ।
उठहि दया को दाँड, घाट पर आवै नैया ।''

इस प्रकार कविराय का काव्य संस्कृति और सभ्यता के फलक पर नैतिक और चरित्रगत मूल्यों की चेतना का काव्य है ।

प्रश्न 8. गिरधर की कुण्डलियों में उपदेशात्मकता प्रमुख होने पर भी वे जन-साधारण के मन को आकर्षित कैसे करती हैं ?

उत्तर–हिन्दी कविता की यात्रा में अनेकानेक परिवर्तन हुए हैं, रीतिकाल में शृंगार भावना अपने चरम बिन्दु पर पहुँच गई थी, तब जीवन के यथार्थवादी मूल्य कमजोर होने लगे थे, ऐसे संक्रान्ति के समय में गिरधर कविराय का उदय वरदान सिद्ध हुआ, इन्होंने 'गिरधर की कुण्डलियाँ' नामक काव्य ग्रंथ की रचना की, जीवन के आदर्शवादी सिद्धान्त को विशेष रूप से अपनाकर लोकमंगल की कामना से साधारण भाषा और भाव का सन्तुलन प्रस्तुत किया । काव्य भाषा के रूप में अवधी के साथ पंजाबी भाषा के शब्दों का प्रचुर प्रयोग मिलता है ।

सामान्यतया उपदेशात्मक आदर्श को अपनाकर जीवन की सच्चाई बोध ही जनसाधारण के निकट पहुँच जाता है, जैसे धन पाकर मनुष्य को अहंकार नहीं करना चाहिए, कवि इस सत्य को जनसाधारण के निकट इस प्रकार पहुँचाते हैं—

''दौलत पाय न कीजिए सपने में अभिमान ।
चंचल जल दिन चारि को ठाउँ न रहत निदान ।
ठाउँ न रहत निदान, जियत जग में जस लीजै,
मीठे वचन सुनाय विनय सब ही की लीजै ।''

जन-मन सरलता स्वीकार करता है, कार्य की एकता और पवित्रता को लेकर कवि उपदेश भावना का यथार्थपरक सत्य प्रस्तुत करता है—

''बिना विचारे जो करै सो पाछे पछिताय,
काज बिगारै आपुनो जग में होत हँसाय ।
जग में होत हँसाइ चित्त में चैन न पावै,
खान पान सनमान रागरंग मनहिं न भावै ।''

हिन्दी के प्रसिद्ध इतिहासकार और आलोचक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ठीक ही लिखा है—'वस्तुत: साधारण हिन्दीभाषी जनता के सलाहकार प्रधानतया तीन ही रहे—तुलसीदास, गिरधर और घाघ ।'' कवि का मत है कि जो बीत गया उसको याद करके वर्तमान को नहीं बिगाड़ना चाहिए, भविष्य के लिए जागरूक होकर काम करने की शक्ति जन-चेतना के निकट है—

"बीती ताहि बिसारि दे, आगे की सुधि लेइ,
जो बनि आवै सहज में, ताही में चित देइ।
× × × × ×
कह गिरधर कविराय, यहै करु मन परतीती।
आगे को सुख समुझि, होइ बीती सो बीती।"

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि गिरधर के काव्य में उपदेशात्मकता प्रमुख होने के बाद भी जन-साधारण के मन को भाषा और भाव की सरलता से लगातार आकर्षित करते हैं।

अध्याय 15

भूषण

कवि परिचय—हिन्दी साहित्य के इतिहास में प्रत्येक युग का काव्य अपनी तत्कालीन परिस्थिति का ब्यौरा प्रस्तुत करता है, राजनीतिक घटनाक्रम के आधार पर रीतिकाल या शृंगार काल का उदय और विकास दो भागों में है, आचार्य प्रम्परा और शृंगार रस की प्रधानता, किन्तु इस युग के काव्य में अकेले भूषण ने ओजस्वी वाणी में वीर रस की धारा प्रवाहित की है, अनुमानत: भूषण का जन्म 1614 ई. और निधन 1740 ई. में हुआ था, आलोचक यह स्वीकार करते हैं कि भूषण, चिन्तामणि और मतिराम भाई थे। उत्तरप्रदेश के तिक्वांपुर गाँव के रहने वाले थे। भूषण को अनेक आश्रयदाताओं का आश्रय मिला था, जिनमें रुद्रदेव सोलंकी, जयसिंह, छत्रसाल और छत्रपृति शिवाजी उल्लेख्य हैं। मान्यताओं के आधार पर पता चलता है कि चित्रकूट नरेश रुद्रदेव सोलंकी प्रथम आश्रयदाता थे, जिन्होंने इनकी ओजस्वी कविता पर प्रसन्न होकर भूषण की उपाधि से विभूषित किया था, भूषण का मन छत्रपति शिवाजी से बेहद प्रभावित और प्रसन्न था।

महाकवि भूषण द्वारा लिखित ग्रंथों में शिवराज विजय, छत्रसाल दशक विशेष महत्त्वपूर्ण हैं। भूषण उल्लास, दूषण उल्लास, और भूषण हजारा कृतियाँ भी इन्हीं के द्वारा लिखी मानी जाती हैं, किन्तु शिवराज भूषण को ही प्रामाणिक रूप में स्वीकार करते हैं। इन्होंने रीतिकाल की परम्पराओं का निर्वाह करते हुए अलंकारों के प्रयोग में वीर रस को प्रमुख रूप में अपनाया है। रीतिकाल में शृंगार को प्रमुख रस के रूप में स्वीकारा गया, भूषण ने इस परम्परा को तोड़कर वीर रस के प्रयोग से वीरगाथा काल की पुनरावृत्ति कर दिखाई है, महाकवि ने अपनी रचनाओं में मुक्तक शैली का प्रयोग किया है, आश्रयदाता राजा के जीवन दर्शन की श्रेष्ट झाँकियाँ प्रस्तुत करके साहित्य की श्रीवृद्धि की है। युद्धवीर, दयावीर, धर्मवीर और दानवीर का मौलिक और स्वतंत्र वर्णन किया है। कहीं-कहीं रौद्र और भयानक रस को अपनाकर वीर रस की महत्ता बढ़ाई है।

महाकवि भूषण का हृदय संस्कृति और सभ्यता की रक्षा करते हुए राष्ट्रीय एकता और अखण्डता के लिए गौरव का प्रतीक है। विदेशियों के शासन काल में देशी राजा के शौर्य का स्वतन्त्र भाव के साथ वर्णन करना भारतीयता की पहचान है। रीतिकाल में परम्परागत भाषा का प्रयोग किया, अत: ब्रजभाषा का सार्थक प्रयोग मिलता है, आचार्य

रामचन्द्र शुक्ल जैसे महान् आलोचक ने भूषण को राष्ट्रीय कवि के रूप में स्वीकार करते हुए लिखा है—"भूषण अन्याय के दमन में तत्पर, हिन्दू धर्म के संरक्षक शिवाजी और छत्रसाल की कीर्ति के गायक हैं इसी से भूषण के वीर रस के उद्गार सभी जनता के हृदय की सम्पत्ति हो गये हैं, भूषण हिन्दू जाति के प्रतिनिधि कवि थे।"

इस प्रकार भूषण ने विलासितापूर्ण युग में वीरता का शंखनाद फूँककर स्वदेशानुराग, सांस्कृतिक प्रेम, धार्मिक भावना, साहित्य, भाषा और समाज प्रेम का अनूठा सत्य प्रतिपादित किया, जिसमें अनुराग की तीव्र भावना झलकती है।

व्याख्या भाग

गणेश वन्दना

"बिकट अपार..द्विरदमुख गाइए।"

कठिन शब्दार्थ—बिकट = भयानक। अपार = जिसका किनारा न हो, भव = संसार, पंथ = मार्ग, हरन = हरण, करन = करना, बिजना = हृदय, ध्याइए = स्मरण कीजिए, सुफल करन = सफल करने के लिए, कोकनद = चकोर, आनि कै जुड़ाइए = आकर ध्यान दीजिए, अलिकुल = भौंरों का समूह, ललित = सुन्दर, आनन्द रूप सरित = आनन्द रूपी नदी, अन्हाइए = स्नान कीजिए, पापतरु = पाप का वृक्ष, भंजन = काटने वाले, विघन = बाधा, जगत = संसार, मनरंजन = मन को प्रसन्न करने वाले, द्विरदमुख = गणेश।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत कविता रीतिकालीन काव्य की शृंगारपरक परम्परा को छोड़कर वीर रस को अपनाने में कुशल महाकवि भूषण कृत गणेश वंदना से अवतरित है। संसाररूपी पथ पर माया के कारण अत्यधिक थकान हो जाती है, वहीं श्रीगणेशजी का हृदय की पवित्रता से स्मरण करने पर भयानक कष्ट सहज ही दूर हो जाते हैं, इस लोक और परलोक की सफलता के लिए चकोर हृदय से प्रभु चरणों को पकड़ा है तब आकर उसका उद्धार कीजिए, भौंरों का समूह सौन्दर्यपान करते हैं तो वह आनन्द रूपी नदी में नहा लेते हैं इस प्रकार पाप रूपी वृक्ष के भयानक दुर्ग को नष्ट करने के लिए, संसार के समस्त प्राणियों को आनन्दानुभव कराने के लिए मिलकर दो मुख वाले श्रीगणेशजी के गुणों का स्मरण कीजिए।

विशेष—प्रभु स्तुति में शान्त रस की व्यापकता है।

शिवाजी का प्रताप

(2)

"तो सम हो सेस..चित चुनिए।"

कठिन शब्दार्थ—तो सम = तेरे समान, सेस सो = शेषनाग, बसत = निवास करना, ऐरावत गज = ऐरावत हाथी, इन्द्रलोक = स्वर्ग, दुरे = छिप गये थे, मानसर = मानसरोवर, ताहि = उसमें, सुधा सुरवर = चन्द्रमा , दुनियै = संसार को, सूर = सूर्य, रावरे = आपके, सुजस = श्रेष्ठ यश, सम = समान, गुनियै = जानना, जहाँ लों = जहाँ तक, गनों = गिनना, तहाँ लों - वहाँ तक, भटकि हार्‌यो = घूम-घूमकर थक गया, लखिए = देखिए, कछू = कुछ, केती = कितनी ही, चित्त = हृदय।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छन्द रीतिकालीन कवि भूषण द्वारा लिखित शिवाजी प्रताप से अवतरित है। सभी प्रसिद्ध उपमान शिवाजी के सामने अपना स्थान नहीं बना पाते। तब कवि ने कहा है—हे शिवाजी ! तेरी समानता करने वाला शेषनाग था, वह भय के कारण पाताल लोक में निवास करता है, सफेद रंग वाला ऐरावत हाथी भी स्वर्ग लोक में

गया हुआ सुना जाता है, दूसरे समानता करने वाले राजहंस थे, वे कैलाश पर्वत पर मानसरोवर झील में जाकर छिप गये, अमृत के समान पावन श्रेष्ठ देव चन्द्रमा तो इस संसार को ही छोड़कर चला गया, इसलिए हे शूरवीर! दानियों के दानी महाराज शिवाजी, आपके यश के समान किसी को नहीं गिना जा सकता, महाकवि भूषण की मान्यता है कि संसार भर में घूम-घूमकर थक गया पर वे सभी उपमान आपकी समानता नहीं कर पाते हैं।

विशेष—(1) शिवाजी का यश संसार में श्रेष्ठ है, उसकी कोई भी समानता नहीं की जा सकती।

(2) उपमा अलंकार कर सौन्दर्य अलौकिक है।

(3)

''कुन्द कहा पय..सिवराज के आगे।''

कठिन शब्दार्थ—कुन्द = कमल, पय = दूध, वृन्द = समूह, अरु = और, चंद = चंद्रमा, जस = यश, भानु = सूर्य, कृसानु = कमंजोर, कहाब = कहना, महीतल = पृथ्वीतल, द्विजराम = परशुराम, रन = युद्ध, अनुरागे = प्रेम, मृगराज = शेर।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद रीतिकाल में वीर रस के एक मात्र कवि भूषण द्वारा लिखित शिवाजी का प्रताप से अवतरित है, कवि शिवाजी की वीरता और पराक्रम को श्रेष्ठ बताते हुए कहते हैं—शिवाजी के पवित्र यश के सामने कमल, दुग्ध और चन्द्रमा का यश केन्द्रित नहीं रह पाता, क्योंकि शिवाजी का यश इन प्रसिद्ध उपमानों से अधिक श्रेष्ठ है, पृथ्वीतल पर शिवाजी के प्रताप के तेज के सामने सूर्य और अग्नि का तेज स्थिर नहीं रह पाता, अनेकानेक युद्ध प्रेम के सामने—राम परशुराम और बलराम का युद्ध कौशल और विद्या की समानता नहीं कर पाते, वीर शिवाजी साहस में शेर और बाघ से भी आगे हैं, इस प्रकार शिवाजी यश, तेज, विद्या, बुद्धि की कुशलता एवं उत्साह में सबसे अलग महत्त्व रखते हैं, उनके चरित्र प्रधान गुणों के सामने कोई भी उपमान इतना समर्थ नहीं कि शिवाजी के सामने ठहर सके।

विशेष—(1) महा कवि ने शिवाजी के पराक्रम की महानता का उपयुक्त वर्णन किया है।

(2) अनुप्रास, उपमा और अतिशयोक्ति अलंकार के साथ वैदर्भी रीति की प्रधानता है।

(4)

''तेरो तेज सरजा..तेरे कर सो।''

कठिन शब्दार्थ—तेरो = तेरा, सरजा = शिवाजी, समत्थ = समर्थ, दिनकर = सूर्य, सौहे = सुन्दर, निकर = प्रताप, जस = यश, हिमकर = चन्द्रमा, अकर = पराक्रम, भनत = कहना, हियो = हृदय, रतनाकर = समुद्र, सुरतरु = देव वृक्ष या कल्पवृक्ष, कर = हाथ या दान।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद योजना हिन्दी काव्य जगत में रीतिकाल के अन्तर्गत रीति मुक्त काव्य परम्परा में वीर रस के श्रेष्ठ कवि भूषण द्वारा लिखित शिवाजी का प्रताप से अवतरित है, कवि शिवाजी वीरता और तेज के बारे में कहते हैं कि, समर्थ शिवाजी, तेरे तेज से सूर्य सुशोभित होता है, क्योंकि सूर्य तेरे प्रताप का ही परिणाम है, हे शिवाजी, तेरे यश से चन्द्रमा शीतलता लेकर सुशोभित है क्योंकि चन्द्रमा की शीतलता तेरे यश के प्रताप के

परिणामस्वरूप ही है, कवि भूषण कहते हैं कि तेरा हृदय सागर के समान है, रत्नाकर या सागर तेरे हृदय की पवित्रता और सहृदयता के कारण ही सुखदायक है, साहि के सपूत शिवाजी तेरे दान से देवताओं का दानी वृक्ष कल्पतरु सुशोभित है अतः कल्पवृक्ष तेरे दान के कारण फल-फूल रहा है ।

विशेष—(1) कवि द्वारा शिवाजी का यश अतिशयोक्तिपूर्ण रूप में प्रस्तुत किया गया है ।

(2) अनुप्रास अलंकार, व्याख्यात्मक शैली और लक्षण-लक्षणा शक्ति का समन्वय है ।

(5)

"भौंसिला भूप..छबि छीनो ।"

कठिन शब्दार्थ—भूप = राजा, बली = राजा बलि, भुव = संसार, भुजंगम सों भुज = साँप के समान शक्तिशाली बाँहें, लीनो = प्राप्त किया, तीखन = तीक्ष्ण, तरन्नि = सूर्य की, बैरिन को = दुश्मनों को, पानिप हीनो = शूरवीरता से विहीन या नष्ट कर दिया, दारिद दौ = वन की आग, वारिद = बादल, दल = समूह, धरनी तल = पृथ्वीतल पर, कीनो = किया, कुल = परिवार, जस = यश, चन्दसों = चन्द्रमा के समान, छवि = सौन्दर्य ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद योजना रीतिकालीन कवि भूषण द्वारा लिखित 'शिवाजी का प्रताप' से अवतरित है, महाराज शिवाजी इस धरती के विशाल भू-भाग पर उदार राजा बलि के समान हैं, जिन्होंने अपनी सर्प के समान शक्तिशाली भुजाओं से उसे संरक्षण और सुरक्षा प्रदान की है । वीरों में श्रेष्ठ शिवाजी का तेज सूर्य की तीखी किरणों के समान है, जिसने शत्रु, मुगलों की शूरवीरता रूपी जल सुखा दिया, धरती के गरीब लोगों की गरीबी रूपी दावाग्नि को दान का बादल बनकर शान्त कर दिया, सम्पूर्ण पृथ्वी पर शान्ति का साम्राज्य स्थापित कर दिया । अतः वीर शिवाजी, आपके यश रूपी चाँद ने आकाश के चन्द्रमा की छवि को अपने तेज के सामने फीकी कर दिया ।

विशेष—(1) शिवाजी की दानवीरता का सत्य तीनों लोकों में महान् बताया है ।

(2) यमक अलंकार के साथ लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति का सार्थक प्रयोग है ।

(6)

"साहि तनै सरजा..धरति है ।"

कठिन शब्दार्थ—तनै = तुझको, मधि = शोध, मेरुवारी = सुमेरु पर्वत, सुर = देवता, निदरति = निरादर, भनत = कहना, जाके = जिसके, सिखर = चोटी, केते = कितने ही, नदी-नद = नदी-नाले, रेल = समूह, जोन्ह = चाँदनी, जोति = प्रकाश, कंदरन = कन्दरा, छवि = सौन्दर्य, उछरति = उछलती है, दुरग = दुर्ग, महाबली = शक्तिशाली, जामैं = जिसमें, धरति = रखती है ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद रीतिकालीन कविता के इतिहास में वीर रस के महान् कवि भूषण द्वारा लिखित शिवाजी का प्रताप से अवतरित है । कवि भूषण कहते हैं—छत्रपति शिवाजी की सभा सुमेरु पर्वत देवताओं की सभा का निरादर करती है अर्थात् श्रेष्ठ है, भूषण कहते हैं कि जिसके एक शिखर से कितने ही नदी-नालों का समूह निकलता है, चाँदनी में हँसती हुई ज्योति, हीरा और मणियों के समान मंदिर और कंदराओं में देदीप्यमान होती है, महाबली का ऐसा ऊँचा दुर्ग है, जिसमें दीपमालिका सी जगमगाहट बनी रहती है ।

विशेष—(1) छत्रपति शिवाजी की वीरता और पराक्रम के साथ प्रकृति सौन्दर्य का समन्वय किया है ।

(2) अनुप्रास अलंकार और वैदर्भी रीति का प्रयोग मिलता है ।

(7)

"शंकर की किरपा..जहान भलाई ।"

कठिन शब्दार्थ—किरपा = कृपा या आशीर्वाद, सरजा पर = शिवाजी पर, ता किरपा = उस कृपा से, सुबुद्धि = श्रेष्ठ बुद्धि, भुव = संसार, भौंसिला = मुगलों पर, साहि तनै की सवाई = शिवाजी का बल सवाया है, सों = से, अरु = और, पुन्य = पुण्य, सदाई = हमेशा, जहान = संसार ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत कविता हिन्दी काव्य जगत में रीतिकालीन के अन्तर्गत रीतिमुक्त काव्यधारा के कवियों में वीर रस के एकमात्र कवि भूषण द्वारा लिखित शिवाजी का प्रताप से अवतरित है, कवि ने कहा है—शंकर की कृपा से कवि ने छत्रपति शिवाजी के शौर्य का वर्णन किया, उसी की कृपा से संसार में श्रेष्ठ ज्ञान का विकास हुआ, उसी से शिवाजी, मुगलों की सेना पर सवाया (शक्तिशाली) पड़ा । राजकार्य श्रेष्ठ बुद्धि से दान की भावना बढ़ी और दान से पुण्य का प्रभाव लगातार बढ़ा है, इसी पुण्य से शिवाजी का प्रताप फैला है, वीरता और दानवीरता से संसार में भलाई करने की भावना का विकास हुआ है ।

विशेष—(1) शंकर की कृपा से परिणामस्वरूप शिवाजी की वीरता और दानवीरता का परिचय दिया है ।

(2) अनुप्रास और उपमा अलंकार का प्रयोग नाद सौन्दर्य से जुड़ा है ।

छत्रसाल प्रशंसा

(8)

"भुज भुजगेस..खलन के ।"

कठिन शब्दार्थ—भुज = भुजाएँ, भुजगेस = भुजा का स्वामी शिवाजी, संगिनी = साथी, भुजंगिनी = सर्पिणी, सी = समान, खेदि-खेदि = चुन-चुनकर, दीह = दीर्घ, दारुन = कठोर या भयंकर, दलन = शत्रुओं का समूह, बखतर = कवच, पाखरिन = घोड़ों की धूल से, धँसि = प्रवेश या घुसना, जाति = जाती है, पैरि = तैरकर, पार जात = किनारे पहुँचना, परवाह = प्रवाह, ज्यों = जिस प्रकार, बलन = शक्ति, बरछी = तलवार, बर = श्रेष्ठता, छीने = प्राप्त करना, खलन = दुष्ट या शत्रु ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत कविता रीतिकालीन काव्य में रीतिमुक्त काव्यधारा के अन्तर्गत वीर रस के श्रेष्ठ कवि भूषण कृत छत्रसाल प्रशंसा से अवतरित है, रैयाराय चंपति राय के सुपुत्र महाराज छत्रसाल तुम्हारी बरछी तो भुजा रूपी सर्पराज की संगिनी सर्पिणी के समान भयानक है, यह बरछी चुन-चुनकर भयानक शत्रुओं का संहार करती है, वह बरछी कवच और लोहे की बनी पाखरियों में इस प्रकार प्रवेश कर जाती है जैसे मछली, भयानक जल को चीरकर किनारे या पार पहुँच जाती है, कवि कहते हैं—महाराज छत्रसाल ! तुम्हारे शौर्य और वीरता का वर्णन कौन कर सकता है अर्थात् कोई नहीं कर सकता, तुम्हारी बरछी ने मुगल शत्रु की शक्ति को इस प्रकार कमजोर बना दिया है कि उनकी सेनाओं के वीर-महावीर पंख कटे पक्षी की तरह शस्त्रहीन होकर धरती पर पड़े हुए हैं ।

विशेष—(1) कवि का मन छत्रसाल की वीरता और पराक्रम का वर्णन करने में उपमा, रूपक और अनुप्रास अलंकारों का सार्थक प्रयोग करते हैं ।

(9)

"रैया राव चंपति...की धमकैं ।"

कठिन शब्दार्थ—भूपन भनत = भूषण कहता है, समसेर = तलवार की भयानकता शमशीर, जोम = व्योम या आकाश, जमकै = चमकती है, भादों की घटासी = भादों मास की घटा के समान, गरदै = गर्द, गगन = आकाश, सेलैं = उमड़ती है, दामिन सी = बिजली के समान, दमकै = चमकती है, उर = हृदय, लागै = लगती है, घन = बादल, बैहर = श्रेष्ठ, बगारन = भय से युक्त, अरि = शत्रु, अगारन की = अंगड़ाई लेने की, नांघती = लांघती या पार करती, धमकै = ध्वनि ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत छंद रीतिकालीन काव्य में वीर रस के श्रेष्ठ कवि भूषण द्वारा लिखित छत्रसाल प्रशंसा से अवतरित है । राजाओं में श्रेष्ठ राजा छत्रसाल सिंह जब अपने शत्रुओं पर आक्रमण करते थे, तो ऐसा लगता था मानो आकाश में तीर चमक रहे हों, महाराज की सेना भादों माह की काली घटाओं के समान आकाश को घेरकर गर्जना करती सी लगती थी । जब वह सेना भाले और तीर छोड़ती थी तब उस काली घटा में ऐसा प्रतीत होता था जैसे बिजली कौंध रही हो, मुगल अमीर-उमराह, पठान-खान आदि सभी लंका नरेश रावण के समान अत्याचारी थे, उनके हृदय में छत्रसाल की सेना की गर्जना हथौड़े की चोट से उत्पन्न ध्वनि के समान लगती थी । छत्रसाल के नगारों की धमक, शत्रुओं के समय डरकाने और अंगड़ाई लेने को उनकी पदचाप दबाकर ध्वनित होती थी और लांघ जाती थी अर्थात् छत्रसाल के नगाड़ों की आवाज सुनकर मुगल सेना सुन्दर-सुन्दर डकारें मारती थी, अंगड़ाई लेती थी, अब डरकर भागती नजर आती है ।

विशेष—(1) छत्रसाल की स्वाभाविकता और शत्रु की हीनता का वर्णन किया है ।

(2) अनुप्रास का मार्मिक प्रयोग है ।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

प्रश्न 1. 'भौंसिला भुवाल! तेरो जस हिमकर सौहै,
<u>हिमकर सौहे तेरे जस के अकर सो ।'</u>

रेखांकित पंक्ति में कौन-सा अलंकार है ?

उत्तर–(ग) प्रतीप ।

प्रश्न 2. 'बाज कहा मृगराज कहा अति साहस में सिवराज के आगे ?'
कथन में कौनसा अलंकार है ?

उत्तर–(क) अतिशयोक्ति ।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. 'भादौं की घटाय सी उठी गरदै गगन घेर,
सेलै समसेर फिरै दामिनी सी दमकै ।'

पंक्तियों में विद्यमान काव्य गुण का नाम और लक्षण लिखिए ।

उत्तर–किसी काव्य या ग्रंथ में उत्साह भाव की प्रधानता होने के कारण ओज गुण की प्रधानता है।

प्रश्न 4. भूषण के काव्य रस का स्थायी भाव कौनसा है ?

उत्तर–महाकवि भूषण के काव्य में वीर रस की प्रधानता होने के कारण उत्साह स्थायी भाव प्रमुख है।

प्रश्न 5. भूषण ने किन-किन वीरों की प्रशंसा में काव्य रचना की ?

उत्तर–भूषण ने छत्रपति शिवाजी और छत्रसाल सिंह जैसे वीरों की प्रशंसा में काव्य रचनाएँ की हैं, जिनमें प्रकृति के समस्त प्रसिद्ध प्रतीकों से अधिक श्रेष्ठ शिवाजी और छत्रसाल को माना है।

प्रश्न 6. भूषण के कविकर्म की सफलता का कारण क्या है ?

उत्तर–भूषण ने रीतिकाल की परम्परागत शैली और रस से अलग वीर रस में पहचान बनाने का सफल प्रयास किया, अनुप्रास अलंकार के प्रयोग से शिवाजी और छत्रसाल के जीवन की वीरतापूर्ण शैली-पद्धति का श्रेष्ठ चित्रण किया है, इस प्रकार भूषण का कविकर्म राष्ट्रीय एकता और अखण्डता का परिचायक है।

प्रश्न 7. भूषण रीतिकाल के कवियों में किन कारणों से सबसे अलग दिखाई पड़ते हैं ?

उत्तर–भूषण ने रीतिकाल में प्रयुक्त श्रृंगार रस को अपने काव्य का विषय नहीं बनाया क्योंकि तत्कालीन परिस्थितियों में राष्ट्रीयता की अधिक आवश्यकता थी, इसलिये भूषण ने दरबारी संस्कृति के आश्रय को स्वीकार करते हुए छत्रपति शिवाजी और छत्रसाल सिंह की वीरता, पराक्रम और शौर्य का वर्णन किया है, अतः भूषण का काव्य रीतिकालीन कवियों में सबसे अलग है।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. भूषण के काव्य की समालोचना निम्नांकित के आधार पर कीजिए—

(i) काव्य-विषय

(ii) काव्य-गुण

(iii) भाषा

(iv) राष्ट्रीयता।

उत्तर–(i) **काव्य-विषय**–भूषण के काव्य का विषय राष्ट्रीय भावना पर आधारित है, इनके काव्य के चरित्र नायक शिवाजी हैं, शिवाजी के शौर्य, पराक्रम, साहस, निर्भीकता और उदारता का श्रेष्ठ वर्णन किया है, मुगल बादशाहों के आतंकित होने से लेकर उनकी बेगमों के मन में व्याप्त आतंक का वर्णन मार्मिक है—

"ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहनवारी,
ऊँचे घोर मंदर के अन्दर रहाती हैं,
कंद मूल भोग करें, कंद मूल भोग करें,
तीन बेर खातीं ते वै तीन बेर खाती हैं।"

शिवाजी की वीरता का मनोहारी चित्र उत्तम है—

"तेजमय अंस पर, कान्ह जिमि कंस पर,
त्यौं म्लेच्छ-बंस पर सेर शिवराज हैं।"

महाकवि भूषणं ने शिवाजी की दानवीरता को भारतीयता के स्तर पर स्वीकारा है—

"साहि तनै सरजा तव द्वार प्रतिच्छन दान की दुन्दुभि बाजै ।
भूषण भिच्छुक भीरन को अति भोजहु ते बढ़ि भौजानि साजै ।"

शिवाजी का प्रताप चारों दिशाओं में फैला हुआ है—

"पूरब पछांह देस दच्छिन ते उत्तर लौं
जहाँ चातसाही तहाँ दावा सिवराज को ।"

इस प्रकार भूषण के काव्य का विषय देशभक्ति का जीता-जागता सत्य है ।

(ii) काव्य-गुण–महाकवि भूषण की कविता में आरम्भ से अंत तक ओज गुण की प्रधानता है, यूँ तो रीतिकाल में विलासिता को प्रमुख माना जाता था, मुगलों के कारण भारतीयता की पहचान खतरे में आ गई थी, ऐसे संक्रान्तिकाल में भूषण की कविता राष्ट्रीय एकता, सांस्कृतिक भावना और धार्मिक भावना की दृष्टि से श्रेष्ठ है, काव्य में शिवाजी के द्वारा, साहस, वीरता, दानवीरता, युद्धकौशल, हिन्दुता आदि का वर्णन ओज गुण प्रधान है । सरजा शिवाजी का भारतीय प्रेम उत्तम है—

"हिन्दुन की चोटी राखी, रोटी राखी है सिपाहिन की,
देव राख्यो देवल स्वधर्म राख्यो घर में ।"

शिवाजी का प्रताप, माधुर्य एवं ओज गुण प्रधान है—

"तोसम हो सेस सोतो बसत पाताल लोक
ऐरावत गज सो तो इन्द्रलोक सुनिए ।
दुरे हँस मानसर ताहि में कैलाश धर,
सुधा सुरवर सोऊ छोड़ि गयो दुनियै ।
× × × ×
भूषण जहाँ लौ गनौ तहाँ लौं भटकि हार्‌यो,
लखिये कहू न केती बातै चित्त चुनियै ।"

काव्य और जीवन की एकरूपता में काव्य धारा ओज गुण सम्पन्न है ।

(iii) भाषा–भूषण का जीवन और काव्य-दर्शन सर्व देववाद को स्वीकार करता है, वैसे तो रीतिकाल में विलासिता की नदी प्रवाहित हो रही थी । सभी कवि ब्रजभाषा को काव्य भाषा के रूप में स्वीकार कर चुके थे, महाकवि भूषण ने भी ब्रजभाषा को अपनाया किन्तु विषय-वस्तु का चुनाव परम्परा से अलग हटकर वीर रस के साथ शिवाज़ी के शौर्य का वर्णन करने के लिये अपनाया, लोक जीवन की निकटता का काव्य पर गहरा प्रभाव है, भाषा की सरलता में सरसता का सौन्दर्य दृष्टव्य है—

"तेरो तेज, सरजा समत्थ! दिनकर सो है,
दिनकर सोहै तेरे तेज के निकट सो ।
भौंसिला भुवाल ! तेरो जस हिमकर सोहै,
हिमकर सोहै तेरे जस के अकर सो ।"

अलंकार और छंद योजना की सार्थकता में भूषण का काव्य विषय जनसाधारण के निकट राष्ट्रीयता की दुन्दुभि बजाता है—

"कामिनिकंत सौंजामिनि चन्द सौ,
दामिनी पावस मेघ घटा सौ,
कीरति दान सों, सूरति ज्ञान सों,
प्रीति बड़ी सनमान यहा सौ।"

(iv) राष्ट्रीयता–राष्ट्रीयता की भावना से लिखा गया भूषण का काव्य समाज, भाषा और साहित्य प्रेम का प्रतीक है, साम्प्रदायिकता और संकीर्ण राष्ट्रीयता से दूर विशुद्ध समन्वभवाद और देशप्रेम का सौन्दर्य मिलता है, राष्ट्रीय उत्थान, धर्मरक्षा, अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध चुनौती का शाश्वत स्वर लेकर काव्य में अंकित किया गया है, क्योंकि भूषण के सामने राष्ट्रोत्थान सबसे बड़ी चुनौती के रूप में था, विलासी और आलसी, कर्महीन समय में देशानुराग की भावना जगाई। राष्ट्रीय जागरण उत्पन्न करने के लिये शिवाजी और छत्रसाल सिंह के जीवन-दर्शन को जन-साधारण के सामने रखा, तत्कालीन विलासिता के महानद में भूषण अकेले कवि हैं, जिन्होंने स्वदेशानुराग के अलावा किसी प्रवृत्ति को जीवन और काव्य में स्वीकार नहीं किया, अत: भूषण राष्ट्रकवि के रूप में हमेशा स्वीकारे जायेंगे।

प्रश्न 9. निम्नलिखित अवतरण की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

"भुज भुजगेस..खलन के।"

कठिन शब्दार्थ–भुज = भुजाएँ, भुजगेस = भुजा का स्वामी, शिवाजी, संगिनी = साथी, भुजंगिनी = सर्पिणी, खेदि-खेदि = चुन-चुनकर, दीह = दीर्घ, दारुन = कठोर या भयंकर, दलन = शत्रुओं का समूह, बखतर = कवच, पाखरिन = घोड़ों की धूल से, धंसि = प्रवेश या घुसना, जाति = जाती हैं, पैरि = तैरकर, पार जात = किनारे पहुँचना, परवाह = प्रवाह, ज्यों = जिस प्रकार, बलन = शक्ति, बरछी = तलवार, वर = श्रेष्ठता, छीने = प्राप्त करना, खलन = दुष्ट या शत्रु।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिकालीन काव्य में रीतिमुक्त काव्यधारा के अन्तर्गत वीर रस के श्रेष्ठ कवि भूषणकृत छत्रसाल प्रशंसा से अवतरित है। रैवाराव चंपतिराव के सुपुत्र महाराज छत्रसाल तुम्हारी बरछी तो भुजारूपी सर्पराज की संगिनी सर्पिणी के समान भयानक है, यह बरछी चुन-चुनकर भयानक शत्रुओं का संहार करती है, यह बरछी कवच और लोहे की बनी पाखरियों में इस प्रकार प्रवेशकर जाती है जैसे मछली भयानक जल को चीरकर किनारे या पार पहुँच जाती है, कवि कहते हैं—महाराज छत्रसाल! तुम्हारे शौर्य और वीरता का वर्णन कौन कर सकता है अर्थात् कोई नहीं कर सकता, तुम्हारी बरछी ने मुगल शत्रु की शक्ति को इस प्रकार कमजोर बना दिया है कि उनकी सेनाओं के वीर-महावीर पंख कटे पक्षी की तरह शस्त्रहीन होकर धरती पर पड़े हुए हैं।

विशेष–कवि का मन छत्रसाल की वीरता और पराक्रम का वर्णन करने में उपमा, रूपक और अनुप्रास अलंकारों का सार्थक प्रयोग करता है।

अध्याय 16
सेनापति

कवि परिचय—हिन्दी काव्य का प्रत्येक युग अपनी मौलिक पहचान रखता है, भक्ति आन्दोलन के उपरान्त देश में विलासिता की लहर जोरों से चलने लगी, दरबारी संस्कृति, आश्रयदाता कवियों का प्रभाव बढ़ने लगा, ऐसा प्रतीत होता था समूचा सांस्कृतिक वातावरण श्रृंगार में डूब गया है, भक्ति और रीति की संयुक्त शैली के मोड़ पर सेनापति का काव्य अपनी अलग पहचान रखता है, इनके जन्म और समय के सम्बन्ध में आलोचक एकमत नहीं हैं, अत: यह विषय विवादास्पद बना हुआ है, अनुमानत: सेनापति का जन्म बुलन्द शहर जिले के अनूप शहर कस्बे में हुआ था, इनके पितामह का नाम परशुराम दीक्षित और पिता का नाम गंगाधर दीक्षित था, इनके गुरु विद्यामणि (हीरामणि) दीक्षित थे। जन्म समय लगभग 1585 रहा होगा। सेनापति संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे, इनके वास्तविक नाम के सम्बन्ध में ठोस प्रमाण प्राप्त नहीं है, सेनापति मूल नाम था या उपनाम, इस सम्बन्ध में स्पष्टतया कुछ नहीं कहा जा सकता।

सेनापति की काव्य सम्बन्धी कृति के रूप में केवल 'कवित्त रत्नाकर' ही प्राप्त होती है, इनके काव्य में पाँच तरंग हैं—श्लेष अलंकार, श्रृंगार रस, षड्ऋतु वर्णन, रामायण और रामरसायन। रचनाओं में छंद कौशल रीतिकाल से ही अपनाया है, श्लेष अलंकार से विशेष प्रेम है, आचार्य कवि केशव के अतिरिक्त अन्य कोई कवि समानता नहीं कर सकता, श्रृंगार वर्णन की दृष्टि से देखने पर पता चलता है—नख-शिख वर्णन, आलम्बन, उद्दीपन और वय: संधि का मनोहारी वर्णन मिलता है, ऋतु वर्णन के प्रति कवि की सूक्ष्म दृष्टि लगातार कार्य करती है, संस्कृत के महाकवि कालिदास के समान ऋतु में प्रकृति का मार्मिक वर्णन किया है। सेनापति के काव्य का अनुशीलन करने पर ज्ञात होता है कि राम के प्रति विशेष अनुराग की भावना थी, इसीलिये राम के शौर्य और भक्त-वत्सल रूप पर ही मुग्ध रहे हैं।

सेनापति का मन जनसाधारण के निकट पहुँचकर संस्कृति और प्रकृति का परिचय कराना प्रमुख आधार या पाथेय मानता है, इसीलिये रीतिकाल में प्रचलित ब्रजभाषा को काव्य भाषा के रूप में अपनाया है, भाषा और भाव के प्रवाह में ओज, माधुर्य और प्रसाद गुण का संगम हृदय के भावों का निरन्तर स्पर्श करता है।

व्याख्या भाग
कवित्त
(1)

"नाहीं नाहीं करै..इकसार हैं।"

कठिन शब्दार्थ—नाहीं करै = मना करना, थोरी = थोड़ी, माँगै = माँगना, मगन = प्रसन्न, देखि = देखकर, पट = वस्त्र, देत = देना, जिन कौ = जिनको, प्रापति = प्राप्ति, घरी = समय, सदा = हमेशा, जन = मनुष्य, मनभाए = मन को अच्छा लगने वाला, निराधार = बिना आधार का, भोगी है = भोगी होकर, रहत = रहना, बिलसत = प्रसन्नता, अवनी =

पृथ्वी, मध्य = बीच में, जौरे = जोड़ना, बिचारौ = विचार करना, जामैं = जिसमें, दाता = देने वाला, अरु = और, सूम = कंजूस, दोऊ = दोनों, कीने = किए, इकसार = समान ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना हिन्दी कविता के इतिहास में रीतिकाल या श्रृंगारकाल के अन्तर्गत श्रृंगार और प्रकृति के महान् कवि सेनापति द्वारा लिखित 'कवित्त रत्नाकर' से अवतरित है । प्रभु भक्ति में समर्पित होकर सेनापति कहते हैं—नहीं-नहीं करते हुए थोड़ा सा माँगने पर प्रभु सब कुछ प्रदान कर देते हैं, प्रसन्न को देखकर प्रसन्नतापूर्वक बार-बार वस्त्र प्रदान करते हैं, जिनको हृदय से मिलन का समय प्राप्त हो जाता है, वे लोग बिना आधार के ही प्रसन्न घूमते हैं, जो असार संसार में माया को लेकर प्रसन्न होते हैं, वे लोग एक-एक पैसा जोड़कर दान-पाठ करते हैं, सेनापति कहते हैं—वचन पालन की रचना पर विचार होना चाहिए क्योंकि प्रभु के यहाँ दाता और कंजूस दोनों समान रूप से बनाए गये हैं ।

विशेष–(1) प्रभु वन्दन में सहृदयों की उदारता का परिचय है ।

(2)

''देखैं छिति अंबर...सम कर्‌यो है ।''

कठिन शब्दार्थ–देखैं = देखना, छिति = पृथ्वी, अम्बर = आकाश, जलै = जल, चारि ओर = चारों ओर, छोर = किनारा, तिन = उन, तरबर = वृक्ष, सबही = सभी का, रूप = सौन्दर्य, हर्‌यौ = हरा-भरा, झर = लपट, लागै = लगना, भादव = भाद्रपद माह, होति = होना, जलद = बादल, पर्‌यो = पड़ा, दारुन = कठोर, तरनि = सूर्य, सीरी = ठण्डी या शीतल, घन छाँह = बादलों की छाया, चित्त = हृदय, धार्‌यो = धारण किया है, ग्रीषम विषम = गर्मी की विषमता, बरषा = वर्षा, सम = समानता, कर्‌यौ = करना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कवित्त सेनापति द्वारा लिखित ''कवित्त रत्नाकर' से अवतरित है । पृथ्वी, आकाश, जल है वहाँ चारों और वृक्षों की हरियाली का सौन्दर्य बिखरा रहता है, भाद्रपद के महीने में वर्षा की झड़ी लगी रहती है, बादलों का समूह पवन के साथ रहता है, सूर्य की कठोरता कम हो जाती है, चारों ओर जल का सुख अनुभव होने लगता है, शीतल बादलों की छाया हृदय को प्रसन्न करती है, सेनापति की कविता की चतुरता देखते ही बनती है कि गर्मी की विषमता वर्षा के कारण समान हो गई है ।

विशेष–(1) ऋतु वर्णन में भाद्रपद माह की विशेषताओं का निरूपण है ।

(2) श्लेष अलंकार के साथ-साथ लक्षणा शब्द-शक्ति और श्रृंगार रस का समन्वय है ।

(3)

''तारन को जोति...बरनत हैं ।''

कठिन शब्दार्थ–जोति = प्रकाश, मिलि = मिलकर, विमल = निर्मल, होति = होती है, जाके = जिसके, संग में = साथ में, सरसत = प्रसन्न, भुवन = भवन, उर जानिये = हृदय में जानिये, अघ = पाप, तही = उसी, मध्य = बीच में, जगतै = संसार, कामना = इच्छा, लहत = प्राप्त करना, सरब = सभी, सज्जन भजत = सज्जन भजते हैं, महातम = महिमा, हित = कल्याण, रत = लगे हुए, बैन = वाणी, मरजाद = मर्यादा, रवि = सूर्य, अरुन = लालिमा, बरनत = वर्णन करना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद रचना हिन्दी काव्य संसार में रीतिकालीन कवि सेनापति द्वारा लिखित कवित्त रत्नाकर से अवतरित है। सेनापति कवि कहते हैं कि तारों का प्रकाश जिससे मिलकर निर्मल होता है, जिसके साथ दीपक प्रकाशवान होते हैं, भवन रूपी हृदय में पापों का प्रकाश जानिए, इसी पाप धारा के बीच संसार के लोग निवास करते हैं, इच्छाओं को पूरा करने के लिये सब कुछ किया जाता है, उसी को सज्जन लोग कल्याण के लिये साधना में रत होते हैं, सेनापति कहते हैं कि जीवन में वाणी की मर्यादा को देव और सूर्य की लालिमा आदि सभी वर्णन का विषय बनाते हैं।

विशेष–(1) ज्ञान-विज्ञान के रहस्य को प्रकृति प्रधान प्रतीकों द्वारा लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति द्वारा उजागर किया है।

(2) श्रृंगार रस में वैदर्भी रीति की सार्थकता भावात्मक शैली से गतिशील है।

(4)

''अँखियाँ सिराती...बार तो बरसते।''

कठिन शब्दार्थ–अंखिया सिराती = आँखें शान्त होतीं, सरसाती = प्रसन्न होती, तन परस = शरीर का स्पर्श, सरस = हर्षित होना, रावरे = आपके, अधीन = आश्रित, नीरहीन = जल से अलग, मीन = मछली, जिमि = जैसे, काहै को = किसलिए, तरसते = लालायित रहते, जीवन अधार = जीवन का आधार, ढरत = ढलना, अरस = आकाश, उनै-उनै = बार-बार, घनस्याम = बादल, ह्वै के बरसाऊ = बरसने वाले होकर।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रीतिकालीन काव्य में भक्ति, श्रृंगार और प्रकृति के अमर गायक कवि सेनापति द्वारा लिखित 'कवित्त रत्नाकर' से अवतरित है। सेनापति प्रभु भक्ति में समर्पित भाव से कहते हैं कि—हे प्रभु ! आपके दर्शन मात्र से आँखों का ताप कम हो जाता, हृदय की पीड़ा शान्त होती, रोम-रोम हर्षित होकर शरीर से स्पर्श पाकर आनन्द मग्न होते, आपके आश्रित होकर तुम्हारे दर्शन के बिना हम अत्यधिक दीन हैं, जल से हीन मछली की तरह क्यों व्याकुल बना रहे हैं, आप तो सेनापति के जीवन का आधार हैं, जहाँ तक आपकी कृपा है वहाँ तक आकाश की सीमा है, बार-बार बादलों के रूप में गरज-गरज कर कृपा के रूप में बरसकर एक बार तो अपनी कृपा के सागर में सराबोर कर देते।

विशेष–(1) भक्ति भावना में प्राकृतिक प्रतीकों का साम्य भावना की सत्यता का परिचय देते हैं।

(2) श्लेषोक्ति में जीवन का आधार पाने के लिये लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति की सार्थकता है।

(3) श्रृंगार रस में भावनात्मक शैली की एकता का स्वर उभरता है।

(5)

''कालिन्दी की धार...तेरे केस हैं।''

कठिन शब्दार्थ–कालिन्दी = यमुना, धार = धारा, निरधार = निराधार, अधर = होंठ, अलि = भौंरे, निकाई = सुन्दरता, अहिराज = सर्पों के राजा, सिखंडि = भोर; इन्द्रनील = नीलमणि, कीरति = कीर्ति, कराई = करना, एड़िन = एड़ी, हियके = हृदय के, हरषकर = प्रसन्न होकर, हरत = हरण करना, रतिकंत = कामदेव, चीकने = चिकने, सघन = घने,

अंधियारे तै अधिक कारे = अंधेरे से अधिक काले हैं, लसत = युक्त होना, लछारे = घुँघराले, सटकारे = अनोखे ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कवित्त हिन्दी कविता में रीतिकालीन कवि सेनापति द्वारा लिखित कवित्त रत्नाकर से अवतरित है, नायिका के केशों का वर्णन करते हुए कवि कहता है—नायिका ! तेरे घुँघराले बाल लम्बे और अद्‌भुत हैं, इनकी उपमा यमुना नदी की धारा से नहीं दी जा सकती, वह तो निराधार बहती है, किन्तु इन केशों ने तो तुम्हारे सिर का आधार ले रखा है, भौंरों की पंक्ति से इनकी सुन्दरता की उपमा नहीं दी जा सकती, क्योंकि भौंरों के समूह की सुन्दरता, थोड़ी सी भी समानता नहीं रखती, बादल और इन्द्रनीलमणि की प्रशंसा भी ये केश नहीं सुन सकते । तेरे ये बाल एड़ियों से लगते हैं, तब हृदय में प्रसन्नता का संचार करते हैं, इनको देखते ही कामदेव के दु:ख दूर हो जाते हैं, ये केश घने और चिकने हैं । इनकी कालिमा अंधेरे से अधिक है, अतः तेरे बाल अद्‌भुत से ही प्रतीत होते हैं ।

विशेष–(1) नायिका के केशों का वर्णन प्रसिद्ध प्रतीकों से श्रेष्ठ है ।

(2) श्रृंगार रस, श्लेष अलंकार और व्यंजना शब्द-शक्ति का प्रयोग है ।

(6)

"तोर्‌यो है पिनाक...जनक नरिन्द की ।"

कठिन शब्दार्थ–तोर्‌यो = तोड़ा, पिनाक = शंकर का धनुष, नाकपाल = देवता, बरसात फूल = फूलों की वर्षा, रति = प्रेम, बखानै = वर्णन करना, बिलोकी = देखना, छवि = सौन्दर्य, बदन = मुख, अरविन्द = कमल, परी प्रेम फंद = प्रेम के बंधन में पड़ना, उर बाढ्‌यो = हृदय में बढ़ना, आछी = अच्छी, चाल = गति, गयंद = हाथी, बरन = वर्ण, कनक = सोना, बानक = आकृति, नरिंद = राजा ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिकालीन काव्य में सेनापति द्वारा लिखित 'कवित्त रत्नाकर' से अवतरित है, शिव धनुष टूटने के बाद हाथों में जयमाला लिये सीता किस प्रकार आ रही है, सेनापति कहते हैं—जैसे ही श्रीराम ने शिव धनुष पर प्रत्यंचा (डोरी) चढ़ाकर तोड़ा, उसी समय देवताओं ने श्रीराम पर फूलों की वर्षा की, दशरथ पुत्र श्रीराम के सौन्दर्य को देखते ही सीता अपने हाथों में जयमाला लेकर उनके प्रेम बंधन में बंध गई, सीताजी के हृदय में आनन्द बढ़ने लगा और मस्त हाथी के समान धीरे-धीरे श्रीराम के पास आईं, कवि ने कहा कि सीताजी सोने के समान चमकती हुई-सी, सोलह श्रृंगार करके पायल की ध्वनि करती हुई श्रीराम के समीप पहुँच गईं ।

विशेष–(1) श्रीराम के विवाह का मनमोहक वातावरण अनुप्रास और रूपक अलंकार से सजाया है ।

(2) श्रृंगार रस की अलौकिक छटाएँ मनोहारी हैं ।

(3) भावात्मक शैली की प्रधानता है ।

(7)

"सेनापति उनए...हरि सोइ कै ।"

कठिन शब्दार्थ–जलद = बादल, चारि हू दिसान = चारों दिशाओं में, घुमरत = घुमड़ना, भरे तोइ कै = जल से भरे हुए, सोभा सरसाने = शोभा से युक्त, बखाने = वर्णन करना, काहू भाँति = किसी प्रकार, पहार = पहाड़, काजर के ढोइ कै = काजल के

लादकर, घन सौ गगन छायो = आकाश बादलों से भर गया, तिमिर = अंधकार, सघन = घना, भयौ = हो गया, रवि गयौ खोइ कै = सूर्य गुफों में चला गया, निसा = रात्रि, भरम = भ्रम, याही तें = इसी से, रहत = रहना।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कवित्त सेनापति द्वारा लिखित कवित्त रत्नाकर से अवतरित है। कवि का मन सावन मास की सुन्दरता का रहस्य उजागर करते हुए कहता है—सावन मास के बादल जब भरकर चारों दिशाओं में घुमड़ने लगे, इनकी सुन्दरता का वर्णन नहीं किया जा सकता, ऐसा प्रतीत होता है मानो ये काजल के पहाड़ को लादकर आ रहे हों, आकाश में बादलों के छा जाने से अंधकार घना हो गया है, इनकी सुन्दरता को देखकर सूर्य किसी गुफा में जाकर छिप गया है, वर्षा ऋतु के चार मासों में रात्रि का भ्रम बना रहता है, कवि कहते हैं कि इसीलिये हृदय में प्रसन्नता का भाव बना रहता है।

विशेष–(1) कवि द्वारा सावन मास में बादलों की सुन्दरता का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया गया है।

(2) भाव और कला का समन्वय लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति से युक्त है।

(8)

"खण्ड-खण्ड सब..क्वार के।"

कठिन शब्दार्थ–दिगमण्डल = समस्त दिशाएँ, जलद = बादल, सेत = सफेद, सृंग = चोटी, फटकि पहार = काँच के सफेद पारदर्शक पत्थर, अंबर = आकाश, अडंबर = गंभीर, घुमड़ि छिन = घुमड़कर क्षण में, छिति = पृथ्वी, सलिल = जल, सुधा के महल नभ = चूने से चुते बादलों के महल, तूल = रूई, पहल = धुली रूई की मोटी परत, रजत = चाँदी, राजत = सुशोभित, गग-गग गरजत = बादलों का गरजना, गगन घन = आकाश में बादल।

सप्रसंग व्याख्या–रीतिकालीन कवि सेनापति ने क्वार के बादलों का सरस वर्णन किया है। क्वार के सफेद बादल खण्ड-खण्ड होकर आकाश की दसों दिशाओं में बिखरे हुए हैं, वे ऐसे प्रतीत होते हैं मानो स्फटिक मणियों के पहाड़ हों, आकाश में उमड़-घुमड़कर गंभीर शब्द करते हैं, आकाश में जल की बूँदें उछाल-उछालकर छिड़कते हैं, जल से सफेद बादल ऐसे लगते हैं, मानो आकाश में चूने से चुते सफेद महल हों या चाँदी के पहाड़ हों, अथवा पवन में अटकी हुई रूई की परत हों, चाँदी के समान क्वार के सफेद बादल आकाश में पूर्व की ओर दौड़ते हुए गर्जना करते अत्यधिक सुशोभित हो रहे हैं।

विशेष–(1) कवि ने क्वार के बादलों को स्फटिक श्रृंग और रूई के महल के समान बताया है।

(2) क्वार मास में पछुवा हवा चलने से बादल पूर्व की ओर जाते देखे गये हैं।

(9)

"कातिक की राति..मगन है।"

कठिन शब्दार्थ–राति = रात, थोरी = थोड़ी, सियराति = शीतल, सुहाति = अच्छी लगना, गन = समूह, कुमुद = कमल, सघन वन = घने वन में, अनगन = असंख्य, उदित = उदय, बिमल = निर्मल, जस = यश, अघ = पाप, ऊरध = ऊपर, गगन = आकाश, तिमिर हरन भयो = अंधकार समाप्त हो गया, सेत = सफेद, जगत = संसार, मगन = प्रसन्न।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिकालीन कवि सेनापति द्वारा विरचित 'कवित्त रत्नाकर' से अवतरित है, सेनापति कहते हैं कि कार्तिक मास में रातें थोड़ी-थोड़ी शीतल हो जाती हैं, मानव जीवन सुख का अनुभव करता है, कमल विकसित होने लगते हैं, घने वनों में मालती फूलने लगती है, ऐसा लगता है मानो आसमान में मोती के समान असंख्य तारे रूपी फूल विकसित हो रहे हों, निर्मल चाँदनी उदित होकर इस प्रकार छिटक रही है जैसे राम के यश के सामने सभी प्रकार के पाप ऊंपर आकाश में जाकर लुप्त हो गये हों, अंधकार समाप्त हो गया, सफेद वर्ण छिटक रहा है, तब ऐसा प्रतीत होता है मानो संसार में प्रसन्नता का क्षीरसागर व्यापक हो रहा है।

विशेष–(1) ऋतु वर्णन में कार्तिक मास का वर्णन परिवर्तन का संकेत है, लक्षणा शब्द-शक्ति, अनुप्रास अलंकार की प्रधानता है।

(10)

"सीत कौ प्रबल..................................छिपाइ कै।"

कठिन शब्दार्थ–सीत = ठंडक, प्रबल = बहुत अधिक, कोपि = क्रोध करके, निबल = शक्तिहीन, अनल = अग्नि, सूर = सूर्य, सियराइ = ठंडा हो गया, हिम के समीर = बर्फीली हवाएँ, भौन = भवन, कोनन = कोना, धूम = धुआँ, नेकु सुलगाइ = थोड़ी सी जलाकर, भीत = भयभीत होना, पसारि पानि = हाथ फैलाकर, पाउक छिपाइ = आग को छिपाकर।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कवित्त रीतिकालीन कवि सेनापति द्वारा लिखित कवित्त रत्नाकर से अवतरित है, कवि शरद् ऋतु का वर्णन करते हुए कहते हैं कि—शरद् ऋतु के आगमन पर ऐसा प्रतीत होता है कि मानो ठंडक ने अपने दल के साथ चढ़ाई कर दी हो, शीतलता की अधिकता के कारण आग का प्रभाव शक्तिहीन हो गया है, शरद् में हवा की गति तेज हो जाती है, बर्फीली वायु चलने लगती है, यह पवन बर्फ और पाले से युक्त इतनी तेज और पीड़ादायक है कि ऐसा लगता है मानो भयानक बाणों की वर्षा हो रही हो, गर्मी तो ऐसी प्रतीत होती है जैसे महलों के कोनों में जाकर रहने लगी हो, शीत के तेज होने के कारण आँखों से आँसू बहने लगते हैं, सभी प्राणी अधिक से अधिक समय तक आग के पास पड़े रहना चाहते हैं, अधिकतर लोग शरद में आग को हृदय से लगाने के लिये व्याकुल रहते हैं, तब ऐसा प्रतीत होता है मानो शीत की तीव्रता से भयभीत होकर सब लोग आग को अपने हृदय में छिपाकर रखे हुए हैं।

विशेष–(1) उत्प्रेक्षा अलंकार, नाद सौन्दर्य, चित्रोपमता की प्रधानता है।

(11)

"सिसिर में ससि..................................न सकति है।"

कठिन शब्दार्थ–ससिकौ सरूप = चन्द्रमा का स्वरूप, सविताऊ = सूर्य, घामहूं = धूप में; दुति = प्रकाश, दमकति = चमकती है, सहसगुनी = हजारों गुनी, रजनी = रात, झाँई = परछाई, बासर = दिन में, झमकति = चमकती है, सूर = सूर्य, दृग-छोर = आँखों का किनारा, तजि = छोड़कर, धीर = धैर्य, कमोदनी = कमलिनी।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कवित्त रीतिकालीन कविता के इतिहास में कुशल चितेरे सेनापति द्वारा लिखित 'कवित्त रत्नाकर' से अवतरित है, कवि सेनापति शिशिर का मनोहारी वर्णन करते हुए कहते हैं—शिशिर में चन्द्रमा का स्वरूप सूर्य की धूप के समान

चाँदनी का प्रकाश चमकता है, यह शीतलता हजारों गुनी सुहावनी लगती है, रात्रि की छाया, दिन के समान चमचमाती है, चकोर सूर्य की आँखों की कोर तक कर पाने में समर्थ नहीं था, वह शीतलता पाकर प्रिय को पुकार कर रहा है, चकवा का हृदय ऐसी सुन्दरता को देखकर आनंदित होता है, कमलिनी को भी प्रसन्नता में चन्द्रमा का भ्रम हो जाता है, चन्द्रमा के साथ कमलिनी विकसित नहीं हो पा रही थी, किन्तु शिशिर में आनंदित होकर विकसित हो रही है।

विशेष–(1) शिशिर ऋतु का वर्णन मनोहारी है, लक्षणा शब्द-शक्ति और वैदर्भी रीति का प्रयोग है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

प्रश्न 1. 'घन सो गगन छयौ तिमिर सघन भयौ,
देखि न परत मानो, रवि गयो खोइ कै।'

पंक्तियों में कौनसा अलंकार है ?

उत्तर–(ग) उत्प्रेक्षा।

प्रश्न 2. 'चकवा की छाति तजि धीर धसकति है।'
चकवा की इस बेचैनी का क्या कारण है ?

उत्तर–(ख) सविता की शशि-तुल्य होना।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. चारि मास भरि स्याम निसा के भरम करि,
मेरे जान याही तें रहत हरि सोइ कै।
हरि किन चार मासों में सोये रहते हैं ?

उत्तर–हरि अषाढ़, सावन, भादौ, क्वार चार मासों में सोये रहते हैं।

प्रश्न 4. पूरब को भाजत हैं, रजत से राजत हैं,
गग-गग गाजत गगन घन क्वार के।

इन पंक्तियों में काव्यगत सौन्दर्य क्यों है ?

उत्तर–उत्तर भारत में वर्षा प्रायः पूर्वी हवाओं से होती है, कभी-कभी उत्तरी हवाएँ भी चलती हैं, लेकिन क्वार में हवा का रुख बदल जाता है और पछुवा हवाएँ चलने लगती हैं, इसलिये क्वार के बादल पूर्व को भागते हुए दिखते हैं, क्वार के बादल सफेद रंग के होते हैं, इसलिये कवि ने स्फटिक, श्रृंग और रूई के महल चाँदी के समान बताए हैं।

प्रश्न 5. सेनापति द्वारा वर्णित कार्तिक की रात्रि की शोभा को अपने शब्दों में लिखिए।

उत्तर–कार्तिक मास में दीपावली के आस-पास ऋतु परिवर्तन होता है। मीठी-मीठी सर्दी का प्रभाव बढ़ने लगता है, कमल, मालती आदि वन प्रदेश में विकसित होने लगते हैं, आकाश में चमकते हुए तारे मोती के समान देदीप्यमान होते हैं, इस प्रकृति सौन्दर्य को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान श्रीराम के यश को देखकर तारे आकाश में पहुँच गये हैं, संसार के समस्त प्राणी क्षीरसागर के समान प्रसन्न दिखाई देते हैं।

प्रश्न 6. दाता अरु सूम दोऊ कीने इकसार हैं।
इस कथन को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–परमात्मा ने दानवीर और कंजूस को समान रूप से बनाया है, मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार दाता और कंजूस बनता है, त्याग और धैर्य से दानवीरता बढ़ती है जबकि संचय और कृपणता से कंजूसों की संख्या में वृद्धि होती है।

निबन्धात्मक प्रश्न–

प्रश्न 7. सेनापति के ऋतु-वर्णन की विशेषताओं को स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–सेनापति के काव्य में प्रकृति का आलम्बन और उद्दीपन रूप ऋतु वर्णन में मनोहारी है, इन्होंने भारतीय संस्कृति, ज्योतिष का लोक परम्परा के आधार पर परिचय कराया है। प्रतीक योजना में प्रसिद्ध उपमानों की सहायता से प्रत्येक मास की अलौकिक शोभा के दर्शन होते हैं। ग्रीष्म ऋतु के आगमन पर सेनापति के अनुसार धरती-आकाश की यह दशा हो जाती है–

"देखै छिति अंबर जलैं है चारि ओर छोर,
तिन तरबर सब ही को रूप हर्‌यो है।

आकाश में बादल गरजते हैं, घटाएँ छा जाती हैं, सावन की फुहारें मन को सरसाती हैं, कवि ने कहा है–

"सेनापति अए नए जलद सावन के
चारि हू दिसान घुमरत भरे तोइ कै,
सोभा सरसाने, न बखाने जात काहू भाँति,
आते हैं पहार मानो काजर के ढोइ कै।"

क्वार मास में बादलों का समूह आसमान में खण्ड-खण्ड रूप सफेद रंग, श्रृंग और स्फटिक मणि के समान सुशोभित होते हैं–

खण्ड-खण्ड सब दिगमंडल जल दसेत,
सेनापति मानो सृंग फटिक पहार के,
× × × ×
पूरब कौ भाजत हैं, रजत से राजत हैं
गग-गग गाजत गगन घन क्वार के।"

कार्तिक मास में ऋतु परिवर्तन से ठंडक हो जाती है। जीवन और प्रकृति दोनों का अलौकिक सौन्दर्य व्यक्त होने लगता है, चाँद, तारे, कमल, मालती हर्षित हुए से क्षीरसागर के समान लगते हैं–

"कातिक की राति थोरी-थोरी सियराति सेना
पति है सुहाति सुखी जीवन के गन हैं,
फूले हैं, कुमुद, फूली मालती सघन बन,
फूली रहे तारे मानो मोती अनगन हैं।"

इस प्रकार सेनापति ने शिशिर आदि ऋतुओं का प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ जीव जाति के साथ अटूट सम्बन्ध स्थापित किया है। अतः रीतिकालीन कवियों में सेनापति का काव्य सर्वोत्कृष्ट है।

प्रश्न 8. सेनापति के काव्य की विशेषताओं की समालोचना निम्नांकित के आधार पर कीजिए–

(i) वर्ण्य-विषय, (ii) काव्य-गुण, (iii) अलंकार, (iv) शब्द-चमत्कार।

उत्तर–(i) वर्ण्य-विषय–

सेनापति अलंकार सम्प्रदाय के समर्थक कवि माने जाते हैं, भक्तिकाल और रीतिकाल के संधिकाल में इन्होंने श्रृंगार और ऋतु वर्णन का विशेष चित्रण किया है, नायिका भेद के आधार पर श्रृंगार की सूक्ष्मता का विशद् वर्णन किया है, भारतीय संस्कृति की विशेषता का भारतीय महीनों के आधार पर ऋतु वर्णन मनोहारी रूप में है । स्वकीया नायिका को ही महत्त्व दिया है, उसकी हृदयगत भावनाओं का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया—

"फूलन सौं बाल की बनाय गुही बैनी लाल ।
भाल दीनी बेंदी मृगमद की असित है ।"

नवीन उपमानों के प्रयोग में नायिका नेत्रों का सौन्दर्य अलौकिक रूप में वर्णित है—

"करत कलोल सुति दीरघ अमोल तौल,
छुवै दृग-छोर छवि पावत तरौंना है ।"

भक्ति भावना में श्रीराम कथा के प्रमुख प्रसंगों के आधार पर ओजस्वी रूप में वर्णन प्रमुख है, राम को शील, सौन्दर्य और शक्ति का प्रतीक मानकर शिव धनुष भंग का यह प्रसंग मार्मिक है—

"तोर्‌यो है पिनाक, नाकपाल बरसात फूल,
सेनापति कीरति बखानै रामचन्द्र की ।
लैके जयमाल सियबाल है बिलोकी छवि,
दशरथ लाल के बदन अरविन्द की ।"

प्रकृति के आलम्बन और उद्दीपन रूप का ऋतु वर्णन में श्रेष्ठ चित्रण है, ग्रीष्म, वर्षा और बसंत के साथ शिशिर ऋतुओं का वर्णन सानुप्रासिक भाषा में वर्णन मिलता है—
ग्रीष्म ऋतु चित्रण—

"देखैं छिति अंबर जलैं है चारि ओर छोर,
तिन तरबर सब ही को रूप हर्‌यौ है,"

क्वार मास में—

"खण्ड-खण्ड सब दिग-मंडल जलद सेत,
सेनापति मानो सृंग फटिक पहार के ।
अम्बर अडंबर उमड़ि-घुमड़ि छिन
छिछकैं छछारे छिति अधिक उद्दार के।

सेनापति के काव्य में अलंकार, शब्द विधान, शैली की विविधता मिलती है ।

(ii) काव्य-गुण–सेनापति के काव्य में प्रमुख रूप से माधुर्य और प्रसाद गुण का सफल संयोजन है, श्रृंगार वर्णन में नायिका भेद के आधार पर मनोहारी रूप के दर्शन होते हैं, ऋतु वर्णन में कवि की कल्पना शक्ति का सूक्ष्म रूप मिलता है, माधुर्य और प्रसाद का समन्वय शिशिर में इस प्रकार मिला है—

"सिसिर में ससि कौ सरूप पावै सविताऊ,
घामहूं में चांदनी की दुति दमकति है ।
सेनापति हीत शीतलता है सहस गुनी
रजनी की झांई बासर में झमकति है ।"

इस प्रकार श्रृंगार, श्रीराम शील निरूपण आदि में गुण सौन्दर्य उच्चकोटि का है।

(iii) अलंकार–सेनापति की कविता में अलंकारों का प्रयोग प्रतीक विधान के रूप में चित्रात्मक शैली के साथ है, अनुप्रास, यमक, रूपक, मानवीकरण आदि अलंकारों का उत्तम प्रयोग है, अनुप्रास अलंकार का प्रयोग प्रत्येक छंद में मिलता है, जैसे—

''परी पेम फंद, उर बाढ्यो है अनंद अति
आछी मंद-मंद चाल चलत गयंद की।
वरन् कनक बनी बानक बनक आई,
झनक मनक बेटी जनक नरिंद की।''

श्लेष अलंकार के प्रयोग में कवि की कुशलता का परिचय श्रेष्ठ है—

''भोगी ह्वै रहत बिलसत अकनी कै मध्य,
कन-कन जोरै दान पाठ परिवार हैं।
सेनापति वचन की रचना बिचारै जामैं,
दाता अरु सूम दोऊ कीने इकसार हैं।''

उत्प्रेक्षा अलंकार के प्रयोग में सावन मास का सौन्दर्य—

''सोभा सरसाने न बखाने जात काहू भाँति,
आते हैं पहार मानो काजर के ढोइ कै।
घन सौ छायो गगन तिमिर सघन भयो,
देखि न परत मानो रवि गयौ खोइ कै।''

(iv) शब्द-चमत्कार—सेनापति के काव्य में ब्रजभाषा का प्रयोग है, इस भाषा के शब्दों के साथ गहरा सम्बन्ध है, तत्सम शब्दों का पूरे काव्य में सहज प्रयोग मिलता है, लोकोक्ति और मुहावरों के साथ शब्दों का चमत्कार देखते ही बनता है। श्रृंगार, ऋतु वर्णन और राम वर्णन में इस सच्चाई को मोती की तरह पिरोया गया है, श्रीराम धनुष भंग होने पर सीताजी वरमाला लेकर राम की ओर बढ़ रही हैं, तब सेनापति के शब्द-प्रयोग से भावनात्मक एकता का रहस्य उजागर हो गया है—

''परी पेम फंद, उर बाढ्यो है अनंद अति,
आछी मन्द मंद चाल चलत गयंद की
बरन कनक बनी बानक बनक आई,
झनक मनक बेटी जनक नरिंद की।''

अतः सेनापति के काव्य में वर्ण्य-विषय, काव्य-गुण, अलंकार विधान और शब्द-चमत्कार श्रेष्ठ हैं।

अध्याय 17
घनानन्द

कवि परिचय–महाकवि घनानंद रीतिकाल में रीतियुक्त या स्वच्छंद काव्य धारा के कवि हैं। एकपक्षीय प्रेम वर्णन की विशालता को लेकर इनका उदय सं. 1746 में एवं

देहावसान 1817 में हुआ था । घनानन्द मुगल बादशाह मुहम्मद रंगीला के मुंशी थे और सुजान नाम की नर्तकी से अगाध प्रेम करते थे, एक बार बादशाह ने घनानन्द को गाने के लिये कहा, उन्होंने गाना नहीं सुनाया, दरबारियों के कहने पर सुजान कह दे तो कविराज गाना सुना सकते हैं, तब सुजान के कहने पर घनानन्द ने गाना सुना दिया, तब बादशाह ने नाराज होकर कवि को देश निकाले का दण्ड दे दिया, घनानन्द, सुजान को साथ लेकर जाना चाहते थे किन्तु सुजान घनानन्द के साथ चलने को तैयार नहीं हुई । घनानंद विरक्ति भाव से भरकर वृन्दावन चले आये, उन्होंने सुजान को प्रत्येक छंद में स्मरण करके प्रेम की सूक्ष्मता का परिचय दिया । कवि ने अपने अन्तर्मन की पीड़ा, आत्मनिवेदन, स्वानुभूति, उन्मुक्त प्रेम, प्रेम की पीर का उद्घाटन किया है, चाह के रंग में भीगा हुआ हृदय संयोग और वियोग में प्रियतम से मिलने की आतुरता है, लौकिक प्रेम की व्यंजना अलौकिक प्रेम में है ।

घनानंद की रचनाओं में सुजान सागर, विरह लीला, कोकसार, घनानंद कवित्त, सुजान हित, सुजान हित प्रबंध, वियोगिबेलि, इकलता, आनन्द घन जूकी पदावली, सुजान विनोद आदि प्रसिद्ध रचनाएँ हैं । इनके काव्य में वियोग या विप्रलम्भ श्रृंगार रस की प्रधानता में प्रेम की पीर मुखर है, प्रेम का पथ, छल और प्रपंच से दूर है, कवि ने कहा है—

"अति सूधौ सनेह को मारग है
जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं ।"

सूक्ष्म भावनाओं में प्रेम की पीड़ा का भाव सभी प्रकार के आडम्बर से रहित है, के हृदय के भावों की मार्मिकता का सत्य प्रस्तुत किया है । ब्रज भाषा को स्वीकार करते हुए अलंकार, गुण और रस का समन्वय उत्तम कोटि का है ।

व्याख्याएँ
प्रेम की पीर
(1)

"जासों प्रीत...धौं लगाइयै ।"

कठिन शब्दार्थ—जासों = जिससे, ताहि = उसी से, निठुराई = निष्ठुरता, निपट = पूरी तरह, नेह = प्रेम, जिय की जरनि = हृदय की पीड़ा, जताइयै = प्रकट करना महानिरदई = महान कठोर, दई = देना, जिवाऊँ जीव = हृदय का धैर्य, वेदन की बढ़वारि = पीड़ा की वृद्धि, कहाँ लौं दुराइयै = कहाँ तक छिपाऊँ, बखान = वर्णन, करिबै = करना रसना = जीभ, वाकौ = उसका, रैन = रात, चैन = शान्ति, लेस = तनिक भी, पैये = पाना काहि धौं = किस प्रकार ।

सप्रसंग व्याख्या—प्रस्तुत कवित्त हिन्दी जगत में रीतिकाल के अन्तर्गत रीतिमुक्त काव्यधारा के प्रतिनिधियों में प्रेम की पीर के अमर गायक महाकवि घनानन्द द्वारा लिखित 'प्रेम की पीर' से अवतरित है । कवि ने कहा है कि जिस सुजान से प्रेम है उसी की निष्ठुरता के प्रति प्रेम भाव और अधिक बढ़ता है, तब हृदय की असहनीय पीड़ा का अभिव्यक्तिकरण कैसे किया जा सकता है ? महान् निर्दयी सुजान के बिना यह हृदय शान्ति का अनुभव नहीं करता, इस बढ़ती हुई पीड़ा को कहाँ तक छिपाया जाय, दुःख का वर्णन करने के लिए जीभ भी थक जाती है, इतनी असहनीय पीड़ा के उपरान्त भी प्रिय का मुख

देखने को नहीं मिलता, रात-दिन पल-भर के लिये भी शान्ति नहीं मिलती, यह तो अपना ही दोष है कि प्रेम को हृदय का सत्य बना लिया।

विशेष–(1) प्रेम की पीड़ा का इजहार अलौकिक व्यंजना में नाद सौन्दर्य से युक्त है।

(2) ब्रजभाषा, अनुप्रास, रूपक और वियोग श्रृंगार रस का परिपाक है।

(2)

''भौर तें साझ लौं...उर आरति।''

कठिन शब्दार्थ–भोर तें = प्रातःकाल से, साँझ लौं = शाम तक, कानन ओर = वन की ओर, निहारति = देखते रहना, बावरी = पागल (प्रेम के कारण कहा), नेकु न हारति = थोड़ी सी भी नहीं थकतीं, तारिन ताकिबो = तारों को देखना, इकतार न तारति = अपलक दृष्टि अलग नहीं होती, भावतो = अच्छा लगना, दीठि परै = दृष्टिगत हो, आँसुनि औसर गारति = आँसुओं के प्रवाह में गलना, जोहन = प्रतीक्षा, उर आरति = हृदय में कष्ट है।

सप्रसंग व्याख्या–महाकवि घनानंद कृत 'प्रेम की पीर' से अवतरित है, कवि कहता है कि आँखों की दृष्टि सुजान के पथ को देखती रहती है, सुबह से लेकर शाम तक वन प्रदेश की ओर देखती हुई ये प्रेम में दीवानी आँखें थोड़ी सी भी नहीं थकीं, सायंकाल से प्रातःकाल तक तारों को देखते हुए अपलक दृष्टि जमी रहती है, सुजान मन को अच्छी लगती है। घनानंद विरह के आँसुओं में डूबा रहता है, मनमोहन को देखने के लिये हृदय रूपी आँखों में निरन्तर प्रतीक्षा बनी रहती है।

विशेष–(1) विरह वेदना का स्वरूप प्राकृतिक सौन्दर्य युक्त प्रतीकों में व्यक्त है।

(2) ब्रजभाषा, विप्रलम्भ श्रृंगार और व्यंजना शब्द-शक्ति का सार्थक प्रयोग है।

(3)

''हीन भए जल मीन...जान ही जानै।''

कठिन शब्दार्थ–हीन भये = रहित हो गये, मीन = मछली, अधीन = व्याकुल, अकुलानि = व्याकुलता, नीर सनेही = प्रेमी का जल, लाय = लाकर, निरास है = निराश होकर, त्यागत प्रानै = प्राण त्यागना, प्रीति की रीति = प्रेम की परम्परा, जड़ = अचेतन, मीत = प्रियजन, जीव की जीवनि = प्राणों के जीवन, जान = सुजान।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कवित्त महाकवि घनानंद कृत 'प्रेम की पीर' से अवतरित है, कवि कहता है—जल से अलग होने पर मछली दीन-हीन हो जाती है, नायक की जीवन लीला नायिका रूपी मछली के बिना मृतप्रायः हो गई है, अपने स्नेही जल का विश्वास छोड़कर और उसे कलंक लगाकर कायर मछली अपने प्राणों को त्याग देती है, अर्थात् मछली अपने प्रिय पर विश्वास नहीं करती मरकर कलंक लगाती है, किन्तु नायक अपने प्रिय पर अविश्वास नहीं रखता और न ही मरकर कलंक ही लगाता है, अतः वियोग के कष्ट को दूर करने के लिये जीवित रहता है, मछली प्रेम की रीति को क्यों समझे वह तो मरकर प्रमाणित करती है कि वह जल के बशीभूत है, यह प्रमाणित नहीं करती कि वह प्रीति की रीति समझती है, वस्तुतः प्रेम की रीति को क्या समझे वह तो जड़ प्रियजल के हाथ में पड़े होने को ही प्रमाणित करती है, कवि कहते हैं कि प्रिय के वियोग में मेरे मन की जो दशा है, उसको प्राणों से अधिक प्रिय सुजान ही जान सकती है।

विशेष–(1) प्रेम की आन्तरिकता का परिचय है जिसमें अनुकूल और प्रतिकूल कुछ नहीं होता अपितु प्रेम के घनत्व की अधिकता रहती है।

(2) वियोग श्रृंगार रस में ब्रजभाषा की सरसता है।

(4)

''क्यों हँसि हेरि...कौने पढ़ाई।''

कठिन शब्दार्थ–हेरि = देखकर, हर्‌यौ हियरा = हृदय हरण कर लिया, अरु = और, हित कै = प्रेम करके, चित चाह बढ़ाई = हृदय की अभिलाषा बढ़ाई, सुधासने बैननि = अमृतयुक्त वाणी से, चैननि = शान्ति से, मैननि सैन = कामदेव की सीढ़ी, सुधि = स्मृति, मो हिय = मेरे हृदय में, सालनि = पीड़ा, कढ़ै न कढ़ाई = निकालने पर भी नहीं निकलती, मीत = प्रिय, अनीति = अन्याय, पाटी = पट्टी या परम्परा, इते पै न जानिए = इतने पर भी नहीं जानते।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कवित्त रीतिमुक्त धारा के कवियों में श्रेष्ठ घनानंद द्वारा लिखित 'प्रेम की पीर' से अवतरित है, विरहिणी अपने प्रेम की स्थिरता पर प्रकाश डालती है कि—प्रिय सुजान, यदि प्रिय को किसी प्रकार का अन्याय ही करना था, तब तुमने मेरी ओर हँसते हुए क्यों देखा और प्रेम करके निकटता क्यों बढ़ाई, अमृतयुक्त वाणी से हर्षित होकर कामदेव की सीढ़ी पर क्यों चढ़ाया ? घनानंद कहते हैं—मिलन की स्मृति मन में शूल के समान पीड़ा देती है, किसी प्रकार से निकालने के बाद भी निकल नहीं पाती, फिर भी हे मित्र (प्रिय) सुजान, तुमको ऐसा अन्याय करने की शिक्षा दी है, अर्थात् यह हृदय मिलन के लिये व्याकुल रहता है, किन्तु प्रिय को तनिक भी चिन्ता नहीं है।

विशेष–(1) कवि ने कामदेव की कलाओं का मनोहारी वर्णन किया है।

(2) अनुप्रास, श्रृंगार रस और लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति की व्यापकता विरह वेदना में सजीव है।

(5)

''रावरे रूप...हाथनि हारियै।''

कठिन शब्दार्थ–रावरे = आपके, रूप = सौन्दर्य, रीति = दशा, अनूप = अलौकिक, निहारिये = देखिए, आँखिन बानि = आँखों की आदत, अघानि = तृप्त, आनि = शपथ, तिहारियै = तुम्हारे, एक ही जीव = एक ही प्राण, हुतो = था, वार्‌यो = न्यौछावर कर दिया, दहै = जलाती है, बावरी = पागल (प्रेम में), रीझि = प्रसन्नता, हाथनि = हाथों, हारियै = पराजित होना।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रीतिमुक्त कवि घनानन्द द्वारा लिखित 'प्रेम की पीर' से अवतरित है, नायक-नायिका के नित्य नवीन सौन्दर्य और अपनी आँखों की विवशता को लेकर कहता है—आपकी सौन्दर्य दशा अलौकिक है, उसको जैसे-जैसे देखता हूँ वैसे ही वैसे नवीन होता जाता है, नायिका रूप प्रतिपल, प्रतिक्षण बदलता रहता है, जिस प्रकार आपके सौन्दर्य की गति अनुपम है वैसे ही इन आँखों की विचित्र आदत हो गई है, तुमको देखे बिना आँखों को सुख नहीं मिलता, मेरे पास केवल एक प्राण था, वह तुम्हारे सौन्दर्य पर न्यौछावर हो गया, अतः हें सुजान, अब संकोच और चिन्ता के वातावरण

से तुम ही आधार प्रदान करो, कवि ने कहा है—मैं तो प्रेम की पगली मुग्धता **के हाथों पराजित हो गया हूँ, इस कारण** वह रोकने से भी नहीं रुकती है ।

विशेष–(1) विरह वेदना का अन्तर्दाह लाक्षणिकता में व्यक्त है ।

(2) **अनुप्रास, रूपक** के साथ वियोग-श्रृंगार रस में प्रेम की पीड़ा का **भाव व्यंजित है** ।

(6)

"**रूप निधान**...**के तारे** ।"

कठिन शब्दार्थ–रूप निधान = सौन्दर्य का भण्डार, इन नैननि = इन आँखों ने, **नेकु = थोड़ासा, निहारे = देखना**, दीठि थकी = दृष्टि थक गई, अनुराग = प्रेम, छकी = तृप्त **होना, मति = बुद्धि, लाज के** साज-समाज बिसारे = लज्जा के सभी सामाजिक बंधन भुला **दिए, अचंभो = आश्चर्ययुक्त** घटना, भयौ = हुई, नित = प्रतिदिन, पल-पाट = पलक रूपी **वस्त्र, तारे = आँखों की पुतलियाँ** ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता स्वच्छन्दतावादी कवि घनानन्द द्वारा लिखित **'प्रेम की पीर' से अवतरित है**, नायक अपने वियोग से उत्पन्न भावों का चित्रण करता है **कि जबसे मैंने सौन्दर्य के भण्डार** सुजान सखी को देखा है, तभी से मेरी दृष्टि थक गई है । **ये आँखें प्रेम से भर गई हैं और बुद्धि** ने लज्जा के सभी सामाजिक बंधन, साधन भुला दिए **हैं, कवि ने कहा है—आश्चर्य यह है** कि मेरी ये आँखें निरन्तर पलक रूपी वस्त्रों को हटाकर **नग्न रहने लग गई हैं, स्थिति यह** हो गई है कि आँखों की पुतलियाँ उस ओर से हटाने पर **भी नहीं हटतीं और मन को** आकर्षित करने वाले प्रियतम के मोह के ताले मन पर लग गये **हैं, मन पूरी तरह से प्रेम के वशीभूत** हो गया है ।

विशेष–(1) प्रेम की विवशता का चित्रण मार्मिक रूप में है, नाद सौन्दर्य **की प्रधानता है** ।

(2) वियोग श्रृंगार रस, लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति द्वारा चित्रात्मक शैली का **समन्वय है** ।

(7)

"**कारी कूर**...**घन घोरि लै** ।"

कठिन शब्दार्थ–कारी = काली, कूर = क्रूर, कोकिला = कोयल, कहाँ को बैर = कब का बैर, काढ़ति री = निकालती है, करेजो = हृदय, कोरि लै = खोदकर निकालना, कान फोरिलै = कान फोड़ ले, दल = समूह, जोरि = जोड़कर, जौ लौं = जब तक, आवन = आना, डरारे = डरावने, बजमारे = सत्यानाशी, घोरिलै = गरजले ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रीतिमुक्त धारा के श्रेष्ठ कवि प्रेम की पीर के अमर गायक घनानन्द द्वारा लिखित है । विरह व्यथा प्राकृतिक रूप में वर्णित है—काली और क्रूर कोयल तू कबका बैर निकाल रही है, कूक-कूककर इस हृदय को खोदकर क्यों नहीं निकाल लेती ? जिस प्रकार ये पापी मोर दिन-रात पीछे पड़े रहते हैं, वैसे हे हत्यारे चातक, तू भी पिव-पिव करके कानों को फोड़ ले, अत्यधिक आनंद प्रदान करने वाले मेघ और प्राणों के लिये जीवन के समान सुजान के बिना अकेली समझकर हे पक्षियों तुम अपनी सेना से मुझको घेर लो, आनन्द की वर्षा करने वाले सुजान जब तक आवें, तब तक सत्यानाशी और भयभीत करने वाले बादलों, तुम भी गर्जना कर लो ।

विशेष–(1) प्रकृति प्रधान उपमानों में विरह वेदना का निरूपण है।

(2) श्रृंगार रस, अनुप्रास अलंकार का संगठन चित्रात्मक शैली में है।

(8)

''चोप चाह चावनि..बघूरे को।''

कठिन शब्दार्थ–चाह = अभिलाषा, भयौ = होना, सुधाधर = चन्द्रमा, बंधनि बंध्यौ = बंधन में बंधा हुआ, सुक्रस्यौ = भली प्रकार कसा हुआ, लखि = देखकर, जूरे को = जूड़े को, जाही-जाही = जिस-जिस, पर्‌यो = पड़ना, ताही = वहीं, गरि गरि सर्‌यौ = गल-गल कर सड़ गया, बापुरे = बेचारे, अनंग दल = कामदेव का समूह, वघूरे = चक्रवात।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रीतिमुक्त कवि घनानन्द द्वारा लिखित प्रेम की पीर से अवतरित है। कवि ने पीड़ा (प्रेम) का वर्णन किया है कि—प्रियतमा के स्मरण में यह हृदय चकोर की भाँति पिव-पिव की रट लगाता रहता है, उसका मुख पूर्णिमा के चाँद की तरह सौन्दर्य के प्रकाश से युक्त है, इस विरह वेदना को कहाँ तक व्यक्त करूँ ? यह तो विधि के बंधन में बंधा हुआ है, जूड़े के समान यह हृदय सुजान के प्रेम बन्धन में ऐसा बंधा है कि निकल ही नहीं पाता, यह पीड़ा बोध जिस-जिस अंग पर पड़ा वही पीड़ा के कारण धीरे-धीरे गलकर सड़ रहा है, उसका सम्पूर्ण बल थक गया है, क्योंकि कामदेव ने पूरे दल-बल के साथ चढ़ाई कर दी है, अब तो आनन्द के भण्डार सुजान को देखे बिना मेरा मन चक्रवात में फँसे पत्ते की तरह भटक रहा है, किन्तु मिलन सम्भव नहीं हो रहा है।

विशेष–(1) विरह वेदना का निरूपण है, श्रृंगार रस का परिपाक है।

(9)

''मरिबौ बिसराम..को परसै।''

कठिन शब्दार्थ–मरिबौ = मरना, बिसराम = विश्राम, गनैं = गिनना, बापुरो = बेचारा, मीत = मित्र, तज्यौ = छोड़ना, चितवै = देखना, थरसै = परेशान होना, मीन = मछली, पतंग = पतंगा, जिय = हृदय, परसै = स्पर्श करना।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कवित्त हिन्दी काव्य साहित्य के इतिहास में रीतिकाल की मान्यताओं के अन्तर्गत रीतिमुक्त या स्वच्छंद काव्य धारा के श्रेष्ठ कवि घनानंद द्वारा लिखित 'प्रेम की पीर' से अवतरित है, विरह विदग्ध नायिका की मनोदशा का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि—प्रेम की पावन धारा में यह प्राण तत्व भी समाप्त नहीं होता और न ही बेचारा प्रिय मित्र सुजान को छोड़ने में सफल हो पाता है, उस सौन्दर्य की अनुपम छटाओं को भली प्रकार अनुभव करता हुआ उसके तेज को देखने की अभिलाषा में आँखों से नीर बहा रहा है, घनानंद कवि कहते हैं कि—विरह की तीव्रता के कारण अनोखी दशा हो गई है, बावली सी प्रिय सुजान के स्मरण में व्याकुल है, क्योंकि प्रिय से अलग होने पर मछली और पतंगें की जो दशा हो गई है वैसे ही प्रिय सुजान से मिलन की आशा में मेरे इस हृदय की हालत भी इसी प्रकार की है, सुजान बिना व्याकुलता दूर नहीं हो सकती।

विशेष–(1) विरह दशा का वर्णन लक्षण-लक्षणा और वियोग श्रृंगार रस के साथ अनुप्रास अलंकार में है।

(10)

''इत बाँट परी..लीजियै जू।''

कठिन शब्दार्थ–इत = इधर, बाँट = हिस्से में, सुधि = स्मरण, रावरे = आपके, उराहनों = उपालम्भ, सीस चढ़ाय = सिर पर चढ़ाना, तिहारियै = तुम्हारे, बातनि = बातों में, नीके = अच्छे, चाड़ = प्रेम।

सप्रसंग व्याख्या–स्वच्छंद काव्य के श्रेष्ठ कवि घनानंद द्वारा लिखित पद में अपने प्रिय के लिये मंगल कामना की गई है कि हे प्रिय ! मेरे भाग में तुम को याद करना आया है और तुम्हारे हिस्से में मुझको भूलना आया है, तब तुमको उलाहना किस आधार पर दूँ, जो कुछ मेरे हिस्से में आया है, उसको ही स्वीकार कर हृदय से लगा लिया, अतः जो कुछ तुम्हारे मन को अच्छा लगे वही करो फिर भी इतना अवश्य है कि अत्यधिक आनन्द देने वाले प्राणों के लिये जीवन का आधार सुजान ही है, मैं तो तुम्हारी ही बातें करके जीवित रहता हूँ, अतः मेरी कोई अभिलाषा नहीं है, आकांक्षा नहीं है, तब भी मेरा आशीष है कि तुम हमेशा कुशल रहो, यह हमारा आशीष स्वीकार करो।

विशेष–(1) प्रेम की एकाग्रता और नाद सौन्दर्य में चित्रोपमता है।

(11)

"अति सूधो..छटाँक नहीं।"

कठिन शब्दार्थ–अति सूधो = अत्यन्त सीधा, सनेह = प्रेम, मारग = पथ, नेकु, थोड़ा, सयानप = चतुरता, बाँक = टेढ़ापन, तहाँ = वहाँ, तजि = छोड़कर, आपनपौ = स्वयं का, झझकै = संकोच करना, कपटी = दुष्ट, निसांक = निःसंक, आँक = अक्षर, कौन धौं = कौनसी, छटाँक = पचास ग्राम।

सप्रसंग व्याख्या–महाकवि घनानन्द द्वारा लिखित यह रचना 'प्रेम की पीर' से अवतरित है, प्रेम के सम्बन्ध में कुटिलता पर उलाहना देते हुए नायक कहता है—प्रेम का पथ अत्यन्त सीधा और सरल है, इस पथ पर थोड़ी भी चतुरता और टेढ़ापन नहीं है, प्रेम पथ पर अहं भाव को त्यागकर सहृदय लोग चलते हैं, जो कपटी हैं वे इस पथ पर चलते हुए संकोच करते हैं, हे आनंद के धन सुजान, इस हृदय में एक के अलावा कोई दूसरा नहीं है, तब तुम्हीं बताओ तुमने कौन सी शिक्षा प्राप्त की है जिससे मनभर (40 किलो) लेकर छटाँक भर (50 ग्राम) भी नहीं देना चाहते हो।

विशेष–(1) प्रेम की पवित्रता में व्याकुलता का चित्रण है।

(2) प्रेम में त्याग भावना अनुप्रास, श्लेष अलंकारों से युक्त है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

प्रश्न 1. नित नीके रहौ तुम्हें चाड़ कहा, पै असीस हमारियौ लीजिए जू !' यह उद्‌गार किस मनःस्थिति का परिणाम है ?

उत्तर–(ग) सन्तोष।

प्रश्न 2. 'भोर ते साँझ लौं कानन ओर निहारति बावरी नेकु न हारति।' विरहिणी कानन की ओर ही क्यों देखती है ?

उत्तर–(घ) वन की शोभा में प्रिय की छवि दिखाई देती थी।

लघूत्तरात्मक प्रश्न—

प्रश्न 3. 'हीन भये जलमीन अधीन कहा कछु मो अकुलानि समाने।' **घनानंद ने मीन को प्रीति की रीति में अपने से हीन क्यों माना है ?**

उत्तर–मछली का प्रेम रूप जल है, जल से अलग होने पर प्राण त्याग देती है, मछली ने जल पर प्रेम का आरोप कर रखा है, किन्तु घनानंद का हृदय सुजान रूपी जल से अलग होने के बाद भी मिलन की आशा में प्रिय का निरन्तर स्मरण करता है, प्राण त्याग नहीं करता।

प्रश्न 4. विरहिणी ने विरह बढ़ाने में किन-किन को अपराधी बताया है ?

उत्तर–कोयल, चातक, मछली, चाँद, तारे आदि ने विरहिणी के विरह को बढ़ाकर अपराध किया है।

प्रश्न 5. 'अति सूधो सनेह को मारग है जहाँ नेकु सयानप बाँक नहीं' **सनेह के मार्ग में 'सयानप' को बुरा क्यों बताया गया है ?**

उत्तर–प्रेम का पथ त्याग और समर्पण पर आधारित है। चतुरता के लिये तनिक भी स्थान नहीं है, इस पथ पर चालाकी करने से प्रेम की पावन धारा नष्ट हो जाती है।

प्रश्न 6. 'एक अचभो भयौ घन आनंद है।' इस पंक्ति में किस अचम्भे की बात कही गई है ?

उत्तर–कवि कहता है कि पलक रूपी कपाटों को खोलने पर आँखों के तारे प्रिय सुजान को ही देखने में लीन हैं, यह समर्पित भाव की पराकाष्ठा है।

प्रश्न 7. घनआनंद कौन अनोखी दसा अति आवरी बावरी ह्वै थरसे, यहाँ किस अनोखी दशा का उल्लेख है ?

उत्तर–प्रेम की पावन धारा में प्रेम की पीर को लेकर नायक का मन सुजान के दर्शन लाभ के लिये बावला सा होकर स्थिर हो गया है, अर्थात् प्रभु भक्ति के समान लीन है।

निबन्धात्मक प्रश्न—

प्रश्न 8. घनानन्द को रीतिमुक्त कवि क्यों माना गया है ?

उत्तर–महाकवि घनानन्द दिल्ली में सुजान नाम की नर्तकी पर आसक्त थे, किन्तु राजा के द्वारा देश निकाला दिए जाने के बाद घनानंद सुजान के साथ आना चाहते थे, किन्तु सुजान ने घनानंद के साथ चलने को स्वीकार नहीं किया तब वृन्दावन की धरती पर आकर कवि ने अपने हृदय के पावन प्रेम को श्रीकृष्ण और राधाजी के श्री चरणों में समर्पित कर दिया, इस प्रेम पर किसी आश्रयदाता की छाप नहीं है अपितु हृदय में व्याप्त प्रेम की सत्यता का समर्पित भाव में अंकन है, कवि के काव्य में प्रेम की पीर और एक पक्षीय प्रेम की उच्चता होने के कारण रीतिमुक्त कवि माना जाता है, इनकी कविता में सौन्दर्य, प्रेम और विरह का अद्भुत संगम मिलता है, इस सम्बन्ध में कवि ने लिखा है—

"ने ही महा ब्रजभाषा प्रवीण और सुन्दतानि के भेद को जानै,

× × × × × ×

भाषा प्रवीण, सुछन्द रहै, सो घन जी के कवित्त बखानै

प्रश्न 9. घनानंद के विरह वर्णन पर प्रकाश डालिए ।

उत्तर–हिन्दी कविता में रीतिकाल या श्रृंगार काल की स्वच्छंद काव्य धारा के कवि घनानन्द प्रेम की पीर, ऐकान्तिक प्रेम की निष्ठा, तन्मयता, हृदय की परवशता, मुहावरे और लोकोक्ति प्रयोग, भाषा की प्रवीणता का अपने काव्य में प्रेम की अन्तर्दशाओं में वर्णन करते हैं, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने घनानंद के विरह की विशेषता इस प्रकार व्यक्त की है—"घनानंद ने न तो बिहारी की तरह विरह ताप को बाहरी मान से मापा है, न बाहरी उछलकूद दिखाई है, जो कुछ हलचल है वह भीतर की है—बाहर से वह वियोग प्रशान्त और गम्भीर है, न उसमें करवटें बदलना है, न सेज का आग की तरह तपना है, उनकी मौन पुकार है ।" रामधारी सिंह दिनकर ने लिखा है—विरह तो घनानन्द की पूँजी है, घनानंद स्वयं स्वीकार करते हैं—

'लोग है लागि कवित्त बनावत, मोहि तो मेरे कवित्त बनावत,

कवि ने विरही हृदय की व्याकुलता का मार्मिक चित्र—स्मृतिं, गुण, कथन, अभिलाषा, मूर्च्छा, व्याधि, उद्वेग, प्रलाप, जड़ता, उन्माद, मरण, अन्तर्दशाओं के आधार पर प्रस्तुत किया—

"कारी कूर कोकिला कहाँ को बैर काढ़ति री,
कूकि कूकि अब ही करेजौ किन कोरिलै ।
पैड़े पर पापी ये कलापी निस द्यौस ज्यों ही,
चातक घातक त्यों ही तू ही कान फोरिलै ।"

नाद सौन्दर्य और चित्रोपमता के आधार पर 'क्षणे क्षणे यत्रवतामुपैति' की भावना में प्रिय के सौन्दर्य का चित्र देखने योग्य है—

"रावरे रूप की रीति अनूप
        नयो-नयो लागत ज्यों-ज्यों निहारियै,
त्यों इन आँखिन बानि अनोखी
        अघानि कहूँ नहिं आनि तिहारियै ।"

प्रेम के पथ पर जीवन के समस्त मूल्य अर्थहीन होते हैं, केवल प्रेम की प्रवीणता ही सर्वोपरि है, नायक का मन प्रिय को उपालम्भ में समर्पित भाव समझता है—

"अति सूधो सनेह को मारग है
        जहाँ नेकु सयानप बांक नहीं
तहाँ सांचे चलै तजि आपन पौ,
        झिझकै कपटी ते निसांक नहीं ।"

मिलन की तीव्रता में प्रिय के पथ को अपलक दृष्टि से देखना ही मुख्य उद्देश्य बन गया है, क्योंकि कवि मन में प्रिय से मिलन की तीव्र उत्कण्ठा है—

"भोर ते सांझ लौं कानन ओर निहारति
        बावरी नैकु न हारति
साँझ तें भोर लौं तारनि ताकि बो
        तारनि सों इकतार न हारति ।"

इस प्रकार घनानंद के काव्य में विरह की तीव्र अनुभूति, रीतिमुक्त काव्य का प्राण तत्व है ।

प्रश्न 10. घनानन्द के काव्य की समालोचना निम्नांकित विचार बिन्दुओं के आधार पर कीजिए—

(i) प्रेम-निरूपण (ii) प्रतीक-योजना

(iii) उक्ति-वैचित्र्य (iv) लाक्षणिकता।

उत्तर–(i) प्रेम-निरूपण–कवि के काव्य में विरह की अन्तर्दशाओं के आधार पर प्रेम निरूपण है, कवि का सुजान के प्रति प्रेम भाव लौकिक उपादानों से आलौकिक प्रेम की गहरी व्यंजना है, विरह की तीव्रता और प्रेम की पीर दिखाई दे रही है—

"आनन्द के घनँ प्रान, जीवन सुजान बिना,
जानि कै अकेली सब घेरी दल जोरि लै,
जौलौं करै आवन विनोद वर सावन वे,
तौलौं रे हुरारे बजमारे घन घोरिलै।"

(ii) प्रतीक योजना–घनानंद की कविता में प्रकृति प्रधान प्रतीकों को उपमान के रूप में अपनाया गया है—

"हीन भये जल मीन अधीन कहा कछु मो अकुलानि समानै।
नीरस नेही कौलाय कलैक निरास ह्वै कायर त्यागत प्रानै।"

इस प्रकार—

"कारी कूर कोकिला, कहाँ को बेर काढ़ति री,
कूकि कूकि अब ही करेजो किन कोरिलै।
पैंडे परे पापी ये कलापी निस द्यौस ज्योंहीं,
चातक, घातक त्यों ही तू हू कान फौरिलै।"

(iii) उक्ति-वैचित्र्य–ब्रजभाषा की प्रवीणता में एकपक्षीय प्रेम को कवि ने अकेले ही निर्वाह का विषय बनाया है, विरहानुभूति की तीव्रता में प्रिय के लिये उपालम्भ का भाव त्याग और समर्पित भाव से सम्बद्ध है—

"अति सूधो सनेह को मारग है,
जहाँ नेकु सयानप बांक नहीं,
तहाँ सांचे चलैं तजि आपन पो,
झिझकै कपटी ते निसांक नहीं
घन आनन्द प्यारे सुजान सुनो,
यहाँ एकते दूसरो आँक नहीं,
तुम कौंन धौं पाटी पढ़े होलला
मन लेहु पै देहु छटाँक नहीं।"

(iv) लाक्षणिकता–प्रेमभाव सच्चाई पर आधारित है, कवि ने विरह वेदना में प्रेम की आन्तरिकता का परिचय दिया, जिसके कारण प्रकृति के प्रतीकों के प्रेम और कवि का प्रेम, प्रभु दर्शन बनकर कोयल, पपीहा, मछली, मोर आदि के रूप में लाक्षणिकता से परिपूर्ण है—

(1) कारी कूर कोकिला कहाँ को बैर काढ़ति री
(2) चातक, घातक ज्यों ही तू हू कान फोरि लै
(3) पैंडे पर पापी ये कलापी निस धौंस ज्यों ही

(4) हीन भये जलमीन अधीन कहा

(5) लाज के साज समाज बिसारे :

इस प्रकार घनानंद के काव्य में प्रेम की शुद्धता, अनन्यता, भावात्मकता, वेदना, अलौकिकता, अनुभूति की गहराई, विरहानुभूति का भाव प्रमुख है।

प्रश्न 11. निम्नांकित अवतरण की सप्रसंग व्याख्या कीजिए—

"हीन भये जल..जान ही जानै।

उत्तर—व्याख्या भाग में देखें।

अध्याय 18

जगन्नाथदास 'रत्नाकर'

कवि परिचय—हिन्दी साहित्य के प्रत्येक युग में तत्कालीन वातावरण का यथातथ्य चित्रण मिलता है, प्राचीन प्रतीकों के आधार पर उत्तम काव्य की रचना हुई है, हिन्दी के आधुनिक काल में राधा-कृष्ण के अमर प्रेम का व्यापक सौन्दर्य अनेक कवियों ने उद्‌घाटित किया किन्तु रत्नाकर के काव्य की अन्तर्धारा भाव व्यंजना की दृष्टि से श्रेष्ठ है, ब्रजभाषा में माधुर्यपूर्ण काव्य की रचना करने वाले रत्नाकर का जन्म 1866 में काशी में हुआ था, देहावसान 1932 ई. में हरिद्वार में हुआ था, इन्होंने धर्म, संस्कृति और साहित्य का गहरा ज्ञान प्राप्त कर लिया था, साथ ही योग, दर्शन, इतिहास, आयुर्वेद, ज्योतिष आदि का भी अच्छा ज्ञान प्राप्त करने के साथ संस्कृत, अपभ्रंश, मराठी, बंगला, उर्दू, फारसी आदि भाषाओं के प्रति गहरी रुचि थी।

रत्नाकारजी ने अपने जीवनकाल में अनेक रचनाएँ लिखी हैं। कलकाशी, हरिश्चन्द्र, श्रृंगार लहरी, रत्नाष्टक, वीराष्टक, गंगावतरण, उद्धवशतक आदि श्रेष्ठ मौलिक कृतियाँ हैं, बिहारी रत्नाकर, सुधासार, सुजान सागर, सूरसागर आदि ग्रंथों का सफल सम्पादन किया।

महान् कवि रत्नाकर को उद्धव-शतक की रचना से सर्वाधिक ख्याति मिली, इस ग्रन्थ में ब्रह्मसत्यम् जगन्मिथ्या, सर्वखल्विदं ब्रह्म का स्वरूप उद्धव के माध्यम से प्रस्तुत किया, राधा-कृष्ण के प्रेम द्वारा लोक व्यवहार के मौलिक सिद्धान्तों का परिचय दिया, प्रेम और भक्ति से श्रृंगार रस की पावन धारा प्रवाहित कर दी है। इस मुक्तक काव्य की रचना में षड् ऋतु वर्णन, प्रकृति चित्रण, लीलागान आदि का वर्णन श्रेष्ठ है।

इस प्रकार रत्नाकरजी का उद्धव-शतक लोक-व्यवहार, दर्शन, भक्ति, प्रेम और आस्था की दृष्टि से श्रेष्ठ काव्य है।

व्याख्या भाग

उद्धव-शतक

कृष्ण द्वारा ब्रज का स्मरण

(1)

"बिरह-बिथा की..हिचकीनि सौं।"

कठिन शब्दार्थ–बिरह-बिथा = विरह की व्यथा, अकथ = कही नहीं जा सकती, अथाह = अत्यधिक गहरी, प्रवीन = प्रवीण, कुशल, सुकबीनि सौं = श्रेष्ठ कवियों से, कहन हेत = कहने के लिये, ब्रज जुवतीनि सों = ब्रज की युवतियों से, गहबरि = घबराना, भभरि = डरकर, चुचाइ = टपकना, हिचकीनिसों = हिचकियों से।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत छंद रचना आधुनिक युग के कवि जगन्नाथ दास रत्नाकर द्वारा लिखित 'उद्धव-शतक' से अवतरित है, प्रेम से उत्पन्न विरह की व्यथा अकथनीय, अत्यधिक गहरी और महान होती है। प्रेम की कथा का वर्णन श्रेष्ठ कवि भी नहीं कर पाते हैं, कवि रत्नाकर कहते हैं कि विरह कथा का स्मरण उस समय हुआ जब उद्धव को ब्रजभूमि की गोपियों को समझाने के लिये भेजने लगे, उनका हृदय और गला प्रेम पीड़ा से भरकर घबरा गया, मिलन की स्मृति के भय से उन्हें रोमांच हो आया, उनकी आँखों की पुतलियों से चंचल प्रेम के आँसू टपकने या गिरने लगे, उन्होंने कुछ तो अपने वचनों से कहा और अनेकानेक बातें अपनी आँखों से कहीं, जो कुछ शेष रह गया वह हिचकियों से कह दिया।

विशेष–(1) विरह व्यथा का मार्मिक चित्रण वियोग श्रृंगार रस और अनुप्रास अलंकार द्वारा वर्णित है।

(2)

"नंद औ जसोमति..कौं आवती।"

कठिन शब्दार्थ–पगे = भरे हुए, लाड़भरे = प्रेम भरे, सुधाकर-प्रभा = चन्द्रमा की चाँदनी, मढ़ी = बनाई, मंजु = कोमल, मृगनैननि = हिरण के समान आँखें, गावती = गाना, रारनि = संघर्ष, विपिन-विहारन = वन-विहार करना, हौंस = उमंग, सुधि = स्मृति, दिवैया = देने वाले, रासिन = भण्डार, आवती = आना।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत छंद आधुनिक कवि रत्नाकर द्वारा लिखित उद्धव-शतक से अवतरित है, श्रीकृष्ण ब्रज का स्मरण करते हुए उद्धव से कहते हैं—बाबा नंद और माता यशोदा के प्रेम भरे पालन-पोषण और मुझे प्यार करने के लालच भरी उमंगों को पाने और देखने की लालसा बनी रहती है, कवि रत्नाकर कहते हैं—वहाँ चन्द्रमा की प्रभा से बनी सौन्दर्यशाली हिरन के समान आँखों वाली गोपियाँ मधुर-मधुर गुंजार करती थीं, उनका निरन्तर स्मरण होता है, यमुना की रेती, किनारों की आनंदपूर्ण लीलाएँ, वृन्दावन में विहार करने की उमंग मन को हर्षित करती है, हे उद्धव ! सुख का भण्डार प्रदान करने वाली गोपियों की स्मृति यहाँ नित्य-प्रति बुलाने के लिये आती है।

विशेष–(1) श्रीकृष्ण के मन की व्यथा का दृश्य प्रस्तुत है जिसमें अनुप्रास और लक्षण लक्षणा शब्द-शक्ति का प्रयोग है।

गोपियों का उद्धव के प्रति कथन

(3)

"कान्हदूत..बिचारी की।"

कठिन शब्दार्थ–कान्हदूत = कृष्ण के दूत, कैधों = अथवा, ब्रह्मदूत है = ब्रह्म के दूत बनकर, प्रन फेरन को = प्रण तोड़ने के लिये, मति = बुद्धि, प्रीति-रीति = प्रेम की परम्परा, जानत ना = जानते नहीं, ठानत अनीति = अन्यायपूर्ण हठ, भावति = अच्छी, बारिधिता बारिधि की = समुद्र की गहराई, बिलैहै = लीन होना, बिबस = बेबस।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत रचना रत्नाकर कृत उद्धव-शतक से अवतरित है, उद्धव का गोपियों के पास आगमन होता है, निराकार की भक्ति का संदेशा देते हैं, तब गोपियाँ कहती हैं—हे उद्धव ! आप श्रीकृष्ण के दूत या निराकार ब्रह्म के दूत बनकर गोपियों की साकार प्रभु प्रेम की पावन बुद्धि को बदलने के लिये आये हो, कवि रत्नाकर कहते हैं—आप तो प्रेम की परम्परा को जानते ही नहीं हैं, तब एक अज्ञानी के रूप में अन्याय के मार्ग पर चलने का हठ कर रहे हो, हम सभी गोपियाँ यह मानती हैं कि कृष्ण और ब्रह्म एक ही हैं किन्तु तुम्हारे अद्वैत की भावना हमको भली नहीं लगती है, आपके इस संदेश से प्रेमरूपी सागर में निराकार की एक बूँद उसी में लीन हो जावेगी, साकार प्रेम ही सर्वोपरि रहेगा ।

विशेष–(1) साकार प्रेम की महानता अनुप्रास अलंकार में भावात्मक शैली से सम्बद्ध है ।

(4)

''चिंतामनी..लखिबौ कहौ ।''

कठिन शब्दार्थ–मंजुल = कोमल, मनमुकुर = मन रूपी दर्पण, सुधारि = ठीक करके, राखिबौ कहौं = रखने के लिये कहना, सारन = शान्त, बयारि भखिबौ = योग साधना, जाहि = जिसको, निपट = पूर्ण रूप से, ध्याइबौ = ध्यान करना, बिस्व = संसार, लखिबौ = देखना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद रचना आधुनिक कवि रत्नाकर द्वारा लिखित उद्धव-शतक से अवतरित है, गोपियाँ निराकार भक्ति का खण्डन और साकार भक्ति का मण्डन करती हुई कहती हैं—हे उद्धव, चिन्तामणि रूपी श्रीकृष्ण प्रेम को छोड़कर काँच के मनरूपी दर्पण को संभालकर रखने के लिये कह रहे हो, यह सर्वथा अनुचित है, कवि रत्नाकर कहते हैं—वियोग की आग को शान्त करने के लिये योग साधना या प्रणायाम करने के लिये कह रहे हो, यह ठीक नहीं है । जो रूप-रस से हीन पूर्ण रूप से आकार रहित है उसका ध्यान करते हुए रस चखने के लिये कह रहे हो ? इतने बड़े और व्यापक संसार में भली प्रकार शोध करके देख लिया जाय तो भी युवतियों के लिये त्रिकुटी में ध्यान लगाकर आँखें बंद करके देखने की सलाह दे रहे हो, अर्थात् गोपियाँ किसी भी मूल्य पर निराकार भक्ति के लिये तत्पर नहीं हो सकतीं ।

विशेष–(1) वैदर्भी रीति, अनुप्रास अलंकार और विचारात्मक शैली की प्रधानता है ।

(5)

''आए हौ सिखावन..बसावौ ना ।''

कठिन शब्दार्थ–सिखावन = सिखाने को, दरस = दर्शन, दीन्यौ = देना, टूक-टूक = टुकड़े-टुकड़े, मनमुकुर = मन रूपी दर्पण, दरिबै = बढ़ाना, बैन = वचन, पाहन = पत्थर, हिय = हृदय ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद रचना आधुनिक युग के कवि रत्नाकर द्वारा लिखित उद्धव-शतक से अवतरित है, गोपियाँ उद्धव से कहती हैं—हे उद्धव ! मथुरा नगरी से कृष्ण मिलन की जो शिक्षा देने आये हो उसमें निराकार भक्ति से भरे वियोग के वचन मत कहो । कवि रत्नाकर कहते हैं—दयाकर के, निराकार से हमारे दुःख को न बढ़ावो, कृष्ण दर्शन

के बारे में बतावो, हमारा मनरूपी दर्पण टुकड़े-टुकड़े हो गया है, अत: निराकार भक्ति के कठोर वचन रूपी पत्थर मत मारो, क्योंकि एक श्रीकृष्ण ने तो हमें मन में स्थान देकर उजाड़ दिया है, ऐसे विरही मन में अनेक मनमोहन बसाने की भावना ही नहीं है।

विशेष–(1) 'कठोर बैन चाहन' में रूपक अलंकार का प्रयोग है।

(2) वियोग श्रृंगार रस में गोपियों की वेदना का भाव छिपा है।

(3) अनुप्रास, लक्षणा के साथ प्रेम का नाद सौन्दर्य श्रेष्ठ है।

(6)

"चुप रहौ ऊधौ...**ल्याए हौ।"**

कठिन शब्दार्थ–सूधौ = सीधा, पथ = रास्ता, गहौ = पकड़ो या जाओ, बिबिध = अनेक, वृथा = बेकार, भरमाए = भ्रम में, मृदु = कोमल, उर = हृदय, घाय = घाव, लौन = नमक, रावरी = आपकी, सुधाई = बुद्धि, कुटिलाई = दुष्टता।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत छंद योजना आधुनिक युग के कवि रत्नाकर द्वारा लिखित उद्धव-शतक से अवतरित है। गोपियाँ उद्धव के निराकार सम्बन्धी मत को सुनकर कहती हैं—हे उद्धव ! तुम अपने ज्ञान को लेकर चुप हो जाओ और इन्हीं पैरों से मथुरा का रास्ता पकड़ लो। कवि रत्नाकर कहने लगे—गोपियों का श्रीकृष्ण के प्रति प्रेम भाव अटूट है, इसको किसी भी प्रकार समाप्त नहीं किया जा सकता, हमारा सरल स्वभाव जानकर कृष्ण प्रेम की अनुपस्थिति से उत्पन्न विरह वेदना रूपी घाव पर निराकार भक्ति का नमक छिड़क रहे हो, इससे हमारी वेदना और अधिक बढ़ रही है, हे उद्धव ! आप जिस बुद्धि को मथुरा से लेकर चले हो उसमें दुष्टता कूट-कूट कर भरी है, साकार प्रभु रूपी मिटाई में निराकार की लवणता लेकर आये हो, जिसको एक भी गोपी लेने के लिये तैयार नहीं है।

विशेष–(1) श्रृंगार रस, अनुप्रास अलंकार, वैदर्भी रीति सार्थक है।

(2) निराकार का खण्डन और साकार का मण्डन है।

(7)

"नेम व्रत संजम...**वारि चुकीं।"**

कठिन शब्दार्थ–नेम = नियम, संजम = संयम, पींजरे = पिंजड़े, लाज = लज्जा, कुल = परिवार, कानि = मर्यादा, प्रतिबंधहिं = बंधन, निवारि = छोड़ना, लंगर = समूह, सुधि = स्मृति, बुधि = बुद्धि, टारि चुकी = अलग करना, जोग = योग, घूँटि = रोककर, बानक = उपाय, मन-मानिक = मनरूपी मोती, वारि चुकीं = न्यौछावर कर चुकीं।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत कविता रत्नाकर कृत उद्धव-शतक से अवतरित है, गोपियाँ निराकार का खण्डन और साकार का मण्डन करते हुए कहती हैं, हे उद्धव ! नियम, व्रत, संयम रूपी योग के पिंजरे में कौन पड़े ? हम तो कृष्ण प्रेम में परिवार की मर्यादा रूपी लज्जा के बंधन को छोड़ चुकी हैं, तुम यहाँ निराकार के गुणरूपी गौरव का समूह एकत्रित मत करो, हम तो स्मृति और बुद्धि का भार कृष्ण के प्रति प्रेम में ही लीन कर चुकी हैं, अब तुम्हीं बताओ योग रूपी समुद्र में साँस रोककर कौन डूबे अर्थात् कोई नहीं, हम तो कृष्ण के प्रति प्रेम भावना का निर्णय कर चुकी हैं, मोक्ष और मोती का मोल भी क्या रहा जब कान्हा पर मन रूपी मोती को न्यौछावर कर दिया।

विशेष–(1) वियोग श्रृंगार रस, अनुप्रास, रूपक का चित्रात्मक सौन्दर्य है।

(8)

"ल्याए लादि..समानी ना ।"

कठिन शब्दार्थ–ल्याए = लाए, लादि = लादकर, बादि ही = व्यर्थ ही, गरै = गले, सुजस = यशपूर्ण, गुबिन्द = गोविन्द, गुनाकर = बांधने पर भी, गुननि = गुण, अनंत = अन्तहीन, मग = मार्ग, तापै = उस पर, बटमार = रास्ते के लुटेरे, मुकति = मुक्ति, कूबर = कुब्जा, ऊबर = उठना या मुक्त होना ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद रचना आधुनिक हिन्दी साहित्य में कविवर रत्नाकर द्वारा लिखित उद्धव-शतक से अवतरित है । गोपियाँ निराकार का खण्डन कर साकार का मण्डन करती हुई कहती हैं—हे उद्धव ! तुम निराकार का वजन लादकर लाये हो जिसको हमारे गले बाँधना चाहते हो, हम सभी गोपियों ने इसकी यशपूर्ण कहानी को कभी नहीं सुना, कवि रत्नाकर कहते हैं—जो प्रेम के बंधन में बांधने पर भी नहीं बंध सका, तब तुम्हारे योग दर्शन में एकाग्र होने की कोई धारणा नहीं हैं, गोपियाँ उपहास रूप में कहती हैं—हम किसी मार्ग में बिकी हुई नहीं हैं, हमने कृष्ण से पावन प्रेम किया है और न ही हम रास्ते में लुटी हैं, न किसी प्रकार का लोभ हमारे मन में है । अब तो सभी प्रकार का सुख, मुक्ति कुब्जा के भाग्य में ही आ गई है, अब तो मुक्ति के सभी रूप मथुरा में ही समा गये हैं ।

विशेष–(1) कवि ने गोपियों की वेदना का मार्मिक चित्रण श्रृंगार रस में प्रस्तुत किया है ।

(2) लक्षणा शब्द-शक्ति, वैदर्भी रीति, श्लेष अलंकार का श्रेष्ठ प्रयोग है ।

(9)

"हम परतच्छ मै..कहिबौ करौ ।"

कठिन शब्दार्थ–परतच्छ = प्रत्यक्ष, प्रमान = प्रमाण, भौंर = भंवर, बहिबौ = बहना, धारैं = धारण या स्मरण, ससासिंग = खरगोश के सींग, गहिबौ करौ = पकड़ते रहो, न्याव = न्याय, अदेख = बिना देखे, लखि = देखकर ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत पद रचना कविवर रत्नाकर द्वारा लिखित उद्धव-शतक से अवतरित है । गोपियाँ, प्रेम की पूर्णता में वेदना का भाव लेकर कहती हैं कि कृष्णप्रेम प्रत्यक्ष है, प्रमाण और अनुमान की आवश्यकता नहीं है, तुम भ्रम के भँवर में फँसकर भले ही प्रवाहित होते रहो अर्थात् निराकार को मानते रहो, हम नहीं मान सकतीं, कवि रत्नाकर कहने लगे कि गोपियों ने तो श्रीकृष्ण का ध्यान धारण कर लिया है, तुम अपने निराकार को लेकर खरगोश के सींग उखाड़ने जैसा असम्भव कार्य करने की योजना बनाते हो जो कभी भी सम्भव नहीं है, हम कृष्ण को देखती हैं उसी के प्रति सीधा सा न्याय जानती हैं, हे उद्धव ! तुम देखकर भी अनदेखे बने रहो इसमें हमारा दोष नहीं है, हम सभी गोपियाँ ब्रजभूषण कृष्ण को प्रेमपात्र बनाने के उपरान्त किसी निराकार की उपासना नहीं करेंगी । आप चाहे करोड़ों बार कहो पर हम तो साकार प्रेम को सर्वोपरि मानती हैं ।

विशेष—(1) निराकार ब्रह्म उपासना का खण्डन और साकार प्रेम पद्धति का निरूपण है ।

(2) श्रृंगार रस और अनुप्रास अलंकार का प्रयोग है ।

(10)

"कर बिनु कैसे..काम आइहै ।"

कठिन शब्दार्थ—कर बिनु = हाथ के बिना, पद बिनु = पैर बिना, रिझाइ है = प्रसन्न करना, बदन बिनु = मुख के बिना, चाखि = चखना या स्वाद लेना, बेनु = बाँसुरी, दृग = आँखें, स्रवन = कान, विपति = समस्या, वराइहै = हटाएगा, रावरौ = आपका, अनूप = अलौकिक ।

सप्रसंग व्याख्या–प्रस्तुत छंद रचना कविवर रत्नाकर द्वारा लिखित उद्धव-शतक से ली गई है । गोपियाँ पूरी तरह से निराकार का खण्डन करती हुई कहती हैं—हे उद्धव, तुम्हारा निराकार परमात्मा बिना हाथों के हमारी गायों को कैसे दुहेगा, पैरों के बिना थिरक-थिरककर नाच कैसे दिखाएगा । मुख के बिना माखन कैसे चखेगा और बाँसुरी बजाकर गौधन कैसे गायेगा, आँख और कानों से देखे-सुने बिना ब्रजवासियों की समस्या का समाधान कैसे करेगा, हे उद्धव ! आपका यह अलख, अरूप ब्रह्म हमारे किसी भी काम में आने वाला नहीं है ।

विशेष—(1) वियोग श्रृंगार रस की मार्मिकता वर्णित है ।

(2) अनुप्रास, रूपक और लक्षण-लक्षणा शब्द-शक्ति का मनोहारी प्रयोग है ।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न—

प्रश्न 1. उद्धव-शतक किस प्रकार का काव्य है ?

उत्तर–(ख) दूत काव्य ।

प्रश्न 2. टूक-टूक है है मन-मुकुर हमारौ हाय,
चूकि हूँ कठोर बैन पाहन चलावौ ना ।''

इन पंक्तियों में कौनसा अलंकार है ?

उत्तर–(ग) रूपक ।

लघूत्तरात्मक प्रश्न–

प्रश्न 3. तुम मनमानौ ससासिंग गहिबौ करौ ।

गोपियों ने ब्रह्म के लिए ससासिंग का प्रयोग क्यों किया है ?

उत्तर–उद्धव अपने निराकार के सामने साकार प्रेम को स्वीकार नहीं कर रहे थे तब गोपियों ने परेशान होकर निराकार भक्ति को खरगोश के सींग कहा है, अर्थात् गोपियों के लिए निराकार भक्ति करना असम्भव है ।

प्रश्न 4. हम परतच्छ में प्रमान अनुमाने नाहिं । प्रत्यक्ष प्रमाण और अनुमान प्रमाण का एक-एक उदाहरण दीजिए ।

उत्तर–प्रत्यक्ष प्रमाण—

''मुक्ति मुक्ता कौ मोल माल ही कहा है जब,
मोहन लला पै मन मानिक ही वारि चुकीं ।''

अनुमान प्रमाण—

''कर बिनु कैसे गाय दूहि हैं हमारी वह,
पद बिनु कैसे नाचि थिरकि रिझाइहै ।
कहै रत्नाकर बदन बिनु कैसें चाखि
माखन बजाइ बेनु गोधन चराइहै ।''

प्रश्न 5. ''गहबरि आयौ गरौ भभरि अचानक त्यौं
प्रेम पर्‌यौ चपल चुनाइ पुतरीनि सौं।''

इन पंक्तियों में व्यक्त अनुभाव का नाम और लक्षण लिखिए।

उत्तर–गोपियों की प्रेम पद्धति साकार रस प्रमुख होने के कारण निराकार भक्ति का खण्डन करते हुए अश्रुप्रवाह अनुभाव का प्रयोग है।

प्रश्न 6. 'ठानत अनीति आनि नीति लै अनारी की।'

गोपियों के इस उपालम्भ का तात्पर्य स्पष्ट कीजिए।

उत्तर–उद्धव ने मथुरा से वृन्दावन में आकर गोपियों को निराकार भक्ति का संदेश देना आरम्भ कर दिया तब गोपियाँ श्रीकृष्ण प्रेम को ही सर्वोपरि मानती हुई उद्धव से उपालम्भ रूप में कहती हैं—आप तो निराकार का हठ करके अनीति कर रहे हैं। यहाँ एक भी गोपी अज्ञानी नहीं जो निर्गुण साधना करेगी।

प्रश्न 7. जैहै बनि बिगारि न बारिधिता बारिधि की,
मूँदता बिलैहै बूँद बिबस विचारी की।'

गोपियों ने कृष्ण और ब्रह्म को एक मानने के संबंध में उद्धव को उपर्युक्त कथन से क्या समझाया है ?

उत्तर–गोपियों ने कहा कि हे उद्धव ! तुम एक ओर कृष्ण के दूत और दूसरी ओर ब्रह्म के ज्ञाता बनकर यहाँ आये हो, हम कृष्ण और उद्धव को स्वीकार करती हैं किन्तु निर्गुण उपासना को स्वीकार नहीं कर सकतीं, अत: उद्धवजी, निर्गुण को छोड़कर, कृष्ण की बातें सुनाओ तो हितकर लगेंगी।

निबन्धात्मक प्रश्न–

प्रश्न 8. 'उद्धव-शतक' में गोपियों ने ब्रह्म को अपने लिए अग्राह्य बताते हुए उद्धव के समक्ष क्या-क्या तर्क प्रस्तुत किए ?

उत्तर–गोपियाँ श्रीकृष्ण की अनन्य उपासिका हैं, श्रीकृष्ण मथुरा चले गये तब गोपियों के जीवन का एक मात्र उद्देश्य यही रहा कि प्रत्येक स्वास में कृष्ण स्मरण के अलात्रा अन्य को स्वीकार नहीं करेंगी, कृष्ण के परम सखा, ब्रह्म के ज्ञाता उद्धव गोपियों को साकार प्रेम के समाने निराकार प्रेम का उपदेश करते हैं, गोपियों का मन इस विपरीत संदेश को सुनकर आहत होता है, तब गोपियों ने कहा—

''कान्ह दूत कैधों ब्रह्मदूत ह्वै पधारे आप,
धारे प्रन फेरन को मति ब्रजबारी की,
कहै रतनाकर पै प्रीति रीति जानत ना,
ठानत अनीति आनि नीति लै अनारी की।''

गोपियों ने ब ाया कि हमारे पास कृष्ण प्रेम रूपी चिन्तामणि है तब निराकार जैसे काँच को स्वीकार नहीं कर सकतीं—

''चिन्तामनि मंजुल पंवारि धूरि धारनि में
काँच मन मुकुर सुधारि रखिबौ कहौ,
कहै रतनाकर वियोग आगि सारन कौ
ऊधो हाय हमकौ बयारि भखिबौ कहौ।''

गोपियों के ह्रदय में प्रिय कृष्ण की अनेकानेक लीलाएँ हैं, उनका स्मरण करना ही शक्ति और प्रेम का परिचायक है, तब अत्यधिक पीड़ा बोध के साथ कहती हैं—

''एक मन मोहन तौ बसि कै उजार्‌यौ मोहि ।
हिय में अनेक मनमोहन बसावौ ना ।''

निराकार भक्ति के स्वरूप को स्वीकार करना गोपियों के पक्ष का विषय नहीं है, इसलिए कहती हैं—

''मुक्ति मुकता का मोल माल ही कहा जब,
मोहन लला पै मन मानिक ही वारि चुकीं ।''

गोपियों की वेदना का स्रोत कथन से परे है, उद्धव से सीधे-सीधे कह देती हैं—

''रावरौ अनूप कोऊ अलख अरूप ब्रह्म,
ऊधौ कहौं कौन धौं हमारे काम आइहै ।''

इस प्रकार गोपियों ने उद्धव के सामने साकार प्रेम के अनेकानेक तर्क प्रस्तुत करके कृष्ण प्रेम की सार्थकता प्रस्तुत की है ।

प्रश्न 9. उद्धव-शतक में व्यक्त गोपियों की विरह व्यथा पर प्रकाश डालिए ।

उत्तर–उद्धव-शतक में वियोग शृंगार का प्रवाह अबाध गति से चलता है, पहले तो कृष्ण, गोपियों और ग्वाल-बालों के लिए व्याकुल दिखाई देते हैं, उनका पारस्परिक प्रेम अलौकिक रूप धारण करता जाता है, मथुरा चले जाने के बाद परम सखा उद्धव से गोपियों के पास संदेशा भेजते हैं, उनका मन विरह वेदना से इतना व्याकुल हो जाता है कि वाणी से कुछ कहते नहीं बनता—

''विरह व्यथा की कथा अकथ अथाह महा
कहत बनै न जो प्रवीन सुकवीन सों ।
कहे रत्नाकर बुझावन लगे ज्यों कान्ह,
ऊधौ को कहन हेत ब्रज जुवतीनि सौं ।
गहवारि आयो गरौ भमरि अचानक त्यों,
प्रेम पर्‌यो चल चुचाइ चुतरीनि सौं ।
नेकु कही बैननि, अनेक कहीं नैननि सौं,
रही सही सोउ कहि दीनी हिचकीनि सौं ।''

गोपियों की विरह वेदना में उद्धव के आगमन पर वृद्धि हो जाती है, वे तो कृष्ण प्रेम के कारण जीवन की आन्तरिक अनुभूति में किसी अन्य का स्मरण नहीं कर सकतीं, कृष्ण के साथ समस्त लीलाएँ अनेकानेक रूपों में विद्यमान हैं, निराकार का खण्डन और साकार का मण्डन करती हुई वेदना भाव प्रस्तुत करती हैं—

''कान्ह दूत कैधों ब्रह्म दूत ह्वै पधारे आप
धारे प्रन फेरन को मति ब्रजवासी की ।
× × × ×
जैहैं बनि बिगरि न वारिधिता बारिधि की,
बूंदता बिलै हैं बूंद बिबस बिचारी की ।''

प्रिय प्रेम के कारण गोपियाँ उन्हीं का स्मरण करती हैं, मन में उनके प्रति ही अभिलाषा रहती है, उद्धव के वचन सुनकर हृदय में पीड़ा का भाव बढ़ गया है, उद्धवजी मथुरा से जो संदेशा लेकर आये हैं उसके प्रति गोपियाँ सरलतापूर्वक यही कहती हैं—

''टूक-टूक ह्वै है मन मुकुर हमारो हाय,
चूकि हूँ कठोर बैन पाहन चलावौ ना''

उद्धव की योग की अर्थहीन बातों को सुनकर गोपियों का हृदय वेदना के सागर में डूब जाता है, उस समय प्रिय स्मरण में एकाकार होकर यही कह पाती हैं—

''जोश रतनाकर में सांस घूँटि बूढ़े कौन
ऊधौ हम सूधो सो यह बानक बिचारि चुकीं,
मुक्ति मुकता कौ मोल ही कहा है जब
मोहनलला पै मन-मानिक ही वारि चुकीं।''

प्रस्तुत विवेचन से स्पष्ट है कि गोपियाँ उद्धव की बातों पर मार्मिकता के साथ उपालम्भ से परिपूर्ण शब्दों की चतुराई प्रस्तुत करती हैं कि उद्धव का ब्रह्म ज्ञान समाप्त हो जाता है, गोपियों का प्रेम वर्णन चित्रात्मक रूप में उद्धव के लिए सहन करना भारी हो गया है।

प्रश्न 10. उद्धव-शतक के काव्य सौन्दर्य को निम्नांकित के आधार पर स्पष्ट कीजिए—

(i) भाव-विविधता (ii) वचन-वक्रता
(iii) काव्य-गुण (iv) भाषा (v) छंद-योजना।

उत्तर–(i) भाव-विविधता–उद्धव-शतक का विषय श्रृंगारपरक है, श्रीकृष्ण का मथुरा जाना, ज्ञान गुरु उद्धव को वृन्दावन भेजना, गोपियों द्वारा निराकार का खण्डन और साकार का मण्डन, योग साधना में नियम, व्रत, संयम की उपेक्षा, प्रेमपूर्ण चित्रण, अनुराग अतलता, समाज, धर्म, संस्कृति का समन्वय, मुख्य विषय हैं, गोपियों ने योग साधना का उपहास करते हुए कृष्ण प्रेम का आकर्षण स्वीकारा है—

''नेम व्रत संजम के पींजरे परे को जब,
लाज कुल कानि प्रतिबंध हि निवारि चुकीं,
कौन गुन गौरव कौ लंगर लगावौ जब
सुधि बुधि ही कौ भार टेक करि टारि चुकीं।''

इसी प्रकार—

''रावरी सुधाई में भरी है कुटिलाई कूटि,
बात की मिठाई में लुनाई लाइ ल्याए हौ।''

(ii) वचन-वक्रता–गोपियों का मन निराकार को स्वीकार नहीं कर सका क्योंकि यमुनातट, कुंजों की छाया, कदम्ब की डाल, बाँसुरी वादन, माखन लीला, रासलीला आदि अनेक प्रेम प्रसंग उनके जीव का आधार हैं। उद्धव के ब्रह्म ज्ञान का खण्डन करने में उनकी वचन वक्रता देखी जा सकती है—

''मान्यो हम कान्ह ब्रह्म एक ही कह्यो जो तुम,
तो हू हमें भावतिं ना भावना अन्यारी की।
जैहै बनि बिगरि न बारिधिता बारिधि की,
बूंदता बिलैहैं बूंद बिबस बिचारी की।''

(iii) काव्य-गुण–उद्धव-शतक के पदों में माधुर्य और प्रसाद गुण का प्रयोग है, गोपियाँ विरह की पीड़ा में मधुरतापूर्वक ज्ञान का खण्डन करती हैं, साकार प्रेम का अनुराग सर्वोपरि है, वे सहज भाव से कहती हैं—

"एक मन मोहन तो बसिकै उजार्‌यो मोहि,
हिय में अनेक मनमोहन बसावौ ना।"

योग साधना का उपहास करने में माधुर्य और प्रसाद गुण का समन्वय देखा जा सकता है—

"रूप रस हीन जाहि निपट निरूप चुके,
ताकौ रूप ध्याइबौ औ रस चखिबौ कहौ,
एते बड़े विस्व माहिं हेरै हू न पैयै जाहि,
ताहि त्रिकुटी में नैन मूँदि लखिबौ कहौ।"

(iv) भाषा–रत्नाकर ने भक्ति और रीतिकालीन कवियों की संगीतात्मकता और नाद सौन्दर्य को ज्यों का त्यों अपनाकर सुकुमारता का समावेश किया है, गोपियों की वेदनानुभूति में संगीत, चित्र, लाक्षणिकता, वाक्य विन्यास की कलात्मकता है, इसका प्रयोग प्रत्येक छंद में मिलता है, योग साधना का खण्डन करने में—

"कर बिनु कैसे गाय दूहिहै हमारी वह,
पद बिनु कैसे नाचि थिरकिं रिझाइहै।
कहै रतनाकर बदन बिनु कैसे चाखि।
माखन बजाइ बेनु गोधन चराइहै।"

(v) छंद-योजना–कवि रत्नाकर ने उद्धव-शतक में रीतिकालीन कवियों की विशेषता को लेकर कवित्त छंद का मनहरण रूप धनाक्षरी विभेद के साथ अपनाया है, इसमें जितने भी कवित्त हैं वे सम्पूर्ण रूप में शुद्ध हैं, शब्दों की लम्बी परम्परा अपनायी गई है, श्रृंगार रस की योजना में कवित्त के प्रयोग बेहद मार्मिक हो गये हैं, जैसे—

"भेजे मन मखन के ऊधव के आवन की,
सुधि ब्रज गावंनि में पावन जबै लगीं
कहै रतनाकर गुवालिन की झौरि-झौरि
छौरि छौरि नंद पौरि आवन तबै लगीं
उझकि-उझकि पद कंजनि के पंजनि पै
पेखि-पेखि पाती छाती छोहनि छबै लगीं,
हमको लिख्यो है कहा हमको लिख्यो है कहा
हमको लिख्यो है कहा कहन सबै लगीं।"

अतः रत्नाकर का काव्य, काव्यकाला की दृष्टि से श्रेष्ठ है।